CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्ञानलोक

नई पीढ़ी का ज्ञानकोश

३

विचित्र जीव-जन्तु

: जन्तु-विज्ञान : जानवरों की कहानी :

: लेखक :
कृष्ण वल्लभ द्विवेदी

4642
State Museum Library Lucknow

प्रकाशन-गृह : पानदरीबा, लखनऊ
ज्ञानवर्द्धक साहित्य के प्रकाशक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रकाशकीय वक्तव्य

नए भारत के उदय के साथ हमारे ऊपर अनेक नवीन उत्तर-दायित्वों का भार आ गया है ! इनमें से एक है—देश के भावी नागरिकों का स्थान ग्रहण करनेवाली नई पीढ़ी की उचित शिक्षा-दीक्षा का !

उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्कूलों में पढ़ाई जानेवाली पाठ्य-पुस्तकों के साथ-साथ ज्ञान-विज्ञान की सामान्य जानकारी करानेवाली अन्य सहायक पुस्तक-पुस्तिकाओं की कितनी अधिक आवश्यकता है, यह बताने की जरूरत नहीं है ।

आज यह निर्विवाद स्वीकार किया जा रहा है कि केवल भाषा, गणित या इतिहास-भूगोल की टकसाली जानकारी कराकर ही शिक्षा की लक्ष्य-पूर्ति नहीं की जा सकती ।

आज का युग 'विज्ञान-युग' है ! 'विज्ञान' ही इस युग का मेरुदण्ड है । आज आदमी रेडियो-टेलिविजन, जेट-वायुयान और रॉकेट-भूउपग्रह आदि चमत्कारों के द्वारा तो पृथ्वी को मानो एक तिलिस्म बना ही रहा है, साथ ही परमाणु-शक्ति की कुंजी पाकर, आज वह अन्य लोकों की सैर करने के लिए अंतरिक्ष में छलाँग मारने को भी तैयार खड़ा है !

अतः आज की शिक्षा की पुकार है——नई पीढ़ी को ज्ञान-विज्ञान से सुसज्जित कर वैज्ञानिक दृष्टि से अभिभूत कर देना !

यही है 'ज्ञानलोक' के आविर्भाव की पृष्ठभूमि और यही इस प्रकाशन का बीड़ा उठाने के लिए सन्नद्ध करनेवाली मुख्य प्रेरणा है !

हिन्दी के प्रकाशन-क्षेत्र में ज्ञानवर्द्धक साहित्य का नवीन कीर्तिमान स्थापित करनेवाली इस ग्रंथमाला की विशेषता यह है कि इसका प्रत्येक भाग अपने विषय की एक स्वतंत्र और परिपूर्ण पुस्तक है । ये पुस्तकें अपने-अपने विषयों के शुष्क टकसाली संकलन जैसी नहीं, वरन् पाठकों की मानसिक पृष्ठभूमि के अनुरूप विशेष रूप से लिखी गई ज्ञान-विज्ञान के विविध अंगों की रोचक कहानियाँ हैं !

संशोधित नवीन संस्करण

१९६९ ई०

: सर्वाधिकार स्वरक्षित :

मूल्य

प्रति भाग दस रुपए

मुद्रक :: नव ज्योति प्रेस, लखनऊ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्ञा न लो क

क्या और क्यों ?

उगती हुई पीढ़ी के पाठको ! ० ० ०

'ज्ञानलोक' के नाम से तुम्हें भेंट की जा रही यह सचित्र पुस्तकमाला आसमान, धरती, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु और मनुष्य की अचरज से भरी हुई उस दुनिया का एक मनोरंजक चित्र-पट है, जिसके रहस्यभरे परदे के उस ओर ताकने-झाँकने को शायद तुम्हारा जी हर घड़ी ललका करता होगा। भला, तुममें से कौन होगा, जो उस दुनिया की सैर करना पसन्द न करेगा ? किसका मन उसकी रंग-बिरंगी झाँकियाँ देखने को एकबारगी ही न उमग पड़ेगा ? शायद तुम्हें खेल-तमाशा देखना सबसे ज्यादा पसंद है ! भला, इससे अधिक रोचक और बढ़िया खेल-तमाशा दूसरा क्या होगा, जिसे कि प्रकृति ने हमारे चारों ओर रच रक्खा है ?

तो फिर आओ, इस चित्रपट के द्वारा प्रकृति की उस अनूठी दुनिया की ओर तुम्हें ले चलें ! और सबसे पहले तुम्हें दिखाएँ उस अद्भुत आकाश के कौतुकों की एक झलक, जोकि अपने अनंत पसार में अनगिनत लट्टुओं की तरह सूरज, चाँद, पृथ्वी, ग्रह, नक्षत्र, नीहारिकाओं आदि को लगातार नचाता हुआ न जाने कब से कौन-सा खेल किसके लिए रचाए हुए है !

तब दिखाएँ उस हरी-भरी प्यारभरी धरती माता के अनोखे रूप की भी कुछ झाँकियाँ, जिसकी कि गोद में पलकर हम सब अपने जीवन का खेल खेलते, हँसते-रोते, लड़ते-झगड़ते और भाँति-भाँति के खेल-खिलौनों की रचना करते हुए इस सूने आसमान में सूर्य के आसपास लगातार चक्कर लगा रहे हैं !

और इसी तरह बारी-बारी से देखें पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं और मनुष्य की उस चहलपहल से भरी अनोखी दुनिया को भी, जिसकी कि बदौलत यह धरती इतनी रंगीन और सजीव है और मनुष्य होने के नाते जिससे हमारा इतना ज्यादा लगाव है !

यह सब तुम्हारे लिए बड़ा आवश्यक कर्त्तव्य है—केवल इसीलिए नहीं कि इससे तुम्हारा जी बहले, बल्कि इसलिए भी कि तुम्हारे ज्ञान का भंडार भरता चला जाय और सच्चे अर्थ में तुम इस 'धरती के लाल' बन सको !

यह है तुम्हारे लिए अँधेरे से उजाले की ओर बढ़ने का पहला पाठ—इस दुनिया के बाहरी रूप की झाँकी पाकर अंत में उसके भीतरी रहस्य की खोज करने और उसी प्रयत्न में अपने आपको भी पहचानने की पहली तैयारी ! ० ० ०

कृष्णवल्लभ द्विवेदी

विषय-सूची

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रकृति की अनूठी जंतुशाला :

भाँति-भाँति के थलचरों का चित्र-विचित्र मेला—पक्षियों की रंग-बिरंगी प्रदर्शनी – जलमंडल के जन्तुओं की भी विचित्रता का पारावार नहीं जल, थल और आसमान के अंचल में स्थित प्रकृति की महान् जन्तुशाला – प्राणि-जगत् की सीढ़ीनुमा वर्ण-व्यवस्था—जीवधारियों का वंश-विकास-वृक्ष – सबसे निचले स्तर के एककोशीय आदि जीव—द्वितीय और तृतीय श्रेणी के बहुकोशीय सरल जीव—कृमि, कंटकचर्मी, घोंघावंशी तथा जोड़दार पैरवाले प्राणियों के विविध वर्ग—उपपृष्ठवंशी समूह के दिलचस्प प्राणी—पृष्ठवंशी समुदाय के उन्नत जीव ।

(पृ० ७-१४)

बीते युगों के अद्‌भुत प्राणी :

करोड़ों वर्ष पूर्व के महासागरों का स्वामी : : 'प्लिसियोसॉरस' नामक जलदैत्य—वह जलचरों की तरह साँस लेता—उसी युग का अन्य विकराल जलदानव : : 'इक्थियोसॉरस'—दैत्याकार स्थलचर एवं जलस्थलचर उरंगम—'ब्राण्टोसॉरस', 'डिप्लोडोकस' और 'जाएजेग्टोसॉरस'—'स्टैगोसॉरस' नामक अद्‌भुत कवचधारी—जिरह-बख्तरवाले जीवों के अन्य नमूने : : एंकिलोसॉरस और ट्राइसिरेटॉप्स—बत्तखों की-सी चोंचवाले अनोखे उरंगम—इगुआनोडॉन, ब्रैकियोसॉरस और स्ट्रुथियोमिमस आदि अन्य अनोखे दानव—दानव-युग का सबसे विकराल और क्रूर प्राणी : : टाइरेनोसॉरस—नभचर दानव :: 'टेरानोडॉन', 'टेराडैक्टाइल' और 'आर्कियोर्निस'—उइंटाथेरियम, मेगाथेरियम, ग्लिप्टोडॉन, ऊनी गैंडा, कटारदन्ती व्याघ्र, मैमथ आदि स्तनपोषी ।

(पृ० १५-२४)

मनुष्य के निकट संबंधी :

वानर मनुष्य के नातेदार ही हैं, पुरखे नहीं—'ऐ-ऐ', 'टार्सियर', 'लीमूर आदि अर्द्ध-वानर-समूह के प्राणी—नई दुनिया के वानर—'मार्मोसेट' और 'टैमेरिन'—'रात्रिचर', 'साकी', 'गिलहरी-वानर', 'यूकारी' आदि—हक्कू और मकड़ी-वानर—पुरानी दुनिया के वानर—बबून-वर्ग : : पीले बबून, मैंड्रिल आदि—मैकेक-वर्ग : : 'बारबेरी एप', भारतीय बन्दर आदि—'गुरेजा' और 'लंगूर—बनमानुस : : गिब्बन, सायमाङ्ग, ओरेङ्ग-उटाङ्ग, गोरिल्ला और चिम्पेन्जी ।

(पृ० २५-३६)

हिंसक पशु :

जंगल का राजा : : सिंह—बिड़ाल-परिवार का सबसे भयावना सदस्य : : बाघ या शेर—तेंदुआ : : सबसे फुर्तीला और चालाक हिंसक प्राणी—हिमप्रदेश के गुलहे : : 'साह' और 'लमचित्ता'—नई दुनिया के बिड़ालवंशी : : 'जागुआर', 'प्यूमा' और 'ओसीलॉट—बिड़ाल-परिवार के अन्य सदस्य : : बनबिलार, लिंक्स और स्याहगोश—खीखर (कटास), ताड़-बिलार, मुश्क-बिल्ली, नेवला आदि—कुक्कुर-वंश का सबसे खतरनाक प्राणी : : भेड़िया—सियार, लोमड़ी और जंगली कुत्ता-सबसे भौंडा हिंसक पशु : : लकड़बग्घा—जंतुजगत् का भयावना सर्वभक्षी : : भालू या रीछ—ध्रुव-प्रदेश के सफेद भालू—सील, वालरस, समुद्री सिंह, गज-सील आदि हिंसक जलजीव ।

(पृ० ३७-५०)

भीमकाय जानवर :

सबसे बड़ा वर्तमान जीव : : 'तिमि' या 'व्हेल'—सबसे बड़ी तिमि : : 'रोरक्वाल'—दंतक तिमि-वर्ग : : 'स्पर्म-व्हेल' और 'किलर-व्हेल'—थलचरों का सरदार : : हाथी—हाथी के दाँत और सूँड़ : : क्या और क्यों—हाथी बड़ा उपयोगी पशु है—अद्‌भुत कवचधारी पशु : : गैंडा—गैंडे का शृंग : : क्या और क्यों—ऊँचाई में सभी वर्तमान पशुओं को मात करनेवाला प्राणी 'जिराफ'—४० क्विंटल वजनी भीमकाय पशु 'हिप्पोपोटेमस'—रेगिस्तान का जहाज : : ऊँट ।

(पृ० ५१-६०)

कुछ अनोखे थलचर :

विचित्र कवचधारी 'आर्माडिल्लो'—'पैंगोलिन' या साल—ऐटईटर या चींटीखोर—स्लॉथ, जो वृक्षों पर उल्टा लटके रहता है – विचित्र शूलधारी 'साही'—जंतु-जगत् का अनोखा इंजीनियर : : 'बीवर'—उड़नेवाली गिलहरियाँ, हिरनामूसा आदि—संसार का सबसे अनोखा आत्मघाती : : 'लैमिङ्ग'—भाँति-भाँति के चूहे—अण्डा देनेवाले विचित्र स्तनपोषी : : 'बत्तख-चोंचा' और 'शूलधारी चींटीखोर'— बच्चों को पेट

की जेबनुमा थैली में लिए रहनेवाले प्राणी : : 'कोआला', 'ओप्पोसुम' और 'कँगारू'--मृग-समुदाय : : भाँति-भाँति के हिरन, बारहसिंघे, नीलगाय आदि-- अनोखे शफवर्गीय : : 'जेबरा', 'लामा' और 'तापीर'— वाराह-वर्ग के पशु : : वनैला और पालतू सूअर-- गौ-वर्ग के अनोखे पशु : : गौर, गयाल, अरना भैंसा, याक आदि—जंगली भेड़ें और बकरे ।

(पृ० ६१-७४)

पक्षियों की दुनिया :

वैज्ञानिकों द्वारा निर्धारित पक्षियों की विविध बिरादरियाँ—संसार का सबसे बड़ा पक्षी 'शुतुर्मुर्ग', जो उड़ने से लाचार है—उड़ने से लाचार अन्य पक्षिराज : : एमू, कैसोवारी और न्यूज़ीलैंड का विचित्र पक्षी 'किवी'—दक्षिणी ध्रुवक्षेत्र का अद्भुत जलपक्षी : : 'पैंगुइन'--कुछ भीमकाय पक्षी, जो अब नहीं मिलते—समुद्री पक्षी : : अल्बेट्रास, गल और कोर्मोरैण्ट—पेलिकन और तूफानी पेट्रेल—बानवर—तालाबों, नदी-तटों और दलदली क्षेत्रों के पक्षी : : 'हंस' और 'हंसावर'--लगलग, बगुले, सारस आदि—कौड़िल्ला, खंजन, टिटिहरी आदि—शिकारी पक्षी : : उकाब, बाज, शिकरा, उल्लू आदि—बस्तियों, बाग-बगीचों और जंगलों में रहनेवाली प्रसिद्ध चिड़ियाँ—मयूर-वर्ग और तीतर-बटेर वर्ग के भड़कीले पक्षी—शुक-वर्ग के पक्षी - कठफोड़ और धनेश—पक्षी-जगत् के अन्य सुपरिचित नमूने—'हमिंग बर्ड' और 'लायर बर्ड'।

(पृ० ७५-९४)

उरंगम (रेंगनेवाले प्राणी) :

उरंगम-वर्ग के प्राणियों की विशेषताएँ—सर्प-समूह की विभिन्न बिरादरियाँ—सर्प की शरीर-रचना—कोलुब्रिडीसमूह के भयंकर विषधर साँप—'कोबरा' या नागराज—अन्य विषैले सर्प : : करैत, कॉपरहैड, मांबा, वाइपर आदि--विशालकाय अजगर : : 'बोआ कन्स्ट्रीक्टर'—उड़नेवाले सर्प—छिपकिलियाँ और गिरगिट—भाँति-भाँति की गोह - विषैली छिपकिलियाँ - भयंकर जलस्थलचर : : 'मगर या 'घड़ियाल'—भाँति-भाँति के कछुए - बृहदाकार दीर्घजीवी कछुए ।

(पृ० ९५-१०६)

विचित्र जलजीव :

चित्र-विचित्र आकृतियों की सजीव मणियाँ—पेड़-पौधों एवं फल-फूल जैसे अद्भुत जीव--भाँति-भाँति के स्पंज—खीरे-ककड़ी, रसभरी-करौंदे जैसे जीव--'एनीमोन' : : पुष्परूपी अनोखे जानवर--पौधों, लताओं और वृक्षों जैसे बहुरूपिए प्राणी—लस-मछली, सितारा-मछली आदि--मत्स्य-वर्ग के जलजीव--परीलोक जैसा अद्भुत सौन्दर्य—शार्क-वर्ग की खूँख्वार मछलियाँ—रे- वर्ग की दानवीय मछलियाँ—रोशनी फेंकनेवाली और उड़नेवाली मछलियाँ--शंख, सीपी, कौड़ी आदि के आवरण में रहनेवाले घोंघावंशी—मोती उपजानेवाले कस्तूरे—'ऑक्टोपस' और 'स्क्विड' नामक भयावने जलजंतु ।

(पृ० १०७-१२०)

शुद्धि-पत्र

छापते समय पर रह जानेवाली निम्न अशुद्धियों को कृपया सूचित पृष्ठों पर शुद्ध कर लें :

पृष्ठ	स्थल	अशुद्धि	शुद्ध रूप	पृष्ठ	स्थल	अशुद्धि	शुद्ध रूप
११	पंक्ति २४	जोड़दार परवाले	जोड़दार पैरवाले	६४	पंक्ति २६	विचनेवाला	विचरनेवाला
१८	पंक्ति २३	पाँच क्विटल	बीस क्विटल	६८	पंक्ति १४	स्ननपोषियों	स्तनपोषियों
१८	पंक्ति २३	१० किलोग्राम	४० किलोग्राम	८५	पंक्ति २७	हों	हो
२४	पंक्ति ३, १३	हड्यिाँ	हड्डियाँ	९०	पंक्ति २२	जैसे	जैसी
३१	पंक्ति ६	इममें	इनमें	९०	पंक्ति २३	लखा-जोखा	लेखा-जोखा
३१	पंक्ति २२	इनमें से से	इनमें से	९४	पंक्ति ७-८	रंगीन आवरण-पृष्ठ	पृष्ठ ९१
५३	टिप्पणी	८ मीटर	२८ मीटर	९४	पंक्ति ११	'चडूल'	'चंडूल'
५४	पंक्ति ३	सनिकों	सैनिकों	९५	पंक्ति ८	उरगमों	उरंगमों
५५	पंक्ति २१	रंध्रया	रंध्र या	११६	पंक्ति ११	जसे	जैसे
६३	पंक्ति ३६	औधा	औंधा	११७	टिप्पणी	'र मछली'	'रे मछली'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

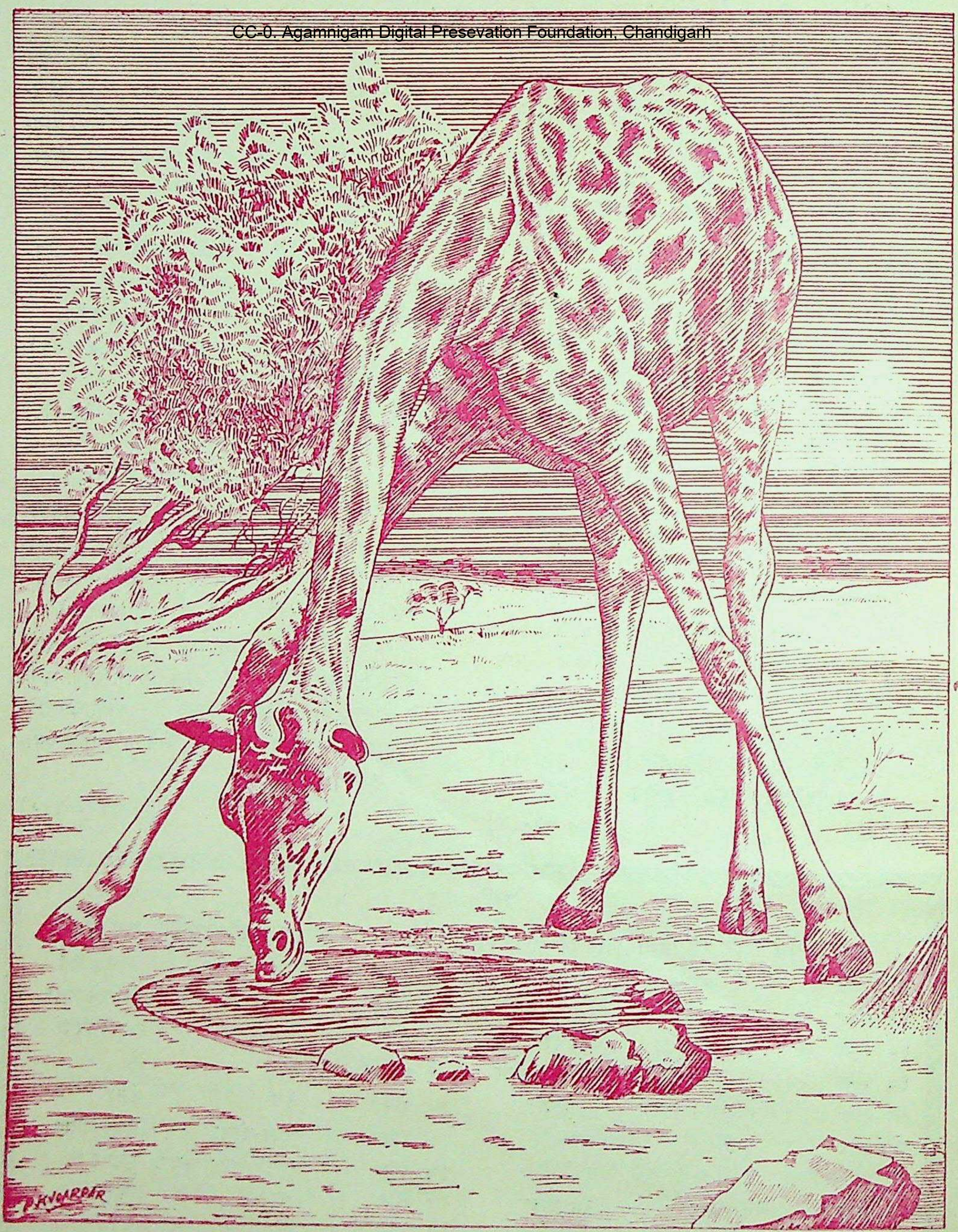

ऊँचाई या कद के लिहाज से वर्तमान जीवधारियों का मुखिया——जिराफ

पैर से सिर तक लगभग साढ़े छः मीटर ऊँचे इस लँबटंगू पशु को जमीन पर घास चरते समय या पानी पीते समय इस तरह टाँगें फैलाना पड़ता है। [विशेष विवरण पृष्ठ ५९- ६० पर पढ़िए।]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

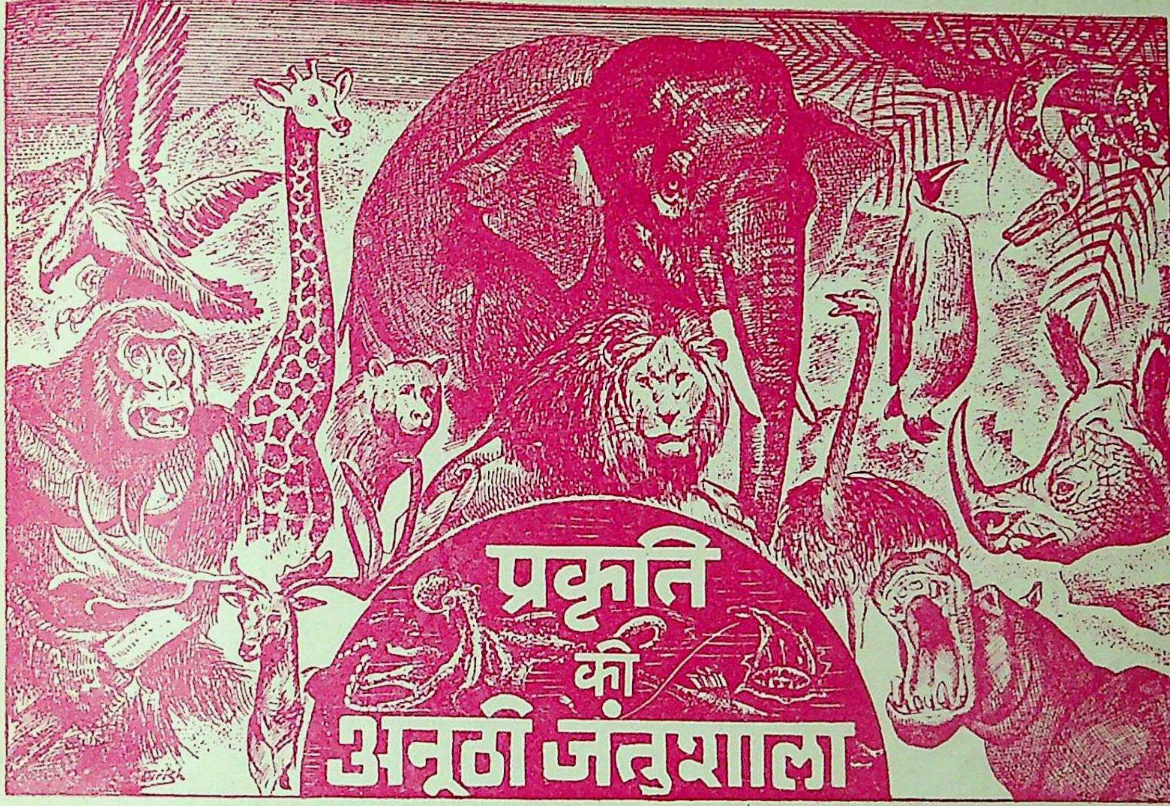

घूमते-फिरते हुए, आज हम अपने नगर की सुप्रसिद्ध जंतुशाला की ओर जा निकले। इस जगह को लोगों ने एक अनूठा नाम दे रक्खा है—वे इसे 'जिन्दा अजायबघर' कहते हैं! कैसा मार्के का नाम है यह, इस जगह के लिए! सचमुच ही कुदरत की जिन्दा करामातों की एक नुमाइश ही तो है यह! दूर-दूर तक की खाक छानकर तरह-तरह के जानवरों के नमूने यहाँ जुटाए गए हैं। उन्हें इस तरह खुले घिरौंदों या बन्द पिंजड़ों में रक्खा गया है कि नन्हें-नन्हें बच्चे तक बेखटके नजदीक से उन्हें देख-भाल सकें। भला, इससे बढ़कर जिन्दा तमाशा दूसरा क्या हो सकता है?

भाँति-भाँति के थलचरों का चित्र-विचित्र मेला

ज्यों-ज्यों एक से दूसरे हाते या पिंजड़े की ओर बढ़ते हुए, हमने इस अनूठी प्रदर्शनी का आनन्द लेना शुरू किया, त्यों-त्यों हमारे अचरज का ताँता भी मानो साथ-साथ खिंचता हुआ लगातार लम्बा होता चला गया। भला, कहाँ तक गिनाएँ और किस-किस का बखान करें? यहाँ तो चित्र-विचित्र जीवधारियों का एक पूरा मेला ही लगा है! लो, यह रहा 'कँगारू', जो अपने बच्चे को पेट पर बनी हुई एक अनोखी जेबनुमा थैली में आराम से बिठाए हुए है! और यही है 'लामा', जिसे देखकर एक साथ ही ऊँट, जिराफ, नीलगाय तथा हिरन की याद आने लगती है! यही तो गिरनार का असली 'बब्बर शेर' है, जो सचमुच ही 'जंगल का राजा' जान पड़ता है! और यही है 'हिमालय का भालू', जो मुँह फैलाकर मूँगफली खाने की करतूत से लेकर, जलती हुई सिगरेट का कश खींचने तथा नाक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से धुआँ निकालने तक का करतब दिखाने से नहीं चूकता ! फिर, उधर यदि बाघ, तेंदुए, भेड़िए, लकड़बग्घे आदि खूँख्वार मांसाहारियों की मंडली जुटी है, तो इधर हाथी, गैंडा, बारहसिंघा, साँभर, नीलगाय, जेबरा आदि प्रसिद्ध घासपातभोजियों का भी विशाल समाज विद्यमान है ! एक ओर तरह-तरह की कलाबाजियाँ दिखानेवाले असम के 'काले गिबन' की 'हु-उक्' 'हु-उक्' आवाज कान चीरे डाल रही है, तो दूसरी ओर वानर-जाति के अन्य एक विचित्र प्रतिनिधि अरब के 'बबून' की कुत्ते जैसी शक्ल और सिंह की-सी अयाल भी हमारा ध्यान खींचे बिना नहीं रहती ! फिर, कई जानवर तो यहाँ ऐसे हैं, जिनका शायद तुमने नाम भी नहीं सुना होगा । उदाहरण के लिए, खपरैल की भाँति एक-दूसरे पर छाए हुए कड़े सिन्नों के कवच से अपने शरीर को ढाँपे उस विचित्र चींटीखोर 'पैंगोलिन' (या साल) पर ही गौर करो, या तीक्ष्ण शूलों की पोशाक पहने हुए 'पारक्यूपाइन' (या साही) नामक उस अद्‌भुत छद्मवेशी को ही देखो ! क्या तुम्हारी कल्पना में कभी यह बात आई होगी कि जीव-जगत् में ऐसे भी प्राणी मौजूद हैं ?

पक्षियों की रंग-बिरंगी प्रदर्शनी

यह तो हुई केवल थलचरों की दुनिया के कुछ नमूनों की बानगी ! अब जीव-जगत् के उन अनूठे पंखधारी सदस्यों के रंग-बिरंगे समाज पर भी एक निगाह डाल लेना अनुचित न होगा, जिन्होंने अपनी चित्र-विचित्र पोशाक, तरह-तरह की बोली तथा रहन-सहन की निराली ढब से इस धरती को मानो एक नाट्यशाला का रूप दे दिया है ! इन दिलचस्प प्राणियों में सबसे पहले हमारी आँखें जा अटकती हैं 'शुतुर्मुर्ग', 'एमू' और 'किवी' नामक उन विशालकाय पखेरुओं पर, जो कि वास्तव में पक्षी-जगत् के सरदार कहलाने के अधिकारी होकर भी उड़ने से एकदम लाचार हैं ! तब लाल-पीले, हरे-नीले, सफेद या भूरे रंगों की अद्‌भुत छटा अपने परों में निखराए हुए जावा-सुमात्रा के जंगलों के 'काकातुआ' नामक उन बहुत बड़े तोतों पर भी निगाह गए बिना नहीं रहती, जो कि अपनी वेशभूषा, भावभंगी तथा तरह-तरह की करतूतों से पक्षी-संसार के विदूषक से जान पड़ते हैं ! इसके बाद तो क्या तीतर, कबूतर और मोर तथा क्या तोते, लाल मुनिया, बुलबुल और शकरखोर; क्या बत्तख, मुर्गाबी और हंसावर तथा क्या बगुले, सारस और राजहंस आदि विविध वेशभूषा के कितने ही छोटे-बड़े पक्षी अपनी-अपनी शोभा के प्रदर्शन की होड़ में मानो एक-दूसरे को चुनौती देते हुए हमारी सौन्दर्य-रुचि को कसौटी पर कसने लगते हैं ! इन सबको देखकर हमें केवल यही कहना पड़ता है कि कलाकार प्रकृति ने मौज में आकर, शायद रंग की सभी प्यालियों में से थोड़ी-थोड़ी सामग्री ले, उन पर अपनी कूँची चला दी है !

जलमंडल के जन्तुओं की भी विचित्रता का पारावार नहीं !

थलचरों और नभचरों के इन थोड़े-से नमूनों की झाँकी पाने के बाद, यदि जल-जन्तुओं के अद्‌भुत अनोखे संसार की भी कुछ बानगी पाने की चाह तुम्हें हो, तो इसी जन्तु-शाला के हाते में एक ओर बने हुए छोटे से 'जलजन्तु-संग्रहालय' (एक्वेरियम) की सैर करके तुम अपनी इच्छा-पूर्ति कर सकते हो—यद्यपि पानी के जानवरों का कोई बहुत बड़ा मजमा यहाँ देखने को नहीं मिल सकता; इसके लिए तो बम्बई की सुप्रसिद्ध 'जल-जन्तु-शाला' जैसे किसी बड़े संग्रहालय को देखना चाहिए, जहाँ भाँति-भाँति की रंगीन मछलियों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

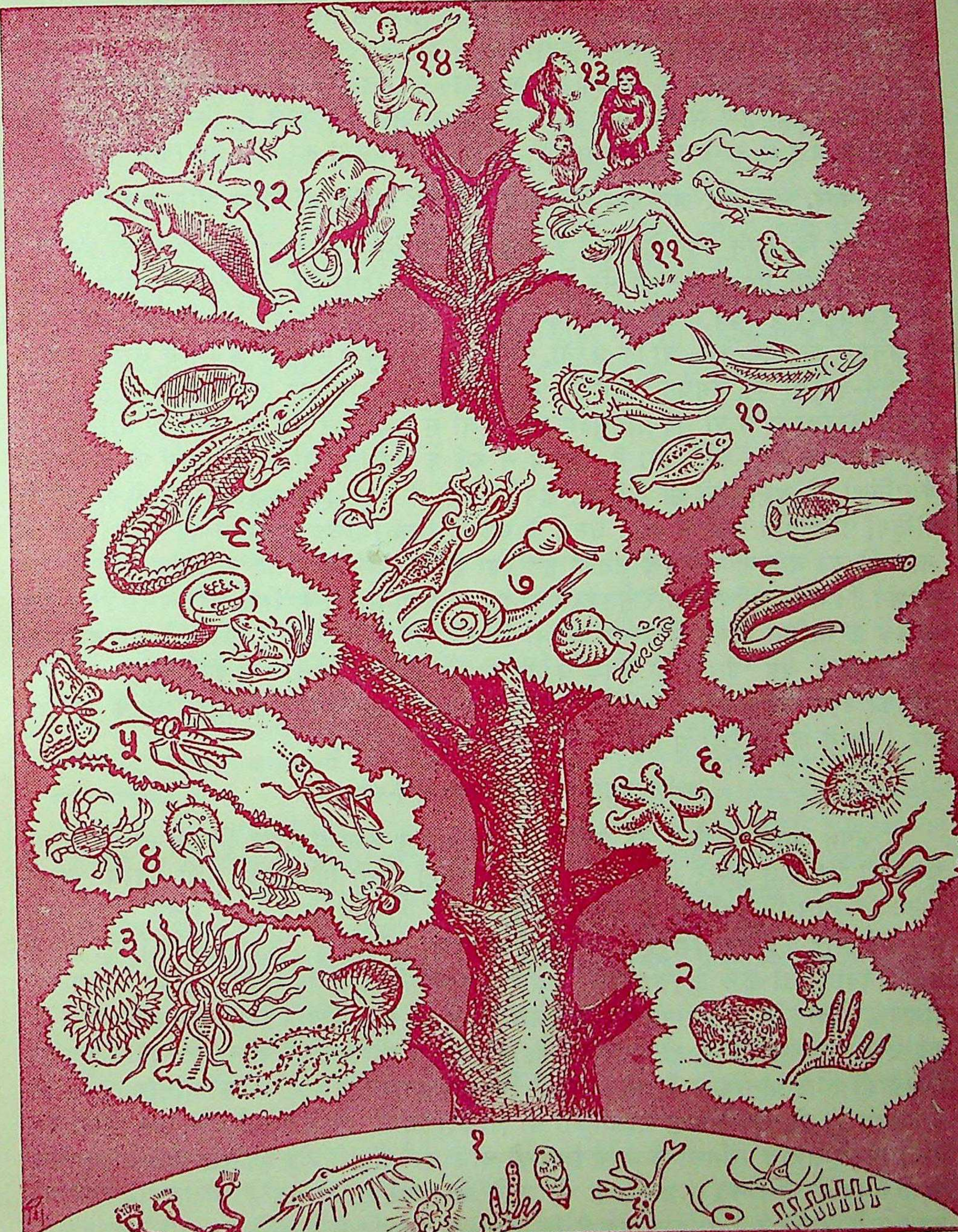

जीवधारियों का वंश-विकास-वृक्ष —१. आदि एककोशीय जीव; २. बहुछिद्री स्पंज आदि; ३. एनीमोन, मूँगा आदि; ४-५. जोड़दार पैरवाले प्राणी; ६. कंटकचर्मी; ७.घोंघावंशी; ८. उपपृष्ठवंशी; ९. मंडूक और उरगम; १०. मत्स्य-वर्ग; ११. पक्षी-वर्ग; १२. स्तनपोषी-वर्ग; १३-१४. प्रधानभागीय वर्ग।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के अलावा तरह-तरह के जल-कछुए, केकड़े, घोंघे, तारा-मछलियाँ, सीपियाँ और वनस्पतियों जैसे जीवों के अनेक जीवित नमूने प्रदर्शित हैं। इन जल-जन्तुओं के अद्‌भुत रूप, रंग-बिरंगी पोशाक और रहन-सहन के अनोखे ढंग को देखकर अचंभे से दाँतों तले उँगली दबाकर ही रह जाना पड़ता है ! सच तो यह है कि थल-मंडल और आसमान में विचरनेवाले प्राणियों की भाँति जल में रहनेवाले जीवधारियों की भी विचित्रता का कोई पारावार नहीं है !

जल, थल और आसमान के अंचल में स्थित प्रकृति की महान् जन्तुशाला

जब कि अपने नगर के लोगों के मनोरंजन के लिए जुटाई गई, इस छोटी-सी बनावटी जन्तुशाला की एकाध घंटे की सैर के दौरान ही कुछ गिने-चुने प्राणियों की झाँकी पाकर हमें इस प्रकार आश्चर्य में डूब जाना पड़ता है, तो फिर प्रकृति के उस विशाल जन्तु-संग्रहालय के अचम्भे की कौन कहे, जो कि धरती, सागर एवं आसमान तीनों के अंचल में लाखों प्रकार के जीव-जन्तुओं का जमघट लगाकर पुराकाल से इस पृथ्वीतल पर सजा हुआ है ! इस महान् जन्तुशाला में तो सूक्ष्मातिसूक्ष्म कीटाणुओं से लेकर बड़े-बड़े डीलडौल के प्राणियों का एक खचाखच मेला-सा लगा है, जिनमें से कई के अद्‌भुत अनोखे इतिहास की अभी तक वैज्ञानिकों को जानकारी भी नहीं है ! इन प्राणियों के अपने-अपने वंश और कुनबों की असंख्य पीढ़ियाँ पीछे बीत चुकी हैं और उनमें से कई के चित्र-विचित्र पूर्वरूपों का आज पृथ्वी से नाम ही उठ गया है——केवल उनकी ठठरियाँ ही इतिहास में उनके अस्तित्व का पता देने को शेष हैं। भला, वर्तमान और भूतकाल की इस सारी जीवसृष्टि का विगतवार लेखा-जोखा इस पुस्तक के सीमित दायरे में प्रस्तुत करना किसके बूते की बात है ? अत: जो कुछ हम यहाँ कर सकते हैं, वह इतना ही है कि प्रकृति की इस विशाल जन्तुशाला की एक परिचयात्मक भूमिका देकर उसके कुछ प्रतिनिधि समुदायों के मनोरंजक नमूनों का हाल बताने का यत्न करें ! आगे के प्रकरणों में यही करने की कोशिश की गई है।

प्राणि-जगत् की सीढ़ीनुमा वर्ण-व्यवस्था

अपने आसपास फैली हुई प्रकृति की इस महान् जन्तुशाला पर निगाह दौड़ाते समय, छूटते ही यह बात हमारे ध्यान में आए बिना नहीं रहती कि इसके सभी सदस्य अलग-अलग निश्चित बिरादरियों या समूहों में बँटे हुए-से जान पड़ते हैं। इन सबके कुछ समान गुण-धर्म और कई एक वंशपरंपरागत विशेषताएँ या खूबियाँ हैं। उदाहरण के लिए, कुछ हैं अंडा देनेवाले, तो कुछ हैं स्तनपोषी (अर्थात् स्तनों से दूध पिलाकर संतान का पालन-पोषण करनेवाले) ! कुछ रीढ़वाले (या पृष्ठवंशी) हैं, तो कुछ हैं बिना रीढ़ के (या अपृष्ठवंशी) ! कई रेंगकर चलनेवाले हैं, तो दूसरे ऐसे हैं, जो पैरों से ही चलते हैं और खुर उगाये हुए हैं। कितने ही तीखे दाँतोंवाले हैं, तो कुछ हैं बिल्कुल दंतहीन भी । अनेकों मांसाहारी अथवा कीटभक्षी हैं, तो बहुतेरे शुद्ध शाकाहारी या घासपातभोजी ही हैं। कई एक जल और थल दोनों ही में समान सुविधा के साथ विचरते पाये जाते हैं, तो कई एकमात्र जल अथवा थल के ही निवासी हैं। कई आसमान में भी उड़ने में समर्थ हैं, तो बहुतेरे केवल वृक्षों ही पर रहते पाये जाते हैं ! सारांश यह है कि विभिन्न आकृतियों के होते हुए भी, गुण-धर्म के विचार से उनमें से कई में परस्पर इतनी अधिक समानताएँ मिलती हैं कि सहज ही उनकी अलग-अलग बिरादरियाँ या जातियाँ निर्धारित की जा सकती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्राय: जनसाधारण समस्त जीवधारियों को 'जलचर' (पानी में रहनेवाले), 'थलचर' (धरती पर गुजर-बसर करनेवाले) और 'नभचर' (आसमान में विचरण करनेवाले) या 'मांसाहारी' और 'शाकाहारी', इसी प्रकार के वर्गों में बाँटने के अभ्यस्त हैं। परन्तु वैज्ञानिकों का दृष्टिकोण इस सम्बन्ध में कुछ और ही है। उनकी निगाह में तो सागर-निवासी 'तिमि' या ह्वेल नामक जलजीव और धरती पर विचरनेवाले बहुतेरे ढोर-पशु, दोनों ही, 'स्तनपोषी' नामक एक ही बृहत् समुदाय के सदस्य हैं, चूँकि वे हैं स्तनों से संतान का पालन-पोषण करनेवाले प्राणी! इसी प्रकार जल में विचरण करनेवाला मगर और हमारे घरों की दीवारों पर रेंगनेवाली छिपकिली दोनों उनकी दृष्टि में एक ही बिरादरी के प्राणी हैं, इस नाते कि वे रेंगकर चलनेवाले जीव हैं। वस्तुत: वैज्ञानिकों ने 'अपृष्ठवंशी' (अर्थात् बिना रीढ़वाले) और 'पृष्ठवंशी' (अर्थात् रीढ़वाले) इन्हीं दो महाविभागों में सारे प्राणि-जगत् को विभक्त माना है। इन्हीं महाविभागों के अनेक उपविभागों की योजना करके उन्होंने उनमें यथास्थान भिन्न-भिन्न जीवों को सीढ़ी-उतार क्रम से वर्गीकृत कर दिया है! जीव-जगत् का यह वैज्ञानिक वर्गीकरण संक्षेप में इस प्रकार से है :—

(क) अपृष्ठवंशी विभाग	(ख) पृष्ठवंशी विभाग
१. 'प्रोटोजोआ' अर्थात् एककोशीय आदि जीव (अमीबा, फोरेमिनीफेरा, रेडियोलेरिया, बैक्टीरिया आदि)।	१. मत्स्य-वर्ग (भाँति-भाँति की मछलियाँ)।
२. 'पोरिफेरा' अर्थात् बहुछिद्री बहुकोशीय प्राणी (स्पंज)।	२. मंडूक-वर्ग (मेंढक आदि उभयचर प्राणी)।
३. 'सीलेनटेराटा' अर्थात् लस-मछली, मूँगा, एनीमोन या समुद्री फूल जैसे बहुकोशीय सरल जीव।	३. उरंगम-वर्ग (छिपकली, बिसखपरा, मगर, कछुआ, सर्प)।
४. 'वर्मीज' या कृमि (केंचुवा, जोंक, चुन्ने आदि गंडेदार जीव)।	४. पक्षी-वर्ग (भाँति-भाँति के पखेरू)।
५. 'एकिनोडर्मा', अर्थात् सितारा-मछली, समुद्री खीरे, आदि 'कंटकचर्मी' जीव।	५. स्तनपोषी-वर्ग, जिसके कई उपवर्ग हैं :—
६. 'मोलस्का' या घोंघा व सीपी की जाति के प्राणी।	(अ) तिमि-वर्ग (ह्वेल, सूँस आदि)।
७. 'आर्थोप्रोडा' या जोड़दार परवाले प्राणी (मक्खी, बर्र, मच्छर, काँतर, बिच्छू, तितली, दीमक, चींटी, जूँ, टिड्डी, झींगुर, खटमल, केकड़ा, झींगा, पतिंगा आदि)।	(आ) बच्चों को थैली में रखनेवाले जीव (कंगारू)।
८. उपपृष्ठवंशी या बिना खोपड़ीवाले रीढ़दार प्राणी।	(इ) शफ या खुरवाले जानवर (घोड़ा, गाय, बकरी आदि)।
	(ई) कुतरकर खानेवाले प्राणी (गिलहरी, चूहा, साही)।
	(उ) मांसभक्षी जीव (सिंह, भेड़िया, भालू, बिल्ली आदि)।
	(ऊ) कीटभक्षी जीव (छछूँदर आदि)।
	(ए) चमगादड़ जैसे करपक्षी जीव।
	(ऐ) 'प्राइमेट्स' (लीमूर, वानर, बनमानुस और मनुष्य)।

उपर्युक्त तालिका से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जीव-जगत् में उन्नति के क्रम से प्राणियों के विकास की एक प्रकार की सीढ़ीनुमा वर्ण-व्यवस्था-सी मिलती है। विकास की ये श्रेणियाँ अमीबा जैसे एककोशीय सरलतम जीव-रूपों से लेकर मनुष्य जैसे परम विकसित बुद्धिशाली प्राणी तक, आज की मौजूदा स्थिति में तो देखने को मिलती ही हैं; साथ ही पृथ्वी के करोड़ों वर्षों के इतिहास में जीवन के आरम्भ से लेकर मनुष्य के चरम उत्कर्ष की स्थिति तक, भिन्न-भिन्न युगों के विभिन्न प्राणि-रूपों के तरतीबवार सिलसिले में भी वे उसी तरह श्रेणीबद्ध दृष्टिगत होती हैं। इस प्रकार इस वर्ण-व्यवस्था की मानो दो निसेनियाँ या सीढ़ियाँ हैं! एक तो है काल के विस्तृत अंचल में करोड़ों वर्षों की अवधि में फैली हुई जीवन के विकास की दीर्घव्यापी निसेनी! यह वह निसेनी है, जिसमें किसी धुँधले अतीत में पहले-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पहल एककोशीय जैव प्रतिरूपों के रूप में जीवन की आदि रश्मियाँ निखरी होंगी। यह निसेनी अब तक के प्राणि-विकास के सारे इतिहास को अपने बाहुओं में समेटे हुए है। और दूसरी है वर्तमान जीव-जगत् के आँगन में व्याप्त ठेठ एककोशीय जैव स्थिति से मानवीय विकास की उच्चतम स्थिति तक की प्राणि-विकासक्रम की उत्तरोत्तर सभी श्रेणियों का एक साथ दिग्दर्शन करानेवाली वर्ण-व्यवस्था।

जीवधारियों का वंश-विकास-वृक्ष

परन्तु इस प्रकार उतार-चढ़ावदार निसेनी के रूप में कल्पित करने के बजाय, यदि हम जीवधारियों के विकास की इस क्रमबद्ध झाँकी को विविध शाखाओं और उपशाखाओं से युक्त एक विशाल वृक्ष के रूप में चित्रित करें, तो ज्यादा उपयुक्त होगा। कारण, जीवन का स्वरूप एक पौधे जैसा ही है––वह एक ही सामान्य तने से विविध शाखाओं-उपशाखाओं के रूप में क्रमशः प्रस्फुटित और विकसित हुआ है। इन शाखाओं में से कई डालियाँ तो अनुकूल परिस्थितियों का सुयोग प्राप्त कर उत्तरोत्तर बढ़ती और पुष्पित-पल्लवित होती चली गईं। उधर बहुतेरी शाखाएँ प्रतिकूल अवस्थाओं का सामना पड़ने के कारण कुछ दूर तक बढ़ने के बाद कुंठित हो गईं अथवा एकदम सूखकर ठूँठ बन गईं।

जीवधारियों का यह विकास-वृक्ष आज के दिन जिन विविध शाखा-प्रशाखाओं की झाँकी दरसाते हुए पृथ्वी के आँगन में लहलहा रहा है, वह वैसा ही आज से लाखों-करोड़ों वर्ष पूर्व नहीं था। क्योंकि उन दिनों उसकी बहुतेरी वर्तमान शाखें––जैसी कि मनुष्य की शाखा–– शायद प्रस्फुटित ही नहीं हो पाई होंगी और अन्य अनेक शाखाओं पर भी आज के प्रतिनिधि जीव-रूपों के बजाय उनके कोई पुरातन पुरखे या आदिम प्रतिरूप ही प्रदर्शित हो रहे होंगे। फिर भी उसका मूल तना तब भी वैसा ही रहा होगा, जैसा कि आज वह है। उसी तने से युग-युग में क्रमशः नई-नई डालियाँ और उपशाखाएँ फूटती चली गईं। फलतः इस महान् वृक्ष का विस्तार भी उत्तरोत्तर बढ़ता चला गया। कौन जानता है, आगे चलकर इसमें अभी कौन-कौन-सी नई शाखें और फूटेंगी!

सबसे निचले स्तर के एककोशीय आदि जीव

जैसा कि पृष्ठ ६ के चित्र से स्पष्ट है, जीवधारियों के विकास-क्रम के इस महान् वंशवृक्ष के मूल में एककोशीय वर्ग के 'अमीबा', 'रेडियोलैरिया', 'फोरेमिनीफेरा', आदि वे अति सूक्ष्म और सरलतम प्राणी हैं, जिन्हें हम बिना सूक्ष्मदर्शक यंत्र की सहायता के नहीं देख पाते। इसी वर्ग में विभिन्न रोगों को उत्पन्न करनेवाले वे विविध सूक्ष्म कीटाणु भी सम्मिलित हैं, जो 'परोपजीवी' अर्थात् दूसरों के शरीर पर बसर करनेवाले होते हैं। ये हमारे महान् शत्रुओं में से हैं। परन्तु इस समुदाय के बहुतेरे जीव हमारे लिए उपयोगी और लाभदायक भी हैं। इन आदि प्राणियों में से कई तो महान् रचयिताओं के रूप में धरती के इतिहास में नाम पा गये हैं। इनमें सबसे प्रसिद्ध करोड़ों वर्षों तक अपनी ठठरियों का अंबार लगाकर चूने या खड़िया मिट्टी की चट्टानों के स्तर उपजानेवाले वे एककोशीय समुद्री जीव हैं, जिनका उल्लेख इस पुस्तकमाला के पिछले एक खण्ड में धरती की जीवन-कहानी के सिलसिले में किया जा चुका है। आदि जीवों का यह वर्ग वैज्ञानिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बोली में 'प्रोटोजोआ' के नाम से पुकारा जाता है। इस वर्ग के कुल मिलाकर कोई दस हजार जाति के जीवों की गणना अब तक की जा चुकी है !

द्वितीय और तृतीय श्रेणी के बहुकोशीय सरल जीव

तदुपरान्त उन बहुछिद्री मध्यमवर्गीय सूक्ष्म प्राणियों का वर्ग आता है, जिनके प्रसिद्ध प्रतिनिधि के रूप में समुद्र में पाये जानेवाले 'स्पंज' नामक बहुछिद्री जीवों को हम पहचानते हैं। इस बहुछिद्री वर्ग का वैज्ञानिक नाम 'पोरिफेरा' है। इस वर्ग के जीवों का मुख्य लक्षण यह है कि इनके शरीर में बहुत-से छिद्र होते हैं, जिनके रास्ते वे जल को सोख लेते हैं। ये अधिकतर समुद्र आदि जलाशयों में उपनिवेश बसाकर रहते हैं। लगभग ढाई हजार जाति के स्पंजों का पता वैज्ञानिकों को है। इन्हीं के भाई-बन्धु मूँगे या प्रवाल नामक वे बहुकोशीय सरल जीव हैं, जो कि वृक्षों की तरह निरन्तर अपनी शाखाओं का विस्तार करते हुए अपने रक्तवर्ण कंकालों का अंबार रच-रचकर, छिछले समुद्रों में लम्बे-चौड़े द्वीपों की रचना करने के लिए मशहूर हैं। इसी समुदाय का अन्य एक सरल बहुकोशीय आदि प्राणी 'लस-मछली' (या जेली फिश) नामक वह जीव है, जिसके समूह प्रायः प्रत्येक समुद्रतट पर जल की ऊपरी सतह पर तैरते देखे जा सकते हैं। इन जन्तुओं की एक विशेषता यह होती है कि इनके शरीर पर एक प्रकार के डंक मारनेवाले बारीक सूत-से होते हैं, जो छोटे-छोटे कोशों में बंद रहते हैं। इसीलिए इनसे छू जाने पर हमारे बदन में जलन-सी होने लगती है। इनका नाम 'लस-मछली' इसलिए पड़ा है कि इनका शरीर, जो दबाते ही पिचक जाता है, एक प्रकार के लसलसे पदार्थ का बना होता है। जीवधारियों के वंश-वृक्ष की यह तृतीय शाखा वैज्ञानिकों की भाषा में 'सीलेनटेराटा' के नाम से पुकारी जाती है। इस वर्ग के अन्य एक अनूठे प्रतिनिधि 'एनीमोन' या समुद्री फूल नामक वे प्रसिद्ध जल-जीव हैं, जो बाहरी रूप-रंग में एकदम वनस्पतिवर्ग के पुष्पित पौधों जैसे जान पड़ते हैं। इन सबका विशेष विवरण आगे चलकर तुम्हें पढ़ने को मिलेगा।

कृमि, कंटकचर्मी, घोंघावंशी तथा जोड़दार पैरवाले प्राणियों के विविध वर्ग

इसके बाद आती है केंचुवा, जोंक, चुन्ने आदि गंडेदार और बिना गंडे के कृमि-वर्ग के कतिपय क्षुद्र प्राणियों की वह शाखा, जो स्थानाभाव के कारण पृ० ९ के चित्र में दिग्दर्शित नहीं हो पाई है, तथापि इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि इसके कई प्रतिनिधि अन्य जीवों के शरीर में रहकर गुजर-बसर करनेवाले मशहूर परोपजीवियों में से हैं। पाँचवी और छठीं शाखाएँ क्रमशः सितारा-मछली, समुद्री ककड़ी और खीरे आदि कंटकचर्मी ('एकिनोडर्मा') वर्ग के एवं सीपी, शंख, कौड़ी आदि घोंघा-वंश के जीवधारियों की हैं, जो पृ० ९ के चित्र में निर्देश-संख्या ६ और ७ द्वारा सूचित हैं। इन्हीं के समकक्ष की एक महत्वपूर्ण शाखा—जो दो स्वतंत्र उपशाखाओं के रूप में विभक्त होकर बढ़ती चली गई है— जोड़दार पैरवाले क्षुद्र जीवों के उस विस्तृत वर्ग की है, जिसे वैज्ञानिकों की बोली में 'आर्थोप्रोडा' संज्ञा प्रदान की जाती है। इस महावर्ग में झींगा, केंकड़ा, बिच्छू, काँतर, चींटी, दीमक, मच्छर, मकड़ी, बर्र, मक्खी, खटमल, जूँ, टिड्डी, पतिंगा, तितली, आदि, आदि लगभग पाँच लाख प्रकार के जीव सम्मिलित हैं! इनके अलावा और भी कितने अज्ञात जीव इस वर्ग में होंगे, जिनकी गणना अभी नहीं हो पाई है! निस्संदेह यही जीव-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धारियों का सबसे विस्तृत समूह है, क्योंकि इस वर्ग की प्रत्येक श्रेणी के जीवों की संख्या कोटि-कोटि की सीमा तक पहुँची हुई है ! कहते हैं, यदि किसी तराजू के एक पलड़े में एक ओर इस वर्ग के समस्त जीव रक्खे जायँ और दूसरी ओर अन्य सभी वर्गों के छोटे-बड़े सभी जीव-जंतु भर दिए जाएँ, तो भी इन जोड़दार प्राणियों का ही पलड़ा भारी पड़ेगा —वे परिमाण में अन्य जीवों से लगभग पाँच गुना अधिक निकलेंगे !

उपपृष्ठवंशी-समूह के दिलचस्प प्राणी

जीवधारियों के वंशवृक्ष की अब तक की शाखें 'अपृष्ठवंशी' (अर्थात् बिना रीढ़ के) प्राणियों के बृहत् समुदाय की ही थीं, जोकि जंतु-विकास की निचली मंजिल की श्रेणियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। इसके उपरान्त अब हम उत्तरोत्तर क्रम से इस वंशवृक्ष की उन ऊपरी डालियों की झाँकी पाते हैं, जो 'पृष्ठवंशी' या रीढ़वाले प्राणियों के विभिन्न वर्गों की शाखाएँ हैं। उपर्युक्त दोनों समुदायों की संधि-रेखा पर अवस्थित, विकासवाद के सिद्धान्त की ज्वलन्त साक्षी के रूप में, जीवधारियों का एक अनूठा वर्ग उन बिना खोपड़ी-वाले किन्तु रीढ़दार प्राणियों की दिलचस्प श्रेणी का है, जो 'प्रोटोकारडाटा' या उपपृष्ठ-वंशियों के नाम से पुकारे जाते हैं। ये जीव असली रीढ़दार और बिना रीढ़ के प्राणियों के बीच की उपज हैं। इनमें से कई के तो रीढ़ भी नहीं है, फिर भी गलफड़े के छिद्रों जैसे पृष्ठवंशियों के कुछ लक्षण उनमें हैं। पृ० ९ के चित्र में इनकी शाखा निर्देश-संख्या ८ द्वारा सूचित है।

पृष्ठवंशी समुदाय के उन्नत जीव

पृष्ठवंशी-समुदाय की सीमा में प्रवेश करने पर हमें उत्तरोत्तर विकास के क्रम से 'मत्स्य' (अर्थात् भाँति-भाँति की मछलियों), 'मंडूक' (मेंढक जैसे उभयचर प्राणियों), 'उरंगम' (छिपकिली, गोह, बिसखपरा, मगर, कछुवा, सर्प आदि रेंगकर चलनेवाले जीवों), 'पक्षी' (भाँति-भाँति के पखेरुओं या उड़नेवाले जीवों) तथा 'स्तनपोषी' (स्तन से दूध पिलाकर संतान का पालन करनेवाले विविध प्रकार के उच्च कोटि के जीवधारियों) आदि वर्गों की शाखाएँ जीवन के इस वंश-विकास वृक्ष पर से निकली हुई दिखाई देती हैं। पृ० ९ के चित्र में ये शाखाएँ निर्देश-संख्या ९, १०, ११, १२, १३ और १४ द्वारा सूचित हैं। इनमें स्तनपोषियों के अनेक उपवर्ग हैं, यथा 'तिमि-वर्ग' (ह्वेल, सूँस आदि), 'कँगारू-वर्ग'. 'शफ-वर्ग' (घोड़ा, गाय, आदि), 'मांसभक्षी वर्ग' (सिंह, बाघ, तेंदुआ, बिल्ली, भेड़िया, सियार, लोमड़ी, कुत्ता, भालू, बिज्जू, लकड़बग्घा आदि), 'कुतरकर खानेवाले जीवों का वर्ग' (चूहा, गिलहरी, खरगोश, साही आदि), 'कीटभक्षी वर्ग' (छछूँदर आदि), 'करपक्षी वर्ग' (चमगादड़ आदि), और 'प्राइमेट्स या प्रधानभागीय जीवों का वर्ग' (जैसे लीमूर, वानर, बनमानुस आदि)। इन्हीं उपवर्गों में से अंतिम वर्ग का सदस्य मनुष्य है, जो सब प्राणियों से अधिक बुद्धिशील होने के नाते इस विकास-वृक्ष की चोटी पर स्थित है।

तुम्हें यह जानकर हैरानी होगी कि अमीबा जैसे एककोशीय सरलतम आदि प्राणी से लेकर मनुष्य जैसे मस्तिष्क के धनी, अत्यंत पेचीदा और चरमतम विकास पर पहुँचे हुए स्तनपोषी जीव तक, समस्त जंतु-जगत् के प्राणियों की लगभग दस लाख जातियाँ-उपजातियाँ वैज्ञानिकों द्वारा सूचित की जाती हैं !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पृथ्वी पर जीवन का विकास किस प्रकार से हुआ, इसका हाल संक्षेप में हम तुम्हें इस पुस्तकमाला के दूसरे खंड में बता चुके हैं। उसी क्रम में आज से लगभग बारह से उन्नीस करोड़ वर्ष पूर्व के 'मध्यकालीन कल्प' नामक महायुग में होनेवाले उरंगम-वर्ग के कतिपय भीमकाय प्राणियों का उल्लेख हमने किया था। ये आकार, वजन और शक्ल-सूरत के भौंडेपन में जीव-सृष्टि के अब तक के सभी नमूनों को मात करनेवाले प्राणी थे। जैसा कि बताया जा चुका है, ये बेडौल भारी-भरकम जीव कुछ करोड़ वर्ष तक अपनी लीला दिखाकर अन्त में इस धरती से सदा के लिए अंतर्द्धान हो गए! उनका जो कुछ भी पता आज हमें मिलता है, सो केवल उनकी पाषाणभूत ठठरियों के आधार पर है, जो कि चट्टानों की पर्तों में दबी मिली हैं। आओ, बीते हुए युगों के इन अद्भुत अनोखे प्राणियों में से कुछ का अधिक विस्तार के साथ तुम्हें हाल बताया जाय!

करोड़ों वर्ष पूर्व के महासागरों का स्वामी—'प्लिसियोसॉरस' नामक जलदैत्य

पृथ्वी के इतिहास के 'मध्यकालीन कल्प' को यदि 'दानव-युग' कहकर पुकारा जाय, तो उसके लिए कहीं अधिक सार्थक नाम यह होगा। कारण, क्या स्थल और क्या जल, तथा क्या आसमान, सभी पर ऐसे भीमकाय तथा डरावने जीवधारियों का उस युग में बोलबाला छा गया था, जिनकी कल्पना मात्र से आज हमारे रोंगटे खड़े होने लगते हैं! जिस भयावने जन्तु का परिचय हम यहाँ देने जा रहे हैं, वह भी उन्हीं में से एक था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

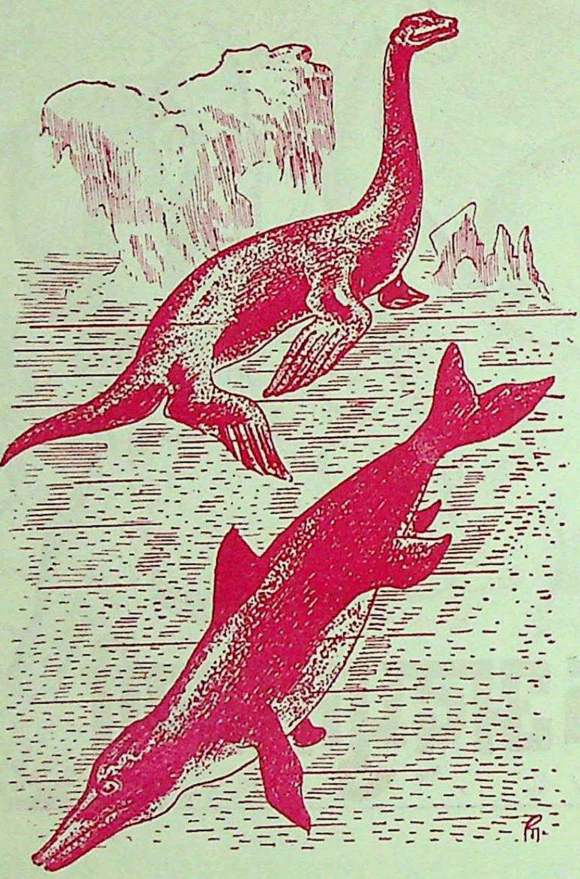

(ऊपर) 'प्लिसियोसॉरस' और (नीचे) 'इक्थियोसॉरस' नामक भीमकाय जलदानव, जिन्होंने पंद्रह-बीस करोड़ वर्ष पूर्व के जलमंडल पर अपना आतंक स्थापित कर रखा था !

'प्लिसियोसॉरस' नामक यह प्राणी साँप की-सी लंबी गरदन और सूँस या कछुए के-से चपटे बदनवाला अनोखा जीव था, जिसकी लंबाई लगभग १३ मीटर रही होगी ! यह मूल रूप में तो शायद एक थलचर उरंगम ही रहा होगा। परन्तु, धरती की बदलती हुई परिस्थितियों से विवश होकर अंत में उसे जल का आश्रय ग्रहण कर लेना पड़ा था। इसी क्रम में उसके हाथ-पैर बदल-कर क्रमशः एक तरह के पतवारनुमा चौड़े डैनों जैसे अंगों में परिणत हो गए थे, जिनकी मदद से वह तैरता था।

वह थलचरों की तरह साँस लेता

लेकिन महासागरों का निवासी बन जाने पर भी यह भीमकाय प्राणी अन्य थलचरों की भाँति अभी फेफड़ों ही से साँस लेता था—उसे मछलियों की भाँति पानी में डूबे रहकर साँस लेने की सुविधा प्राप्त न थी। फलतः अपना शेष शरीर जल में डुबाये रहने पर भी हवा के लिए उसे अपना मुँह जल से बाहर ही निकाले रहना पड़ता था। इस काम में उसकी लंबी गरदन विशेष रूप से उसकी सहायता करती थी। इस दैत्य के दाँत बड़े पैने, मजबूत और कराल थे ! वे मगर की दंतपंक्तियों की भाँति उसके सशक्त जबड़ों में शिकंजेनुमा ढंग से लगे रहते थे। यह न केवल भाँति-भाँति के जलजीवों का शिकार करके ही जीवन-निर्वाह करता, बल्कि अपनी लंबी गरदन की बदौलत तटवर्ती स्थलभाग के असावधान थलचरों को भी अपनी लपेट में लेने से नहीं चूकता था। इस प्राणी की एक मीटर तक के छोटे आकार की भी ठठरियाँ मिली हैं और उसके उदर में मछलियों, उरंगम पक्षियों आदि की हड्डियों के साथ-साथ कंकड़-पत्थर के टुकड़े भी पाए गए हैं ! संभवतः इन कंकड़ों को वह मगर, शुतुर्मुर्ग आदि की भाँति आहार पचाने के लिए उदरस्थ कर लेता रहा होगा ! यह जलदैत्य उन दिनों के महासागरों पर वैसे ही अपना आतंक जमाए हुए था, जैसे कि थल-मंडल पर गोह की शक्ल के अन्य भीमकाय उरंगम छाए हुए थे ! निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता है कि यह प्राणी अंडज था या जरायुज ! यदि वह अंडज जीव रहा होगा, तो निश्चय ही अंडे देने के लिए उसकी मादाओं को कभी-कभी तटवर्ती स्थल की भी शरण लेनी पड़ती रही होगी !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसी युग का अन्य विकराल जलदानव--'इक्थियोसॉरस'

उपर्युक्त 'मध्यकालीन कल्प' का अन्य एक भयावना जलदानव 'इक्थियोसॉरस' भी लगभग १३ मीटर लंबा प्राणी था। परन्तु उसकी विशेषता यह थी कि उसकी गरदन प्लिसियोसॉरस जैसी लंबी न होकर बहुत-कुछ मगर-मच्छ जैसी थी। साथ ही उसके बदन का शेष भाग छिपकिली या गोह जैसा न होकर शार्क मछली जैसा था ! इस प्राणी के शरीर पर मछलियों की तरह डाँड़नुमा डैनों के दो जोड़े पाए जाते थे और इनके अलावा एक डैना प्रायः पीठ के ऊपर भी होता था। यह जलजंतु लगभग दस करोड़ वर्ष तक दुनिया के जलभागों पर अपना दबदबा स्थापित किये रहा ! इस प्राणी की कई ठठरियों के उदर में इसी के छोटे-छोटे बच्चों की भी ठठरियाँ मिली हैं। यह इस बात की सूचना है कि ये जीव ह्वेल की तरह अपने बच्चों को पेट में ही बड़ा करके उन्हें पैदा किया करते थे।

दैत्याकार स्थलचर एवं जलस्थलचर उरंगम

आकार या डीलडौल की दृष्टि से, आज से दस-बीस करोड़ वर्ष पूर्व या इससे भी पहले, जैसे महाकाय और डरावने जीव पृथ्वी के स्थलभागों पर प्रकट हुए, वैसे शायद जलमंडल को नसीब नहीं हो सके। उरंगम-वर्ग के ये दैत्य एक प्रकार की बृहदाकार गोहों जैसे थे। कुल मिलाकर पाँच हजार तरह के ऐसे डिनॉसारों का पता वैज्ञानिकों को प्राप्त हुआ है। उन्हें मुख्य रूप से चार वर्गों में बाँट दिया गया है--प्रथम, पशुओं के-से पैरवाले; दूसरे, पक्षियों के-से पैरवाले; तीसरे, छिपकिलियों या गोहों के-से पैरवाले; और चौथे कवचधारी ! इनके

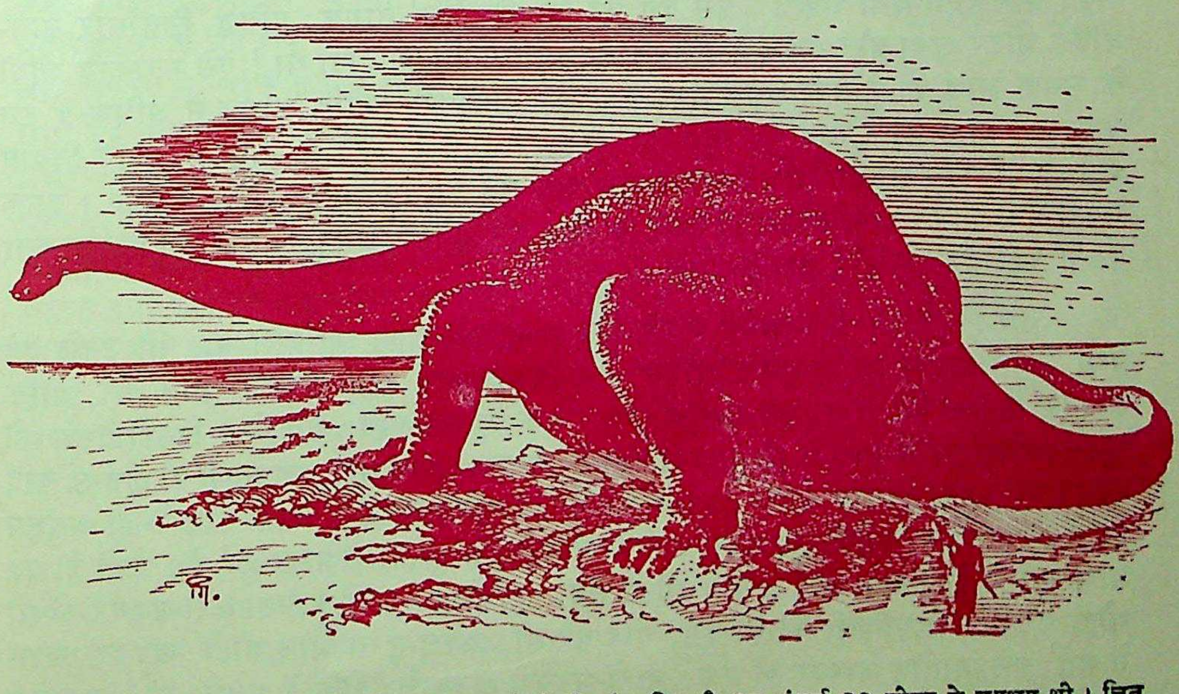

उरंगम-युग का सबसे विशालकाय डिनॉसार --'जाएजेण्टोसॉरस' --जिसकी कुल लंबाई ३२ मीटर के लगभग थी। चित्र में आकार की तुलना के लिए इसकी आकृति के पास एक कल्पित मानवाकृति भी खड़ी कर दी गई है, जिससे इसकी विशालता का अनुमान तुम्हें हो सकता है। यह प्राणी शुद्ध शाकाहारी था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
शाकाहारी और मांसाहारी, ये दो महाविभाग किये जा सकते हैं। मांसाहारियों में कई ऐसे भी थे, जो अन्य डिनासॉरों के अंडे चुराकर उन्हीं पर अपना गुजर-बसर चलाने के अभ्यस्त थे। यह इसलिए संभव था कि इस युग के लगभग सभी बृहत्काय प्राणी अंडज थे।

'ब्राण्टोसॉरस,' 'डिप्लोडोकस' और 'जाएजेण्टोसॉरस'

इस सिलसिले में सबसे पहले जो नाम हमारे सामने आते हैं, वे हैं निस्संदेह 'डिप्लोडोकस', 'ब्राण्टोसॉरस' और 'जाएजेण्टोसॉरस' नामक उन महाकाय शाकाहारियों के, जिन्होंने डीलडौल के लिहाज से न केवल अपने ही युग का, बल्कि सदा के लिए जंतु-जगत् का सभी युगों का कीर्तिमान तोड़ दिया था ! इस वर्ग के उरंगमों के अनेक प्रस्तर-विकल्प अमेरिका के व्योमिङ्ग नामक स्थान में मिले हैं। उनके अध्ययन से ज्ञात होता है कि इन जीवों का अधिकांश जीवन पानी के ही भीतर बीता करता रहा होगा——क्योंकि इनके केवल एक ही नासिका-रंध्र होता था और वह भी मस्तक के ठेठ ऊपरी सिरे पर ! यह एक उल्लेखनीय बात है कि अपने भारी-भरकम डील के मुकाबले में इन दानवराजों का मस्तिष्क-भाग अत्यन्त लघु था ! इससे यह अनुमान किया जाता है कि ये निरे भोंदू थे ! शायद इसीलिए क्रिटेशियश युग की समाप्ति पर, पृथ्वी पर उष्ण जलवायु का सहसा अंत होते ही जब घोर शीत का वातावरण प्रस्तुत हुआ और इन जीवों के जीवन-निर्वाह के एकमात्र साधन दलदली इलाकों के शैवाल क्रमशः गायब हो चले, तो ये महाकाय प्राणी धरती पर से एकाएक उठ गए ! कारण यह था कि ये उन बदली हुई परिस्थितियों के अनुकूल अपने आपको न बना सके ! इस वर्ग का 'ब्राण्टोसॉरस' नामक प्रसिद्ध डिनॉसार बीस-बाईस मीटर लंबा और वजन में संभवतः तीस-पैंतीस टन का होता था ! ऐसे महाकाय जीवों के समक्ष आज का हमारा सबसे बड़ा स्थलचर हाथी भी (जोकि अधिक से अधिक ५ टन वजन का होता है) शायद एक चूहे-सा ही ज्ञात होता ! कहते हैं, हाथी को अपने निर्वाह के लिए प्रतिदिन लगभग पाँच क्विंटल घास-पात एवं १० किलोग्राम अनाज चाहिए। इसके मुकाबले में शायद ब्राण्टोसॉरस को इससे छः-सात गुने अधिक रातब की प्रतिदिन आवश्यकता पड़ती रही हो, तो कोई ताज्जुब नहीं।

जब कि केवल बीस-बाईस मीटर लंबे ब्राण्टोसॉरस का यह हाल था, तो उनके बड़े बन्धु 'डिप्लोडोकस' या 'जाएजेण्टोसॉरस' जैसे विशालकाय जीवों की बात कौन करे, जोकि आकार में सत्ताईस से लगभग बत्तीस मीटर तक पहुँचते पाये जाते थे। डिप्लोडोकस को 'एटलाण्टोसॉरस' के नाम से भी पुकारा गया है। गरदन उठाने पर, इस प्राणी की कुल ऊँचाई शायद ग्यारह मीटर तक पहुँच जाती थी ! पर 'जाएजेण्टोसॉरस' अपने नाम के ही अनुरूप इन सबमें बड़ा था। उसकी एक ठठरी अफ्रीका महाद्वीप के भूभाग से प्राप्त हुई है। कहते हैं, यह प्राणी दुम से सिर तक कोई बत्तीस मीटर लंबा रहा होगा ! जरा कल्पना करो अजगर की-सी मोटी गरदन, छिपकिली की-सी दुम, गोह की-सी शक्ल-सूरत और मोटी खुरदरी खाल से मढ़े कल्पनातीत आकार के एक भारी-भरकम धड़वाले घिनौने प्राणी की ! जब वह अपने भौंडे पैरों और दुम के सहारे सरकता हुआ धरती पर चलता होगा, या किसी दलदल में पैठकर पानी और कीचड़ से लथपथ अपनी गरदन एवं दुम को इधर से उधर लचकाता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हुआ मोड़ता या फटकारता होगा, तो कितना भयावना वह लगता होगा! परन्तु ऐसी डरावनी और वीभत्स आकृति पाकर भी इस वर्ग के प्राणी खतरनाक नहीं थे—वे दरअसल बहुत सीधे-सादे, भोंदू और नितान्त अहिंसक जीव थे। ये बेचारे तो अपने भारी-भरकम शरीर और मंद बुद्धि के कारण स्वयं ही दूसरों के शिकार बन जाते थे! प्राय: वे किसी गहरे दलदल में फँसकर असहाय बन जाते थे और तब दुश्मन वार करके उनके टुकड़े-टुकड़े कर डालते थे!

'स्टैगोसॉरस' नामक अद्भुत कवचधारी

जिन दिनों धरातल के दलदली क्षेत्रों में उपर्युक्त गोहनुमा जलस्थलचर प्राणियों का बोलबाला छाया हुआ था, तभी कलाकार प्रकृति अपनी महान् प्रयोगशाला में चुपचाप उरंगमों के एक और प्रकार के साँचे तैयार करने में लगी हुई थी! इन अजीब आकार-प्रकार के कवचधारी उरंगमों का सबसे प्रसिद्ध प्रतिनिधि 'स्टैगोसॉरस' नामक भीमकाय प्राणी था। यह कोई छ:-सात मीटर लंबा जानवर रहा होगा, जिसकी पिछली टाँगें अगले पैरों से बहुत बड़ी होती थीं। यह उरंगम इस बात में सबसे निराला था कि उसकी पीठ पर की धन्वाकार कूब पर अस्थियों से मढ़ी हुई लगभग आधे मीटर ऊँची त्रिकोणाकार खड़ी पट्टियों या फलकों की एक दोहरी श्रृंखला-सी बनी हुई थी! उनकी रक्षा-प्राचीर को देखने पर ऐसा भान होने लगता था, मानो किसी किले या दुर्ग के ऊपरी परकोटे के सिरे पर बने हुए कँगूरों की पंक्तिबद्ध मालिका वह

(ऊपर) टाइरेनोसॉरस नामक हिंसक उरंगम; (मध्य में) शाकाहारी ब्राण्टोसॉरस; (नीचे) कवचधारी स्टैगोसॉरस।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हो ! तारीफ तो यह थी कि यह कवच-मालिका केवल पीठ ही के इलाके तक सीमित नहीं रहकर, उत्तरोत्तर क्रम से अधिकाधिक नीची होती हुई ठेठ पूँछ तक उतर आई थी ! वहाँ उसका स्वरूप उतने ही लंबे तीखे भालानुमा शूलों की दो पंक्तियों में बदल गया था !

भला, इतना भारी कवच पीठ पर लादे रहनेवाला जीव क्योंकर द्रुतगामी हो सकता था ! अतः, स्वभावतः ही, इस प्राणी की चाल अति मंद थी और उसका सिर अपने ऊपरी आवरण के बोझ से दबा जाकर एकदम जमीन को छूता हुआ-सा नीचे झुका रहता था ! तुम कहोगे कि इस दानवीय आकृति को पाने के बाद तो शायद इस दैत्य का मुकाबला करनेवाला उस युग में फिर कोई बचा ही नहीं रह गया होगा और वह एक प्रकार से बिल्कुल अजेय बन गया होगा ! परन्तु बात ऐसी नहीं थी । वस्तुतः इस बेचारे की आकृति में किलेबन्दी की यह जो सारी योजना प्रकृति ने की थी, वह केवल उसकी अपनी रक्षा के हेतु ही थी । यह स्वयं तो दरअसल एक सीधा-सादा शाकाहारी प्राणी था ! चूँकि उसके आसपास के वातावरण में उन दिनों टाइरेनोसॉरस जैसे अति भयंकर एवं क्रूर डिनासॉरों के आतंक के कारण भारी-भरकम बदनवाले सभी निश्शस्त्र और अरक्षित प्राणियों की जान पर आ पड़ी थी, अतः प्रकृति ने कोई कोर-कसर न रखते हुए उसे यह कवच प्रदान किया था ! सबसे विचित्र बात तो यह थी कि इसके इस भारी-भरकम शरीर के संचालन या नियंत्रण के लिए दो स्वतंत्र और एक-दूसरे से काफी दूरी पर अवस्थित अलग-अलग वात-संस्थान थे--एक तो खोपड़ी में स्थित सत्तर-अस्सी ग्राम वजनी अगला दिमाग, जो उसकी देह के अग्रिम भाग का नियंत्रण करता था और दूसरा बदन के पृष्ठभाग में अवस्थित उससे काफी बड़ा नाड़ी-जंजाल, जो उस पृष्ठभागीय क्षेत्र का अधिपति था ! कैसी अनूठी योजना थी यह--मानो कोई दो इंजनोंवाला रोड-रॉलर यंत्र हो ?

जिरह-बख्तरवाले जीवों के अन्य नमूने--एंकिलोसॉरस और ट्राइसिरेटॉप्स

यह न समझो कि इस कवचधारी-वर्ग का केवल एक असफल नमूना बनाकर ही प्रकृति चुप हो गई हो ! क्योंकि आगे चलकर इस सम्बन्ध में और भी अनेकों प्रयोग इन्हीं युगों में उसके द्वारा किये जाने के प्रमाण हमें मिलते हैं । उनमें 'एंकिलोसॉरस' और 'ट्राइसिरे-टॉप्स' नामक दो अनूठे जीव विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । ये कवचधारी प्राणी अपने पूर्व-वर्ती स्टैगोसॉरस से अधिक समुन्नत प्रतीत होते थे । अब उन्होंने एक प्रकार के चलते-फिरते अजेय दुर्भेद्य किलों का-सा रूप धारण कर लिया था, जिन पर कतिपय सबसे बड़े हिंसक दानवों को छोड़कर अन्य किसी भी प्राणी के अस्त्र-शस्त्रों का कदापि कोई असर नहीं हो सकता था ! इनमें 'एंकिलोसॉरस', जो आजकल के 'आर्माडिलो' नामक कवचधारी जीव से मिलता-जुलता था, कछुए की तरह एक मोटी बख्तरनुमा दुर्भेद्य ढाल के भीतर अपना सारा बदन सुरक्षित किये हुए था । इस कवच पर तीखे मोटे शूल-समूह की भाँति पंक्ति-बद्ध अनेक तीखी खूँटियाँ-सी खचित थीं ! साथ ही अगल-बगल तथा सामने की ओर एक पंक्ति ऐसे बर्छीनुमा नोकीले सींगों जैसी रचनाओं की थी, जिन्हें देखकर बड़े-बड़े किलों के फाटकों के द्वार पर लगे हुए लौह शूलों की याद आ सकती थी ! यह तो हुई इसकी रक्षा-योजना । इसके अलावा आक्रमण के लिए प्रकृति ने इसकी दुम के रूप में (जिसके सिरे ने हड्डी की एक गदा का रूप ले रक्खा था) इसे एक विकट और अनूठा शस्त्र प्रदान कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रक्खा था। इस गदारूपी पूंछ की फटकार से जब वह किसी पर प्रहार करता होगा, तो फिर उसकी क्या कुशल रहती होगी!

दूसरा जीव 'ट्राइसिरेटॉप्स' इससे भी अधिक उन्नत श्रेणी का कवचधारी था। उसका आकार भी बड़ा था। उसकी लंबाई छ: से आठ मीटर तक और पीछे की ओर ऊँचाई ढाई-तीन मीटर तक की होती थी। जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, वाह्य आकृति में आधुनिक गैंडे-सा जान पड़नेवाला यह उरंगम त्रिश्रृंगी अर्थात् तीन नुकीले श्रृंगोंवाला एक भयावना जीव था। ये श्रृंग दो मीटर लंबे उसके भारी खोपड़े पर (दो तो मस्तक के ऊपर एवं एक गैंडे की तरह नाक पर) उगे हुए थे। इनके पीछे मानो बख्तर का-सा काम देनेवाली ऊँची उठी हुई एक विशाल अस्थि-रचना थी, जो इस प्राणी के रूप को और भी डरावना बना देती थी। मालूम होता है कि अपने इन शूल जैसे श्रृंगों द्वारा यह दानव शत्रुओं पर सीधा प्रहार करके केवल अपने भारी शीश के दबाव मात्र से उन्हें दबोच देता होगा, या श्रृंग पर उठाकर उन्हें उछाल दिया करता होगा! दुर्भाग्य से इन कवचधारियों को भी उन्नत मस्तिष्क का वरदान प्राप्त नहीं हुआ था। इनके दो मीटर लंबे खोपड़े में जो दिमाग था, वह एक बिल्ली के बच्चे के मस्तिष्क से भी लघु था! इसीलिए जीवन की प्रतियोगिता में अंततः इन्हें भी मात खाना पड़ी! इनकी कई ठठरियाँ अमेरिका में खड़ियाकालीन युग की चट्टानों में मिली हैं! उपर्युक्त दोनों ही कवचधारी प्राणी भयंकर शक्ल-सूरत के और पूर्णतया अस्त्र-शस्त्रसज्जित होते हुए भी शुद्ध शाकाहारी थे।

आज से करोड़ों वर्ष पूर्व के दानवीय नभचरों के कुछ नमूने—(ऊपर) टेरानोडॉन; (मध्य में) टेराडेक्टाइल; और (नीचे) आर्कियोनिस। ध्यान रहे, इनमें प्रथम दोनों उरंगम डिनासॉर थे, असली पक्षी नहीं।

बत्तखों की-सी चोंचवाले अनोखे उरंगम

बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप जीवधारी विकास-धर्मानुसार अपनी शक्ल-सूरत एवं स्वाभाविक गुण-धर्म आदि में आवश्यक फेरबदल करके एकदम नई जातियों को जन्म देते हैं। इसका एक उत्कृष्ट उदाहरण हमें करोड़ों वर्ष पूर्व के इसी दानव-युग में प्रकट होनेवाले 'एनाटोसॉरस', 'पेरासारोलोफस' एवं 'कोरिंथोसॉरस' नामक अनूठे उरंगमों के रूप में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मिलता है। इन प्राणियों ने अपने आपको अर्द्ध-जलचर जीवों की श्रेणी में लाकर क्रमशः बत्तखों की चोंच के-से लंबाकार मुख और उन्हीं के-से जालदार पैर विकसित कर लिये थे। ये प्राणी अपना अधिकांश समय पानी में ही बिताया करते रहे होंगे और संभवतः भाँति-भाँति के जल-पौधों या शैवालों पर बसर करते रहे होंगे! इनमें से कई तो दुम से सिर तक आठ-नौ मीटर तक लंबे थे और उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उनकी अद्वितीय दंत-पंक्तियों में कभी-कभी दो-दो हजार दाँत टँके रहते थे! दाँतों की ये कतारें क्या थीं, मानो पिसाई की चक्की का एक कारखाना-सा था, जिसमें वे अपने आहार को पीस-पीसकर उसकी लुगदी-सी बना देते थे! इनकी कई ठठरियाँ अमेरिका में मिली हैं।

इगुआनोडॉन, ब्रैकियोसॉरस और स्ट्रुथियोमिमस आदि अन्य अनोखे दानव

'इगुआनोडॉन' उरंगम-युग का अपने ढंग का सबसे मसखरी शक्ल-सूरत का प्राणी था। इस विशालकाय गोह का चेहरा बिना कानों के ऊँट या गदहे के चेहरे से बहुत-कुछ मिलता-जुलता था! उसकी लंबाई दस मीटर तक होती थी और खड़े होने पर उसकी ऊँचाई पाँच मीटर तक पहुँचते पाई जाती थी। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इसके हाथों की उँगलियों में अँगूठे का स्थान एक सींगनुमा भयावनी अस्थि-रचना ने ले रक्खा था। शायद यह विचित्र शूल उसका मुख्य अस्त्र रहा हो!

इसी के समकक्ष का अन्य एक विशालकाय प्राणी था 'ब्रैकियोसॉरस', जो कद के लिहाज से, संभवतः डिप्लोडोकस या जाएजेण्टोसॉरस जैसे कतिपय सबसे बड़े दानवराजों को छोड़कर, सारे प्राचीन और अर्वाचीन जंतु-जगत् में अपना सानी नहीं रखता था! इस महाकाय प्राणी की ऊँचाई पैरों से गरदन तक दस मीटर के लगभग थी और दुम से सिर तक की उसकी लंबाई का नाप था लगभग २० मीटर! उसकी एक-एक पसली तीन मीटर लंबी थी! तो फिर भला उसके वजन का क्या पूछना था! वह था पूरे ५० टन वजन के अस्थि-मांस का पहाड़! इसी का समकालीन एक छोटा-सा जीव 'स्ट्रुथियोमिमस' आकार में केवल डेढ़ मीटर ऊँचाई का होने पर भी अन्य डिनासॉरों को छकाने में बड़ा चतुर था। उसने अपना पेशा दूसरे डिनासॉरों के अंडे चुराकर उन्हीं से अपना गुजर-बसर चलाना बना रक्खा था!

दानव-युग का सबसे विकराल और क्रूर प्राणी--टाइरेनोसॉरस

उरंगम-काल के 'टाइरेनोसॉरस' नामक जंतु के मुकाबले का प्रलयंकर हिंसक जीव शायद सारे जंतु-जगत् के इतिहास में दूसरा नहीं हुआ! यह अमित बलशाली दैत्य अपने समसामयिक जीवधारियों के लिए साक्षात् कालमूर्ति-सा था! उसकी लंबाई पंद्रह-सोलह मीटर तक की थी और खड़ा होने पर उसकी जमीन से ऊँचाई लगभग छः मीटर तक पहुँचते पाई जाती थी! वह अपने भारी शरीर का सारा बोझ वृक्षों के तने जैसे अपने प्रचंड शक्तिशाली पिछले पैरों पर ही साधे रहता था, जिनकी तीनों उँगलियों के सिरे पर गरुड़ पक्षी के पंजे या बाघ के नखों से भी अधिक कराल तीन भयावने अंकुशवत् नख निकले हुए थे! इस पराक्रमी जीव के जबड़ों का जोड़ा क्या था, मानो साक्षात् यम की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चक्की जैसा वह था। वह गज भर की मुँहफाड़ का मीटर भर लंबा एक कराल यंत्र था, जिसमें दोहरी धारवाली करवाल-जैसे पंद्रह सेंटीमीटर लंबे दाँतों की पंक्तियाँ ऊपर-नीचे जड़ी हुई थीं! यही इसके आक्रमण का सबसे जबर्दस्त शस्त्र था। इस विकराल जंतु के सामने कोई भी समसामयिक प्राणी नहीं टिक सकता था। संभवतः, इसी के आतंक से तिलमिलाकर स्टैगोसॉरस, एंकिलोसॉरस और ट्राइसिरेटॉप्स जैसे जिरह-बख्तरधारी जंतुओं का वर्ग विकसित हुआ था।

फिर भी यह एक अचंभे की बात थी कि यह जानवर अधिक काल तक इस धरती पर अपना साम्राज्य स्थापित न रख सका! कहते हैं, जब उसे कुछ खाने को न बचा, तो वह अपने ही भाई-बंधुओं का शिकार करने लगा! इस प्रकार, संभवतः, आपस में ही लड़कर ये दैत्य समाप्त हो गए! इसके रिश्तेदारों में सबसे उल्लेखनीय नाम 'ऑलोसॉरस', 'किरेटोसॉरस और 'काम्पसोग्नेथस' के हैं, जो सब के सब घोर मांसाहारी प्राणी थे। इनमें आलोसॉरस टाइरेनोसॉरस का लकड़दादा-सा था। वह अपने जमाने का प्रचंड आततायी था। अन्य दोनों प्राणी छोटे आकार के थे। काम्पसोग्नेथस तो आधे मीटर आकार का ही था। यह तेज दौड़नेवाला जीव, संभवतः, आदिम पक्षियों का शिकार किया करता था!

नभचर दानव--'टेरानोडॉन', 'टेराडेक्टाइल' और 'आर्कियोर्निस'

इसी युग में, बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको बदलकर, बहुतेरे उरंगमों ने अपनी बाजुओं में चमगादड़ के-से डैने उपजा लिये और एक प्रकार के आदिम

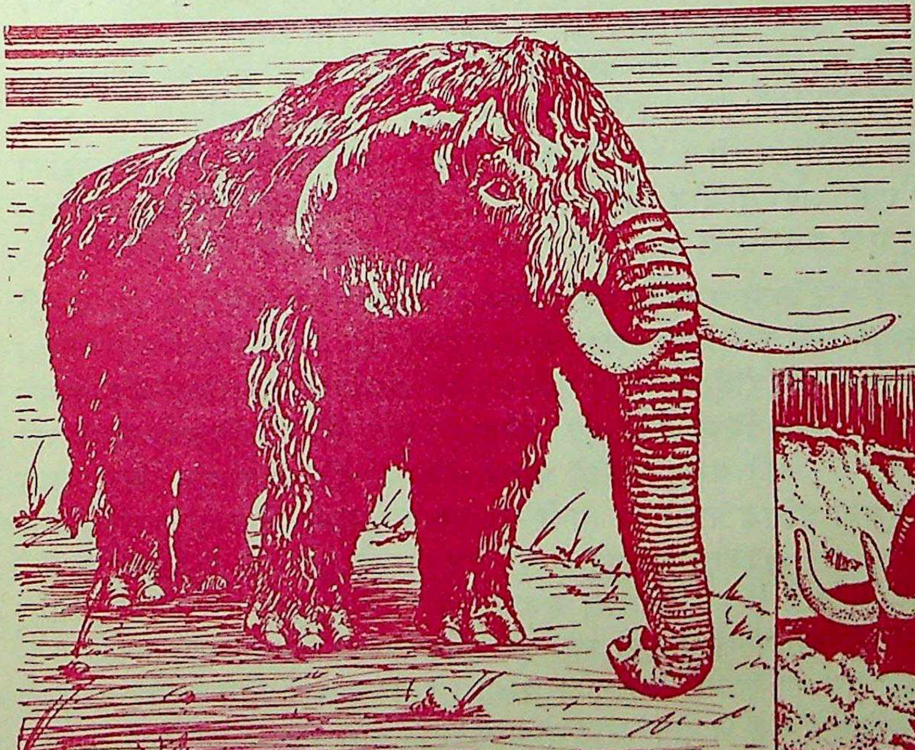

हाथी का पुरखा 'मैमथ'--पचास हजार वर्ष पूर्व के इस जीव के मांस-मज्जा-सहित पूरे-के-पूरे शव साइबेरिया की चिरंतन हिम-राशि में सुरक्षित दबे मिले हैं (देखो निचला चित्र)।

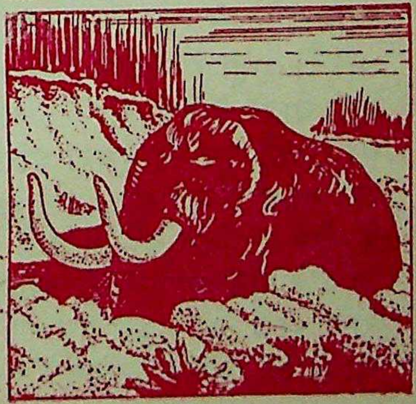

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पक्षियों का-सा रूप ग्रहण कर लिया। परन्तु इनके वे डैनेनुमा पंख उनकी हाथों की चौथी उँगली से पिछले पैरों की पिंडली तक फैले हुए नाव के पाल जैसे चमड़ी के विस्तार मात्र थे। हाँ, उनकी हड्डियाँ अवश्य पोली थीं। पर वे आज के पखेरुओं के पुरखे नहीं थे। इन उरंगमों में 'टेरानोडॉन' और 'टेराडेक्टाइल' के नाम प्रसिद्ध हैं। 'टेराडेक्टाइल' तो आकार में छोटे होते थे, पर 'टेरानोडॉन' एक बृहत्काय जीव था। यह एक आधुनिक ग्लाइडर जैसा था। उसका विस्तार पर फैलाने पर आठ-नौ मीटर तक का होता था। उसकी चोंच पेलिकन पक्षी की-सी लंबी होती थी और सिर पर एक ऊँची सींगनुमा रचना हुआ करती थी। पर इसकी चोंच में दाँत नहीं थे, जैसे कि टेराडेक्टाइलों में होते थे!

इसी युग में एक जीवधारी और हुआ, जो वास्तव में एक पंखदार आदिम पक्षी था। उसका मुँह तो उरंगमों का-सा था, जिसमें दंतपंक्तियाँ भी थीं, परंतु साथ ही साथ उसके पंख भी थे। यह प्राणी, संभवतः, उरंगमवंशज ही था, जिसके बदन पर के सिन्ने कालांतर में उड़ने में मदद देनेवाले अगल-बगल के एक जोड़ा पंख में परिणत हो गये थे। यह संभवतः एक कबूतर के आकार का रहा होगा। पर इसकी हड्डियाँ पक्षियों की अस्थियों की-सी पोली नहीं थीं! इसका एक पूर्वरूप 'आर्कियोप्टेरिक्स' कहलाता है और बाद का रूप 'आर्कियोर्निस'। इन्हीं से आगे चलकर असली पक्षियों का विकास हुआ।

उइंटाथेरियम, मेगाथेरियम, ग्लिप्टोडॉन, ऊनी गैंडा, कटारदन्ती व्याघ्र, मैमथ आदि स्तनपोषी

जब उरंगमों का युग समाप्त हुआ, तब भाँति-भाँति के स्तनपोषियों के आदिम रूप सामने आये। इनमें से एक था 'उइंटाथेरियम', जो गैंडें की शक्ल का और उतना ही बड़ा एक भारी-भरकम जीव था। इसके सिर, नाक तथा भौंहों की जगह पर तीन जोड़े सींग थे। इसके अलावा उसके मुँह में दोनों ओर सुअर के-से दाँत बाहर निकले हुए थे। इसी युग का एक अति भयावना जीव था 'मेगाथेरियम', जो रीछ या भालू का लकड़दादा था। पिछले पैरों पर खड़े होने की दशा में वह चार मीटर ऊँचा रहता था और उसकी कुल लंबाई लभभग छः मीटर थी। इस प्राणी की सबसे अनोखी विशेषता थी उसकी लंबी जीभ! अन्य एक अद्भुत जीव, जो इन्हीं दिनों विकसित हुआ, आधुनिक 'आर्मा-डिलो' की शक्ल का एक कवचधारी था, जिसे 'ग्लिप्टोडॉन' नाम दिया गया है।

आगे चलकर प्लिस्टोसीन काल के महान् हिमयुग का सूत्रपात होने पर, जब धरती का अधिकांश स्थलभाग बर्फ की मोटी चादर से ढक गया, तो स्तनपोषियों की विविध जातियाँ अपने बदन पर घने रोएँ, बाल या ऊन का-सा आवरण विकसित कर सामने आईं। इन्हीं में से एक था वर्तमान गैंडों का पूर्वपुरुष 'ऊनी गैंडा', जिसकी खाल घने ऊनी बालों से ढकी थी। इसकी थूथन पर दो तीक्ष्ण सींग थे, जिनमें से एक बेहद लंबा था। इसी युग का दूसरा प्रसिद्ध प्राणी था हाथी का महान् पुरखा 'मैमथ', जिसके बाल-दार खाल से मढ़े हुए मांस-मज्जासहित पूरे के पूरे शव साइबेरिया के हिमक्षेत्रों में बर्फ के नीचे सुरक्षित दबे मिले हैं! इस विशाल गजराज की ऊँचाई सवा चार मीटर अर्थात् आज के हाथियों से कहीं अधिक थी। इसी का एक पूर्ववर्त्ती रूप 'मेस्टाडान' नामक गज-राज था। परंतु इस युग का सबसे विकराल प्राणी तो था हमारे आज के शेर या बाघ का पुरखा 'व्याघ्र', जिसके मुँह के दोनों ओर दो कटारनुमा दाँत निकले हुए थे!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मनुष्य के निकट संबंधी

मदारी को बन्दर नचाते देखकर किसे कुतूहल नहीं होता ? प्रायः उसकी डुगडुगी की आवाज सुनते ही बच्चे और बूढ़े सभी उसके आसपास एक घिरौंदा-सा बनाकर खड़े हो जाते हैं। तालियाँ बज उठती हैं ! तब वही पुराना खेल, जिसे शायद बीसियों बार लोग देख चुके होते हैं, फिर से शुरू होता है। पैरों में घुँघरू बाँधे और कमर पर फटा-सा पाजामा या लँहगा पहने इन मानवसम प्राणियों को मटक-मटककर डमरू की गत पर नाचते देखकर लोग ठहाका मारकर हँस पड़ते हैं !

भला, इस तमाशे में लोगों की यह जबर्दस्त दिलचस्पी क्यों है ? क्यों बच्चे बन्दरों को देखते ही ताली पीटने लगते हैं और मुँह बना-बनाकर उन्हें चिढ़ाने में खुशी मानते हैं ? इसका एकमात्र कारण शायद यही है कि सारे जन्तु-जगत् में केवल इसी वर्ग के जीव ऐसे हैं, जो मनुष्य से काफी मिलते-जुलते हैं और वही सफलतापूर्वक बहुत-कुछ उसकी नकल कर सकते हैं ! वे हमारे ही भाई-बन्धु या नजदीकी रिश्तेदार जैसे जान पड़ते हैं ! इसीलिए तो वे 'वानर', 'बनमानुस', आदि नामों से पुकारे जाते हैं।

वानर मनुष्य के नातेदार ही हैं, पुरखे नहीं

परन्तु हमारे निकट सम्बन्धियों की श्रेणी में आकर भी वानर-वर्ग के ये जीव हमारे पुरखे नहीं हैं। अर्थात्, इन्हीं से मनुष्य की उत्पत्ति हुई होगी, यह मानना सरासर भूल है ! सच केवल इतना ही है कि जीवधारियों के वंश-विकास-वृक्ष पर फूट निकलनेवाली विविध महान् शाखा-

प्रशाखाओं या डालियों में वानर-वंश की यह प्रशाखा मनुष्य की शाखा से सबसे नजदीक या समकक्ष की एक पड़ोसी शाखा है। ये दोनों ही डालियाँ प्रधानभागीय अर्थात् प्राइमेट्स-समूह की हैं। अत: हमारे लिए इसमें लजाने की कोई बात नहीं, यदि हम बन्दरों और बनमानुसों को, अपने सगोत्र न मानते हुए भी, एक प्रकार के अपने नातेदार-से मान लें !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पृ० ६ पर दिये गये जन्तु-जगत् के वंश-विकास-वृक्ष की तरह यदि हम 'प्राइमेट्स' या प्रधानभागीय वर्ग के जीवधारियों के भी एक पृथक् वंशवृक्ष का चित्रण करें, तो उसके तने पर से पाँच मुख्य डालियाँ निकली हुई हमें दिखानी होंगी––सबसे ऊपर तो मनुष्य और बनमानुसों की पृथक्-पृथक् उन्नत शाखाएँ; तदुपरान्त मध्य में नई और पुरानी दुनिया के वानर-वर्गों की अलग-अलग विस्तृत शाखाएँ; और अन्त में सबसे नीचे 'ऐ-ऐ', 'टार्सियर', 'लीमूर', आदि उन अर्द्ध-वानर या वानरसम प्राणियों की विविध प्रशाखायुक्त डाली, जो इस प्रधानभागीय वंश-विकास-वृक्ष की सबसे पुरातन और आदिम शाखा कही जा सकती है। आओ, अब इन वर्गों के कुछ दिलचस्प प्रतिनिधियों को लेकर उनका विशेष वृत्तान्त तुम्हें सुनाएँ !

'ऐ-ऐ', 'टार्सियर', 'लीमूर' आदि अर्द्ध-वानर-समूह के प्राणी

अर्द्ध-वानर-समूह के सभी जीव––जिनके कतिपय लक्षण ही वानरों से मिलते हैं––उन प्रारंभिक प्रयोगों के उदाहरण हैं, जो कि प्रकृति द्वारा असली वानरों के निर्माण के पूर्व किये गये होंगे। इनके लगभग सब के सब नमूने अब पुरानी दुनिया ही के दायरे में शेष रह गये हैं। विशेषकर असली 'लीमूर' तो आज केवल मेडागास्कर द्वीप ही में मिलते हैं।

इस वर्ग का एक प्रख्यात प्राणी 'ऐ-ऐ' गिलहरी की-सी लंबी और घनी बालदार दुम, चूहे की तरह आगे निकले हुए मुँह, बड़ी-बड़ी आँखें, गोलाकार सिर, तीक्ष्ण नखवाली अँगुलियाँ और खरगोश या चूहे जैसे दंतक जीवों के-से कुतरकर खानेवाले दाँतों के कारण प्राणि-शास्त्र की एक पहेली-सा है ! बिल्ली के डीलडौल का यह अनोखा जीव केवल रात ही को निकलता है। वह पेड़ों ही पर रहता और अपनी संतान के हेतु एक बड़ा-सा घोंसला बनाता है। यह एक कीटभक्षी प्राणी है।

इसी वर्ग के दूसरे अनूठे प्राणी 'टार्सियर' को यदि हम दूर से देखें, तो मालूम देगा मानो अपनी उल्लू जैसी गोल आँखों पर उसने बड़े-बड़े गोल शीशोंवाला चश्मा चढ़ा रक्खा है ! डीलडौल में तो यह एक बड़े-से चूहे जैसा ही होता है, परन्तु ऐसा जान पड़ता है, मानो कलाकार कुदरत ने इसकी सृष्टि उस सारे सामान से की है, जो कि अन्य स्तनपोषियों के निर्माण से बचा रह गया था ! इसका सिर गोल, कान काफी बड़े, पिछले पैर अगले से बहुत अधिक लंबे और दुम भी बहुत लंबी है, जिसके सिरे पर बालों का एक गुच्छा वह उगाये हुए है। 'ऐ-ऐ' की तरह यह भी वृक्षवासी और केवल रात्रि को ही विचरण करनेवाला जीव है। प्रधानभागीय वंश के विकास-वृक्ष में इसकी प्रशाखा सबसे प्राचीन मानी जा सकती है। यह बोर्नियो, सुमात्रा, जावा, सेलीबीज और फिलीपाइन टापुओं में पाया जाता है।

तदनंतर अर्द्ध-वानरों की वह प्रशाखा हमें मिलती है, जिसमें कि लीमूर-वर्ग के असली जीव सम्मिलित हैं। इस वर्ग में पाँच प्रमुख नमूनों के प्राणी हैं। ये हैं–(१) 'स्लो लीमूर' या 'लोरिस'; (२) 'गैलागो' या 'बुश-बेबी'; (३) 'माउज-लीमूर'; (४) 'असली लीमूर';

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और (५) 'इंद्रिस', 'सिफाका' तथा 'आवाही'। इनमें 'स्लो लीमूर' या 'लोरिस', जिसे लजीला अर्द्ध-वानर कहा जा सकता है, बड़ा नाजुक और सुस्त जीव होता है। इस वर्ग में 'पाटो', 'स्लो लोरिस', 'स्लेंडर (या नाजुक) लोरिस' आदि कई उपजातियाँ होती हैं। इन समस्त जीवों की खाल पर का समूर मुलायम और ऊनी-सा होता है। आँखें इन सब की बड़ी-बड़ी होती हैं तथा हाथ-पैर समान लंबाई के होते हैं। दुम या तो कभी-कभी एकदम गायब रहती है या होती भी है तो बहुत छोटी-सी। इनमें 'नाजुक लोरिस' सबसे छोटे आकार का और बड़ा लजीला होता है। वह शायद एक चूहे के डीलडौल का होगा! ये सभी जीव अफ्रीका से लेकर, बंगाल, असम, बर्मा, स्याम, अनाम, मलय-अंतरीप और पूर्वी द्वीप-समूह तक पाये जाते हैं।

'गैलागो' केवल अफ्रीका ही में मिलता है! यह भी चूहे से लेकर बिल्ली तक के डीलडौल का एक वानरसम दुमदार प्राणी है। 'ऐ-ऐ' आदि की तरह यह भी वृक्षवासी तथा रात को विचरनेवाला जीव है। परन्तु 'स्लो लोरिस' की अपेक्षा यह बहुत अधिक फुर्त्तीला होता है। 'माउज-लीमूर' अपने नाम ही के अनुरूप छोटे चूहों से बड़े नहीं होते! ये केवल मेडागास्कर द्वीप ही में मिलते हैं। यहीं 'असली लीमूर' भी केन्द्रित हैं, जो कि बिल्ली के आकार के होते हैं और ऊनी समूर की-सी अपनी रोमावली के लिए मशहूर हैं। इनमें का एक प्राणी 'छल्लेदार दुमवाला लीमूर'

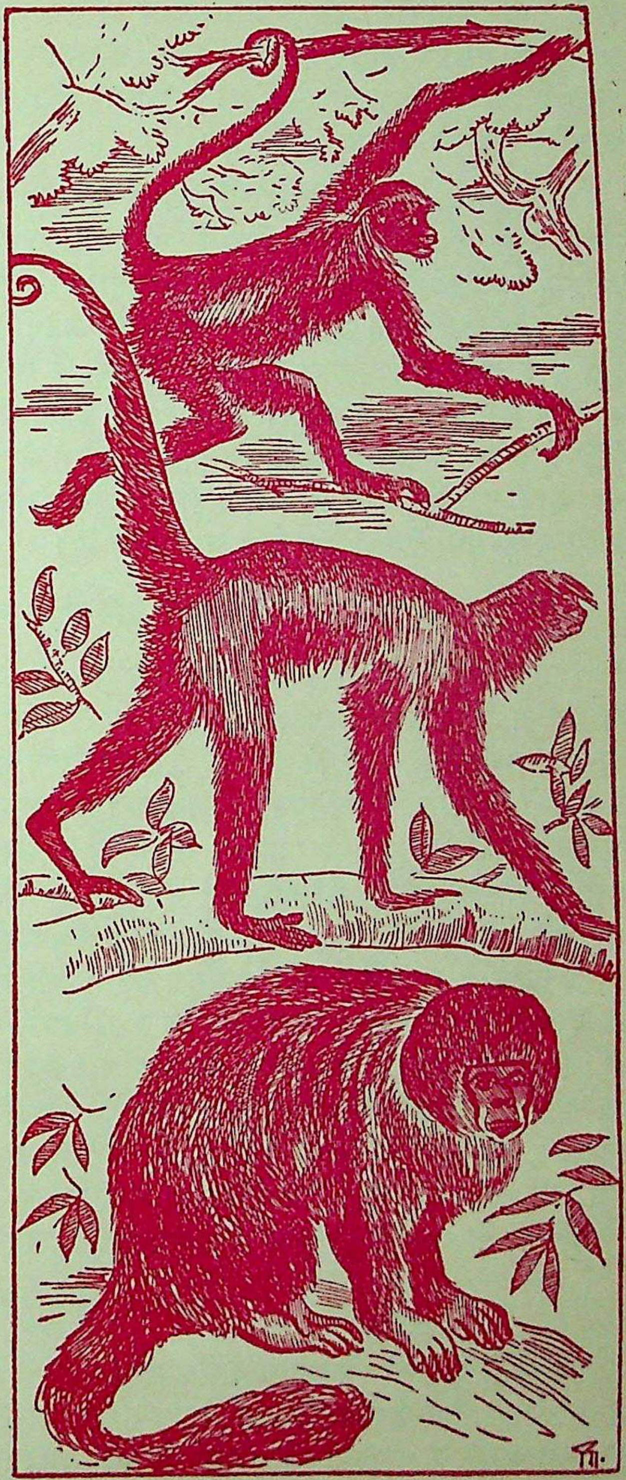

नई दुनिया के वानर—(ऊपर) 'हाउलर' या हुक्कू वानर; (बीच में) मकड़ी-वानर; (नीचे) साकी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है, जिसकी सलेटी रंग की दुम पर बड़े सुन्दर काले रंग के दस या बारह छल्ले बने रहते हैं ! इसके विपरीत, दूसरी जातियों के लीमूरों की दुमें केवल एक ही रंग की होती हैं। अन्य एक मशहूर लीमूर 'रफेड लीमूर' कहलाता है। इसकी खाल का समूर अत्यंत घना होता है और दुम लम्बी तथा झाड़ू की-सी होती है। इसका सिर कुत्ते का-सा होता है और कानों पर बालों के गुच्छे होते हैं।

अन्तिम वर्ग के 'इंद्रिस', 'सिफाका' और 'आवाही' नामक जीव लीमूर-समूह के सबसे उन्नत नमूने हैं। 'इंद्रिस' के पिछले पैरों की लम्बाई अगले पैरों से काफी बड़ी होती है। 'आवाही' को ऊनी लीमूर भी कहते हैं, क्योंकि उसके बदन पर का समूर बहुत ही घना और ऊन का-सा होता है। उसकी दुम शेष सारे बदन से अधिक लम्बी होती है और आँखें बहुत बड़ी पाई जाती हैं। 'सिफाका' ऊनी लीमूरों से काफी बड़े होते हैं ! इनकी खाल पर का आवरण ऊनी न होकर बालदार होता है। देखने में इनकी सूरत लोमड़ियों की-सी प्रतीत होती है और रंग प्रायः सफेद-चितकबरा होता है, जिस पर लाल-पीले या काले धब्बों की छटा छाई रहती है। ये अन्य अर्द्ध-वानरों जैसे रात्रिचर न होकर प्रायः सुबह-शाम के वक्त काफी दौड़-धूप में लगे हुए देखे जा सकते हैं।

नई दुनिया के वानर

तुम कहोगे कि बन्दर तो सब एक जैसे हैं, फिर नई-पुरानी दुनिया के वानरों का व्यर्थ का यह भेदभाव क्यों ? जीव-वैज्ञानिकों द्वारा किये गये इस वर्गीकरण की सार्थकता का मर्म हम तब समझते हैं, जब कि एशिया और अफ्रीका के वानरों तथा अमेरिका की नई दुनिया के बन्दरों के बीच के कतिपय मौलिक भेद हमें ज्ञात होते हैं। इनमें एक सबसे बड़ा भेद यह है कि पुरानी दुनिया (अर्थात् एशिया, अफ्रीका आदि) के वानरों के मुँह में गालों के अन्तर्गत कतिपय ऐसी थैलियाँ बनी होती हैं, जिनमें वे अपनी खाई हुई चीज अल्पकाल के लिए धरे रख सकते हैं। साथ ही उनके नथुने भी एक-दूसरे से काफी नजदीक या सटे हुए-से रहते हैं। उनके हाथों के अँगूठे की रचना सुव्यवस्थित-सी होती है। इसके विपरीत नई दुनिया (अमेरिका) के वानरों में ये खूबियाँ नहीं होतीं। उनकी एक खास विशेषता, जो कि पुरानी दुनिया के वानरों में नहीं पाई जाती, यह है कि उनमें से अधिकतर की दुमें बल खाकर डालियों के आसपास लपेटी जा सकती हैं। इस प्रकार दुम को किसी शाख में लपेटकर, इस वर्ग के बन्दर पेड़ों पर से उछलते समय उससे एक अतिरिक्त हाथ का-सा काम लेते पाये जाते हैं ! 'मार्मोसेट' और 'टेमेरिन' नामक उपवर्गों के प्राणियों को मिलाकर, नई दुनिया के वानरों की कुल दस जातियाँ मिलती हैं।

'मार्मोसेट' और 'टेमेरिन'

'मार्मोसेट' की वेशभूषा देखने लायक होती है। उसका आकार चूहे या गिलहरी जितना होता है। इस वानर का चेहरा तो काला होता है, पर उसके बीच सफेद रंग की छोटी-सी नासिका सुशोभित रहती है और कानों पर सफेद या काले बालों के दो गुच्छे खिले रहते हैं। यह अनूठा प्राणी अपनी सुन्दरता के कारण प्रायः पालतू बना लिया जाता है। कहते हैं, खुश होने पर यह हँसता-मुसकराता-सा जान पड़ता है और जब कभी रंजीदा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होता है, तो आँसू टपकाने लगता है! टेमेरिन भी मार्मोसेट जैसा अति लघुकाय दर्शनीय प्राणी होता है, जिसका आकार मुश्किल से बीस-बाईस से तीस-बत्तीस सेंटीमीटर का होता होगा। इसकी भी वेशभूषा बड़ी चित्र-विचित्र होती है। इसकी चार जातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें 'रेशमी टेमेरिन' रेशम के-से अपने मुलायम बालों के कारण बड़ा ही मनोहर जान पड़ता है। कुछ के विचित्र प्रकार की मूँछें-सी भी निकली देख पड़ती हैं। ये दोनों दरअसल वानरसम जीव हैं।

'रात्रिचर', 'साकी', 'गिलहरी-वानर', 'यूकारी' आदि

नई दुनिया के वानर-वर्ग के असली बन्दरों की 'रात्रिचर', 'तिति', 'गिलहरी-वानर', 'साकी', 'हाउलर या हुक्कू-वानर', 'कैपुचिन', 'ऊनी वानर', 'मकड़ी-वानर' आदि अनेक उपजातियाँ हैं, जो कि उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका के समस्त सम-शीतोष्ण और उष्ण भागों के वनप्रांतों में बिखरी पाई जाती हैं। 'रात्रिचर' वानरों के ललाट पर प्रायः तीन आड़ी काली रेखाएँ होती हैं। इनके कुक्कुर-दंत बहुत बड़े और निचले कर्तनक काफी आगे निकले हुए होते हैं। ये रात्रि को ही विचरते हैं, इसी से इन्हें 'रात्रिचर' नाम दिया गया है। 'तिति-वानरों' की वेशभूषा गहरे कत्थई रंग के बदन, काले ललाट तथा पीले रंग के हाथ-पैरों के कारण अत्यन्त दर्शनीय होती है। कई के बदन का ऊपरी भाग तो भूरा-सलेटी

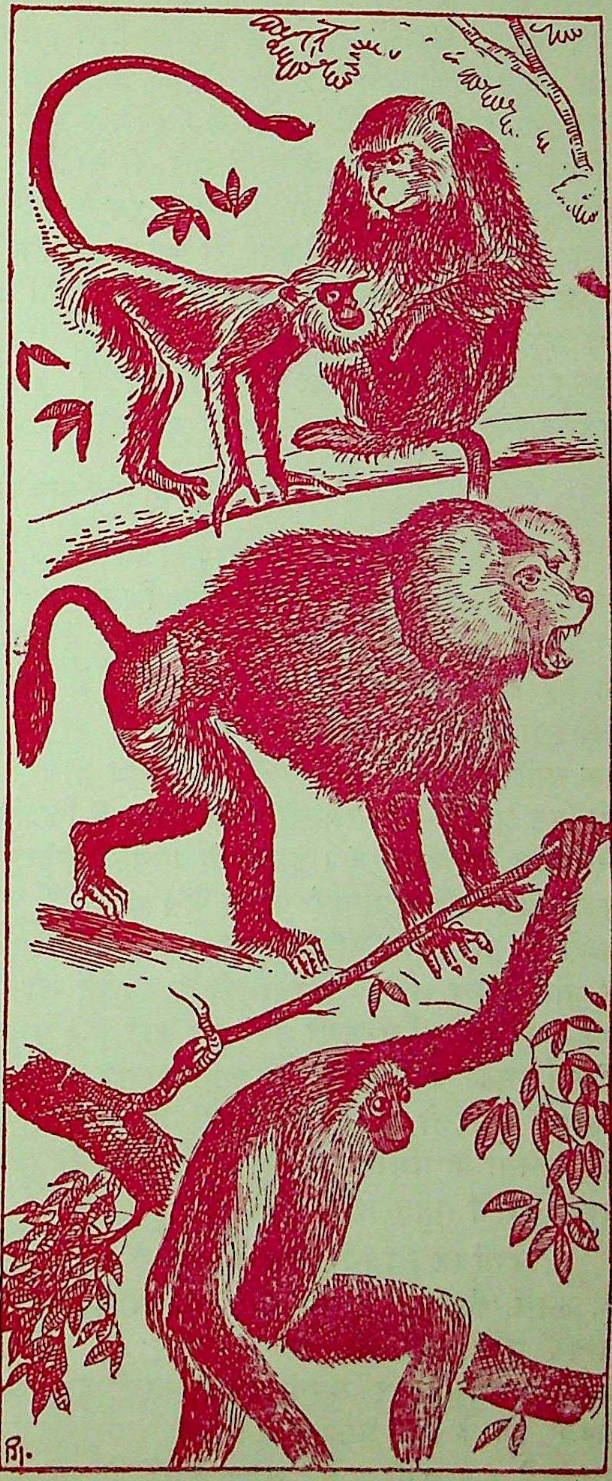

पुरानी दुनिया के वानर—(ऊपर) लंगूर और बन्दर; (बीच में) पीला बबून; (नीचे) काला गिबन।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एवं निचला चटक नारंगी रंग का होता है। इन्हीं के भाई-बंधु 'गिलहरी-वानर' भी अपने चित्र-विचित्र चटकीले-भड़कीले रंगों के लिए मशहूर हैं। इनके सिर बड़े सुडौल और गोल तथा अँगूठे काफी छोटे होते है। 'साकी' वानर का भी रूप देखने योग्य होता है। इसकी विविध उपजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें कई के सिर पर के बाल एक प्रकार की टोपी की-सी शक्ल लिए रहते हैं। कई ऐसे भी होते हैं, जिनके कि सिर पर बाल होते ही नहीं! कई के चेहरे चटक लाल या सेंदुरिया रंग के होते हैं, तो कई काले मुँहवाले भी होते हैं। उनके बदन पर के बालों का तो कहना ही क्या! कोई चटकीले कत्थई-लाल, तो कोई भूरे-सफेद! कोई पीले और सुनहले होते हैं, तो कोई सलेटी रंग की मिरजई पहने हुए-से देख पड़ते हैं! कई की नाक यदि लाल हैं, तो दूसरों की एकदम चूने जैसी सफेद हैं! इन रंग-बिरंगे वानरों की पूँछ भी विचित्र होती है। वह प्रायः घनी, बालदार और बिना बल खाई हुई होती है। इसी वर्ग की एक जाति 'यूकारी' के नाम से मशहूर है।

हुक्कू और मकड़ी-वानर

नई दुनिया के वानरों की उपर्युक्त शाखा के 'साकी', 'यूकारी', 'तिति-वानर', 'रात्रिचर वानर', 'गिलहरी-वानर' आदि जीव जितने सुन्दर होते हैं, उतना ही उन्हीं का एक चचेरा भाई-बन्धु 'हाउलर' या हुक्कू वानर देखने में भौंडा और बदशकल पाया जाता है! बंदरों की यह जाति मध्य और दक्षिणी अमेरिका में कसरत से फैली हुई है और इसकी एक मुख्य विशेषता है इसकी भयावनी 'हूक्-हूक्' की आवाज! यह आवाज कई किलोमीटर की दूरी तक सुनी जा सकती है! सचमुच ही इन वानरों ने निरंतर अभ्यास द्वारा अपने स्वर-यंत्रों को इस प्रकार शक्तिशाली बना लिया है कि ये अद्भुत गहराई और ऊँचाई के स्वर निनादित कर सकते हैं। इनकी ये आवाजें केवल नर द्वारा ही प्रसारित की जाती हैं और सुबह-शाम अधिक सुनाई पड़ती हैं। कहते हैं, जब इनमें के कई बन्दर एक साथ चीखने लगते हैं, तो उनका सम्मिलित निनाद सिंह की दहाड़ को भी मात करने लगता है! प्रायः ये जीव केवल अपनी भावभंगियों के प्रदर्शन और भाँति-भाँति की मुखमुद्राओं के सहारे ही एक-दूसरे को संकेत करते हुए पाये जाते हैं। परन्तु इस वर्ग के सभी जीव बदशकल नहीं होते। इनकी कोई चौदह उपजातियाँ पाई जाती हैं। उनमें से एक लाल हुक्कू बन्दर है, जिसकी सुनहली नारंगी एवं गहरी ताम्रवर्णीय चटकीली पोशाक अति आकर्षक होती है। नई दुनिया के समस्त वानरों में ये हुक्कू ही सबसे बड़े डीलडौल के होते हैं। परन्तु इनमें मादा नर से बहुत छोटी होती है।

उपर्युक्त चित्र-विचित्र वानरों के अलावा, नई दुनिया की और भी जो बन्दर-जातियाँ हैं, उनमें 'कैपुचिन' नामक गोल माथेवाले हृष्ट-पुष्ट काले-भूरे वानर, उनसे बड़े 'ऊनी बन्दर' और इन्हीं की एक उपजाति के 'मकड़ी-वानर' के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें 'मकड़ी-वानर' अपनी दुबली-पतली देह, लम्बे हाथ-पैर और लिपट जानेवाली बेहद लम्बी दुम के लिए प्रख्यात हैं। 'ऊनी बन्दर' की देह ऊन जैसी सघन रोमावली से आच्छादित रहती है। ये सभी वानर अनेक वर्णों के पाये जाते हैं। इनकी एक मुख्य विशेषता यह है कि इनके हाथ-पैरों में अँगूठा या तो होता ही नहीं, या होता भी है तो केवल नाममात्र का एक निशान जैसा ही होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुरानी दुनिया के वानर

पुरानी दुनिया के वानरों को दो बिरादरियों में बाँटा जा सकता है। एक में 'बबून', 'मंगेबी', 'मैकेक' और 'काले एप' सम्मिलित हैं। दूसरी में 'गुरेजा' और 'लंगूर' को शरीक किया जा सकता है। इसमें प्रथम समूह के सभी बन्दर गालों के भीतर की थैलियों और नितम्बस्थान पर भौंडी निर्लोम मांसल रचनाओं से युक्त पाये जाते हैं। दुमें किसी-किसी में तो काफी लम्बी और किसी में बहुत छोटी या एकदम गायब होती हैं! इस वर्ग के कुत्ते के-से मुँह के 'बबून' नामक प्राणी शायद पुरानी दुनिया के वानरों में सबसे निम्न कोटि के माने जा सकते हैं। इनके चेहरे काफी बड़े और विकसित होते हैं। हाथ-पैर समान लम्बाई के पाये जाते हैं। ये चारों हाथ-पैरों के बल चौपायों की तरह जमीन पर पूरी तरह तलुवे जमाकर चलते हैं और ज्यादातर धरती पर ही रहना पसन्द करते हैं।

'ओरेङ्ग-उटाङ्ग' नामक बनमानुस —सघन वनों में पाया जानेवाला यह वृक्षवासी प्राणी एक बड़ा सा घोंसला बनाकर रहता है।

बबून-वर्ग—पीले बबून, मैंड्रिल आदि

बबूनों की कई जातियाँ पाई जाती हैं, जो अरब से लेकर पूर्वी अफ्रीका तक फैली हुई हैं। इनमें से से एक प्रख्यात जाति 'पीले बबून' की है, जो अपने हरित-पीत वर्ण के समूर, सिंह की-सी लम्बी पूँछ और भयावनी आकृति के लिए मशहूर हैं। इनके नर मादा से बहुत बड़े होते हैं और खतरे की स्थिति में वे अपनी जान की बाजी लगाकर उनकी रक्षा के लिए दौड़ पड़ते हैं। ये बड़े ही निर्भीक, छेड़ने पर आगबबूला हो जानेवाले, खतरनाक जीव होते हैं। कहते हैं, तेंदुए और चीते तक उनसे बेहद डरा करते हैं! इनकी एक विशेषता इनके नितम्बस्थान पर गहरे गुलाबी रंग की वे गद्दीदार मांसल रचनाएँ होती हैं, जिनके कारण पीछे की ओर से ये बड़े भौंडे जान पड़ते हैं। नरों के सिंह की-सी अयाल भी पाई जाती है। ये वानर प्रचण्ड शक्तिशाली, दीर्घजीवी और तेज निगाहवाले होते हैं। भाँति-भाँति की फल-तरकारियों के अलावा कतिपय कीड़ों को भी खा लेने के ये आदी हैं। इनके कुक्कुर-दन्त बहुत लम्बे और भयावने होते हैं।

इसी बृहत् समुदाय का एक प्रसिद्ध सदस्य 'मैण्ड्रिल' नामक चित्रविचित्र वानर है। उसके चेहरे और बदन पर की प्राकृतिक रंगीन चित्रकारी देखते ही बनती है। ऐसा जान पड़ता है, मानो बन्दर का रंग-बिरंगा कृत्रिम चेहरा लगाकर रामलीला में भाग लेनेवाले किसी स्वाँगी अभिनेता का हुबहू प्राकृतिक प्रतिरूप ही वह हो! इस अनोखे कुदरती बहुरूपिये की नाक सिरे और मध्य भाग पर चटकीले लाल रंग की होती है। उसके आस-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पास दोनों ओर चमकीले नीले रंग की दो कड़ी-सी ऊँची उठी हुई रचनाएँ चेहरे पर बनी पाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त इसके खुले हुए नितम्बीय पृष्ठभाग पर भी लाल, सेंदुरिया, बैंजनी एवं नीले-पीले सभी वर्णों के घालमेल की अनोखी चित्रकारी का एक नमूना-सा बना दिखाई देता है! तारीफ की बात तो यह है कि उसकी यह रंग-बिरंगी छटा उसकी खाल या चमड़ी में निखरी रहती है! इसकी बालदार पोशाक का रंग भी कम भड़कीला नहीं होता। वह हरित जैतूनी से लेकर कत्थई, रुपहले सलेटी और काले तक के अनेक वर्णों की छाया छितराये रहती है। सबसे आकर्षक छटा उसकी दाढ़ी की होती है, जो ठुड्ढी से नीचे पीले रंग के एक गुच्छे के रूप में दो सुघड़ भागों में बँटी हुई-सी रहती है! इसके कानों के पीछे के बाल भी, जो दुग्धधवल वर्ण के होते हैं, कोई कम अनोखे नहीं लगते। परन्तु इसका यह विचित्र रूप केवल नर की ही विशेष सम्पत्ति है, मादा मैण्ड्रिल में उसका लवलेश भी नहीं पाया जाता। 'मैण्ड्रिल' खड़ा होने की दशा में कम से कम डेढ़ मीटर ऊँचा दिखाई देता है। अन्य बबूनों की भाँति वह भी महान् शक्तिशाली, क्रोधी और निर्भीक होता है। वह अफ्रीका के पश्चिमी तटवर्ती गिनी प्रदेश में बहुतायत से पाया जाता है। मैण्ड्रिल ही का एक छोटा भाई 'ड्रिल' नामक बबून होता है। उसका चेहरा घोर काला और नितम्ब पर के मांसल अंश चटक सेंदुरिया होते हैं। इन्हीं से मिलता-जुलता एक कृष्णकाय वानर सेलीबीज द्वीपों में मिलता है, जिसकी दुम केवल दो-तीन सेंटीमीटर लम्बी होती है! इस 'काले एप' के भी नितम्ब भागों पर बबूनों की-सी रक्तवर्णीय मांसल गद्दी प्रदर्शित होती है!

मैकेक-वर्ग—'बारबेरी एप', भारतीय बन्दर आदि

मैकेक-वर्ग के वानर बबूनों से इस अर्थ में पृथक् होते हैं कि एक तो उनके चेहरे छोटे होते हैं, दूसरे उनमें दुम का कोई ठिकाना नहीं होता! किसी में वह बेहद लम्बी, तो किसी में एकदम छोटी; किसी में मझोले आकार की, या सिंह की-सी, तो किसी में एकदम अदृश्य भी होती है। इस वर्ग के बन्दर मोरक्को, अल्जीरिया, स्पेन तथा जिब्राल्टर से लेकर तिब्बत और जापान तक विस्तृत हैं। विशेषकर पूर्वी द्वीप-समूह और सेलीबीज द्वीप तो इनसे भरे पड़े हैं। इस समूह का एक महत्वपूर्ण उदाहरण अल्जीरिया, मोरक्को, स्पेन तथा जिब्राल्टर का वासी 'बारबेरी एप' है। वह अपने भारी-भरकम शरीर और बाहरी दिखावे में दुम के एकदम अभाव के लिए प्रख्यात है। अन्य मैकेक-वर्ग के वानरों में सेलीबीज टापू के 'काले बन्दर'; हिन्द-चीन, बर्मा और असम के 'भूरे बन्दर'; छोटी दुमवाला 'जापानी बन्दर', और मलय अन्तरीप, बर्मा तथा टेनासरीम प्रदेश का सुअर की-सी दुमवाला भारी-भरकम 'साँवला बन्दर' उल्लेखनीय हैं। परन्तु हमारे लिए तो इस वर्ग का महत्व सबसे अधिक केवल इसलिए है कि हमारे देश के वानरों की दो मशहूर जातियाँ—उत्तरी भारत का साधारण 'सुनहला-भूरा बन्दर' एवं दक्षिणी भारत का 'बालों की टोपीवाला सलेटी रंग का बन्दर'—इसी वर्ग के अन्तर्गत सम्मिलित हैं। जीव-वैज्ञानिकों ने इनका वर्गीकरण 'ह्रीसस' एवं 'सिनिका' इन दो उपवर्गों में किया है। प्रथम जाति के बन्दर हिमालय से लेकर मध्य प्रदेश के अंतिम छोर तक फैले पाये जाते हैं। इसके बाद दक्षिण भारतीय वानरों का इलाका आरम्भ होता है, जो ठेठ लंका तक व्याप्त है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन बन्दरों में, उत्तर भारत के वानरों के आकार-प्रकार तथा उनके रूप का परिचय देने की भला हमारे यहाँ किसे आवश्यकता हो सकती है ! ये तो हमारे इतने जाने-पहचाने हुए हैं कि बच्चा-बच्चा तक उनकी शक्ल से वाकिफ है। हाँ, दक्षिण भारत के बन्दर स्वभाव में तो अपने उत्तर भारतीय चचेरे भाइयों के ही समान होते हैं, परन्तु वे कद में तनिक छोटे होते और उनका रंग कुछ हरितवर्ण भूरा-सा या रुपहला साँवला-सा होता है। इनकी दुम भी अपेक्षाकृत ज्यादा लम्बी होती है और सिर के बाल इतने घने तथा इस प्रकार से व्यवस्थित होते हैं कि उनकी एक टोपी की-सी शक्ल बन जाती है। भला, अपने देश के इन दोनों ही प्रकार के बन्दरों की रोजमर्रे की शैतानियों और तरह-तरह के नटखटपन की उनकी अनेकों करतूतों से कौन हमारे यहाँ परिचित नहीं हैं ! जहाँ वे मदारी की कमाई के साझेदार बनकर मनुष्य की तरह-तरह की नकलें उतारने की योग्यता रखते हैं, वहाँ हमारे घरों में घुसकर चुपके किसी भी चीज को उठा ले जाने से भी नहीं चूकते !

मैकेक-वर्ग के वानर जहाँ एशिया, अफ्रीका और योरप के कुछ भागों में फैले हुए हैं, वहाँ मंगेबी और गुइनान जाति के बन्दर अफ्रीका ही की परिधि में सीमित हैं। मंगेबी आकार-प्रकार में मैकेक से अधिक दुबले-पतले और नाजुक होते हैं। इनके हाथ-पैर अधिक लम्बे और दुमें भी अपेक्षाकृत लम्बी होती हैं। इनमें सबसे सुन्दर 'सफेद गलेवाला मंगेबी' होता है, जिसके सिर के बाल कुम्मैत रंग के होते हैं। एक मंगेबी एकदम काजल-जैसा काला भी होता है। 'गुइनान' वानर लंबी दुम वाले, चित्र-विचित्र रंगों के और मुख्यतः वृक्षवासी जीव होते हैं। इनकी एक जाति हरे रंग की होती है। दूसरे लाल, सफेद, सलेटी रंगों के पाये जाते हैं।

'गुरेजा' और 'लंगूर'

पुरानी दुनिया के वानरों की दूसरी महान् बिरादरी—जो कि बबून, मैकेक, मंगेबी, काले एप तथा गुइनान आदि वानरों की प्रथम बिरादरी से एकदम भिन्न है—'गुरेजा' और 'लंगूर' नामक दो उपवर्गों के कपियों की है, जो बहुत लम्बी पूँछवाले बड़े आकार के होते हैं ! लंगूर केवल एशिया में पाये जाते हैं और गुरेजा अफ्रीका तथा उसके समीपवर्ती टापुओं में ही। लंगूरों में

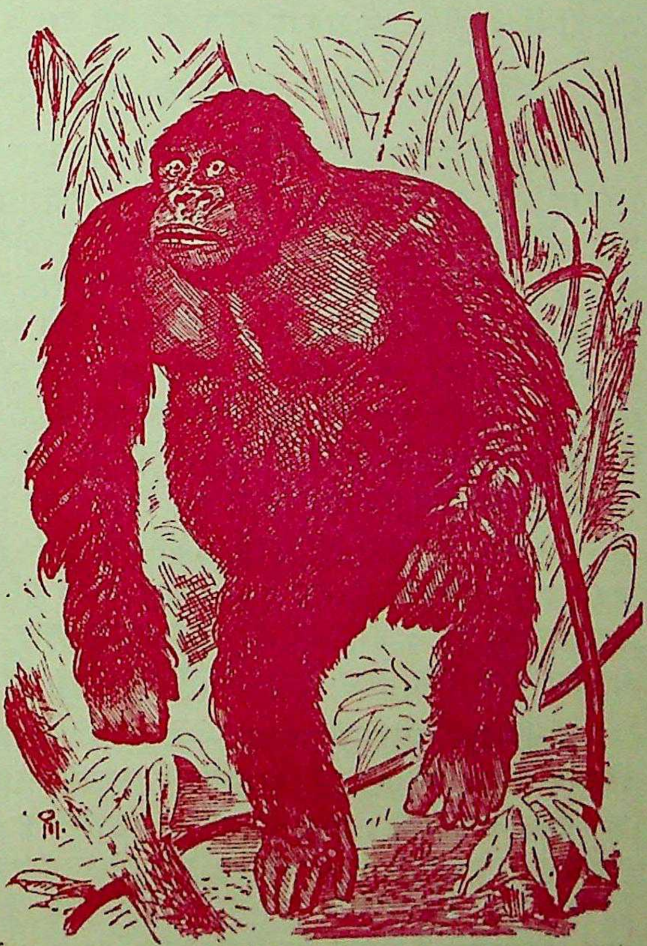

मनुष्य के निकट संबंधियों में सबसे अधिक शक्तिशाली, भयावना और विशालकाय प्राणी —गोरिल्ला।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गालों की थैलियाँ बिल्कुल ही नहीं होतीं। इनकी कई उपजातियाँ हैं। इन्हीं में की एक उपजाति हमारे देश के प्रसिद्ध हनुमान-लंगूरों की है। ये काले मुँह के रुपहले सलेटी या साँवले-भूरे रंग के वानर अपनी लम्बी दुम की बदौलत एक से दूसरे पेड़ तक या एक मकान से दूसरे मकान तक तेरह मीटर तक की छलाँग मारते देखे जा सकते हैं! ये साधारण बन्दरों से ज्यादा ताकतवर होते हैं, परन्तु उतने चालाक और उपद्रवी नहीं होते। ये गिरोह या समूह ही में रहते हैं और फल-फूल, अनाज तथा पत्तियों के अलावा कीड़े और अण्डे तक खा लिया करते हैं। भारतवर्ष में इनका गढ़ देश का मध्यवर्ती भाग है। इसी वर्ग का 'हिमालयी लंगूर' आकार में सबसे बड़ा और भूरे-सलेटी बदन तथा श्वेत मस्तक-वाला होता है।

लंगूरों की अन्य कई उपजातियाँ बोर्नियो, सुमात्रा, हिन्द-चीन, अनाम, पूर्वी तिब्बत तथा मध्य चीन तक फैली पाई जाती हैं, जिनके वर्ण चटकीले बादामी-कुम्मैत से लेकर घोर काले तक होते हैं। बोर्नियो के लम्बी नाकवाले लंगूर की नासिका, विशेषकर नर लंगूर में, असाधारणतया लम्बी होती है। गुरेजा काले, लाल और सफेद-काले इन तीन उपवर्गों में बँटे हुए हैं। इन वानरों के बदन की केशराशि बहुत अधिक लम्बी होती है। वह दोनों बाजू में इस प्रकार नीचे लटकती देख पड़ती है जैसे याक में।

बनमानुस––गिब्बन, सायमाङ्ग, ओरेङ्ग-उटाङ्ग, गोरिल्ला और चिम्पेन्जी

प्रधानभागीय जीवधारियों अर्थात् प्राइमेट्स-समूह की (मनुष्य को छोड़कर) सबसे समुन्नत और अन्तिम शाखा 'बनमानुसों' अर्थात् वानर-वर्ग के मानवसम प्राणियों की है। इस वर्ग के अन्तर्गत 'गिब्बन' और 'सायमाङ्ग' नामक दो निम्न कोटि के तथा 'ओरेङ्ग-उटाङ्ग', 'गोरिल्ला' और 'चिम्पेन्जी' नामक तीन उच्च कोटि के मानवसम प्राणी सम्मिलित हैं। ये सब वृक्षवासी जीव हैं, परन्तु इनकी एक खूबी यह है कि जब ये धरती पर रहते हैं, तो अपने पैरों पर मनुष्य की तरह कुछ झुके हुए-से खड़े रह सकते हैं। इनके हाथ इतने लम्बे होते हैं कि इस खड़े रहने की अवस्था में भी इनकी उँगलियाँ जमीन को छू सकती हैं। इन प्राणियों के गालों में वानरों की-सी थैलियाँ नहीं होतीं। न बाहरी दिखावे में उनके दुम या पूँछ ही पाई जाती है। गिब्बन को छोड़कर, नितम्ब-भागों में बबूनों की-सी खुली मांसल रचनाएँ भी इनमें किसी के नहीं होतीं। इस वर्ग के प्राणियों की जो सबसे बड़ी विशेषता है, वह है दरअसल उनके मस्तिष्क का बृहत् आकार, जो मनुष्य की उन्नतावस्था का न होने पर भी सारे प्राणि-जगत् में अन्य सभी जीवधारियों से अधिक समुन्नत और बड़ा होता है। इनके कुक्कुरदन्त, विशेषतया नरों में, काफी बड़े होते हैं।

'गिब्बन' और 'सायमाङ्ग'––ये बनमानुस-वर्ग के सबसे निचले सोपान के प्राणी हैं। गिब्बन मनुष्य की तरह बिना झुके हुए एकदम सीधा टटार खड़ा रह सकता है और वैसे ही चल-फिर सकता है। अन्य बनमानुस कुछ झुके-से खड़े होते हैं। यह अपने लम्बे हाथों से डालियों पर झूलता हुआ चार-छः मीटर तक के फ़ासले एक ही हाथ में पार कर लेता है! सरकस के खिलाड़ियों की-सी इसकी यह हवाई यात्रा देखने योग्य होती है। इन बनमानुसों में हमारे देश के असम प्रान्त का 'हुक्कू' या 'उलूक वानर' प्रायः जन्तु-शालाओं में अपनी 'हु-उक्' आवाज से दर्शकों का मनोरंजन करते देखा जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन दोनों के सिर गोल तथा हाथ पैरों से बहुत ज्यादा लम्बे होते हैं। ये शत-प्रतिशत वृक्षवासी जीव हैं। गिब्बन छोटे आकार के और दुबले-पतले होते हैं—कुल पौन मीटर लम्बे; जब कि सायमाङ्ग एक मीटर से भी ज्यादा कद के पाये जाते हैं। गिब्बनों की कोई बारह-तेरह उप-जातियाँ हैं, जिनमें से कुछ बिल्कुल काली हैं, कुछ पिलौंही-भूरी, कुछ सफेद हाथ तथा भौं वाली और अन्य सलेटी रंग की मिलती हैं। ये जातियाँ हमारे देश के असम और भूटान प्रदेशों से लेकर सुदूर पूर्व में मलय-प्रदेश, हिन्द-चीन, यूनान एवं पूर्वीय द्वीप-समूह तक फैली हुई हैं। 'सायमाङ्ग' नितान्त काले वर्ण ही के होते हैं। वे मलय-प्रदेश सुमात्रा, पागी-द्वीप-समूह और टेनासरीम प्रदेश में पाये जाते हैं।

बनमानुसों में सबसे अधिक बुद्धिमान प्राणी—चिम्पैंजी।

गिब्बनों की बोली—जिसे ये जंगलों में प्राय: सुबह-शाम सौ-पचास एक साथ मिलकर निनादित करते रहते हैं—बड़ी ही कर्कश और डरा देनेवाली होती है! इनके आहार में कंद-मूल, फल-पत्ती से लेकर चिड़ियों, कीड़ों और अण्डों तक का समावेश है।

'ओरेङ्ग-उटाङ्ग'—यह बनमानुस कद में लगभग डेढ़ मीटर होता है और उसके हाथ असाधारण लम्बाई के होते हैं। मादा ओरेङ्ग-उटाङ्ग नाटे कद की होती है। यह मानवसम प्राणी बोर्नियो और सुमात्रा के वनों ही में पाया जाता है। देखने में यह बड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भौंडा होता है । इसकी पीठ चलते समय एकदम कुबड़-जैसी धन्वाकार हो जाती है । बदन पर की केशराशि ललौंह और कहीं-कहीं काफी लम्बी होती है ! पेट पर एक भद्दी-सी गोल तोंद निकली रहती है । चेहरा निर्लोम और सदैव विषादयुक्त-सा देख पड़ता है । कान मनुष्य जैसे छोटे, नासिका बैठी-सी और ऊपरी ओठ बेहद चौड़ा होता है । बूढ़े नरों में चेहरे की आजू-बाजू त्वचा की दो बृहत् शिकनें-सी लटक आती हैं । कभी-कभी उनके लम्बी मूँछें भी निकल आती हैं । गले के हिस्से में एक थैलीनुमा रचना पाई जाती है, जिसे आवेश की स्थिति में यह वायु द्वारा फुला लेता है । यह एक बड़ा सीधा-सादा और विनम्र प्रकृति का भावुक प्राणी है । जन्तुशालाओं में प्रायः यह अपने पालकों के प्रति ममत्व रखने लगता है और उन्हें गले से लगा लेता है । यह पेड़ों पर ही एक घोंसला-सा बनाकर रहता है और गिब्बन की तरह डालियों के ऊपर ही ऊपर विचरता रहता है ।

'गोरिल्ला'––इसे बनमानुस-वर्ग का सरदार कहा जा सकता है । यह अति भयावना और प्रचण्ड शक्तिशाली जीव है । इसका आकार सभी बनमानुसों से बड़ा होता है । प्रौढ़ नर गोरिल्ला का कद दो मीटर से कुछ ही कम और वजन लगभग दो क्विंटल तक का पाया जाता है ! इसका शरीर बेहद हृष्ट-पुष्ट, छाती पहलवानों की-सी चौड़ी, भुजाएँ सशक्त और उभरी हुई, सिर बड़ा, मुँह काफी चौड़ा तथा ऊपरी ओठ छोटा-सा होता है । इसके बदन पर के बाल घने साँवले-भूरे-काले और लम्बे होते हैं और कुक्कुर-दंत बेहद बढ़े हुए और सुविकसित होते हैं । वे प्रायः कराल दंष्ट्रों का-सा रूप ग्रहण कर लेते हैं । यह विशालकाय बनमानुस केवल बेल्जियन कांगो के एक सीमित क्षेत्र ही में पाया जाता है । यह सघन वनों का वासी है और प्रायः अपने परिवार को लेकर यहाँ से वहाँ विचरता रहता है । जब रात का अँधेरा छा जाता है, तो अपने बच्चों को मादा-सहित, डालियों आदि से एक मचान-सा बनाकर, किसी वृक्ष पर सुला देता है और स्वयं सारी रात उस वृक्ष के तने के पास बैठकर नीचे पहरा देता रहता है ! यदि घिर जायँ या छेड़ दिये जायँ, तो ये प्राणी विकराल हो उठते हैं और उग्रतापूर्वक लड़ते देखे जाते हैं । आवेश में होने पर वे जोरों से चिंघाड़ने लगते हैं और जोर-जोर से अपने दोनों हाथों द्वारा छाती ठोंकने लगते हैं ! ये जमीन पर चारों हाथ-पैरों के बल लँगड़ाते हुए-से चलते हैं ।

'चिम्पैन्जी'––बनमानुस-वर्ग के इस प्राणी का आकार गोरिल्ला से बहुत छोटा होता है और पैर अपेक्षाकृत लम्बे होते हैं । जंगली दशा में यह भी विषुवत् प्रदेशीय अफ्रीका के वनप्रान्तों ही में पाया जाता है । यह आसानी से पालतू बना लिया जाता है । इसका मस्तिष्क अत्यधिक विकसित होता है, जिसके आधार पर जीव-वैज्ञानिकों ने यह मत प्रस्तुत किया है कि समस्त मानवसम प्राणियों में यही मनुष्य के सबसे नजदीक पहुँचा हुआ जीव है । इसके ओठ लम्बे व आगे उभरे हुए, कान बड़े, माथा अधिक सुडौल और चेहरा काला या मांस के-से रंग का होता है । अन्य बनमानुसों की तरह इसका भी शरीर काले-भूरे बालों से ढका रहता है । ये जीव भी अपना अधिकांश समय वृक्षों पर ही बिताते हैं । कभी-कभी ये पैर पटक-पटककर नाचते भी देखे जाते हैं ! पालने पर ये तरह-तरह के खेल-कूद और मनुष्य-जैसे काम करना (जैसे बाइसिकल चलाना, मेज पर बैठकर छुरी-काँटे से खाना, कपड़े पहनना आदि) सीख जाते हैं !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मांसाहारी हिंसक स्तनपोषियों की जीव-विज्ञान में अनेक बिरादरियाँ मानी गई हैं—जैसे कि 'बिड़ाल-वर्ग' (सिंह, बाघ, चीता, तेंदुआ, बिल्ली आदि); 'कटास-वर्ग' (कटास, मुश्क बिल्ली, मुसंग आदि); 'लकड़बग्घा-वर्ग'; 'कुक्कुर-वर्ग' (भेड़िया, सियार, लोमड़ी, कुत्ता आदि); 'बिज्जू-वर्ग' (बिज्जू, ऊदबिलाव आदि); 'ऋक्ष-वर्ग' (तरह-तरह के भालू) और 'सील-वर्ग' (सील, वालरस आदि) । इन स्तनपोषी हिंसक जन्तुओं के कुक्कुरदंत मांस-भक्षण के लिए विशेष रूप से उपयोगी, तीक्ष्ण धारवाले और नुकीले होते हैं । इसी प्रकार इनके पंजे शिकार करने के लिए तेज नाखूनवाले होते हैं । उनका तलवा गद्देदार होता है, जिससे कि ये जीव शिकार को आहट दिये बिना ही उस पर टूट पड़ते हैं । इनमें दौड़ने, उछलने, अँधेरे में देखने तथा दूर से सूँघकर या आहट पाकर शिकार का पता लगाने आदि संबंधी असाधारणतया शक्तियाँ होती हैं । प्रकृति ने उन्हें अपनी शिकार-वृत्ति में सुविधा प्रदान करने के लिए प्रायः ऐसी चितकबरी या मटमैली वेशभूषा दे रक्खी है, जिससे कि वे जंगलों के पेड़-पत्तों और घास-पात आदि में सहज ही अपने को छिपाये रखकर शिकार के जानवरों की दृष्टि से ओझल बैठे रह सकते हैं ! आओ, इनके कतिपय प्रमुख नमूनों का परिचय प्राप्त करें !

जंगल का राजा—सिंह

सिंह निश्चय ही 'जंगल का एकछत्र बादशाह' है और बिड़ाल-परिवार का तो वह माना हुआ कुलपति है । प्रायः लोग भ्रमवश असली बब्बर सिंह और उसके चचेरे भाई शेर या बाघ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

('टाइगर') को एक ही नाम से पुकारने लगते हैं। परन्तु जहाँ तक जातियों का संबंध है, सिंह ('लायन') और बाघ ('टाइगर') दो बिल्कुल अलग-अलग बिरादरियों के पशु हैं। जब कि बाघ चटकीली काली और पीली धारियों या पट्टियोंवाला प्राणी है, सिंह केवल ऊँट के-से सादे हल्के भूरे रंग का एक पशु है। सिंह की एक शानदार विशिष्टता उसके कंधे से सिर तक विस्तृत 'केसर' या 'अयाल' नामक बालों का वह भव्य समूह है, जिसके कि कारण संस्कृत में वह 'केसरी' नाम से पुकारा गया है। अयाल की यह विशेषता केवल नर ही में होती है, मादा में नहीं। सिंह लंबाई में तो बाघ से कम होता है, पर ऊँचाई में वह उससे बढ़ा-चढ़ा होता है! प्रायः तनकर खड़ा होने पर उसका कद एक मीटर से ज्यादा और दुम के सिरे से लेकर नाक तक उसकी लंबाई लगभग सवा तीन मीटर होती हैं। सिंह की पूँछ के सिरे पर काले बालों का एक चँवर होता है, जिसके अन्तिम छोर पर सींग के-से पदार्थ की बनी एक छोटी-सी कड़ी कील जैसी रचना होती है। वह खुले घास के मैदानों में रहने का अधिक शौकीन होता है। उसकी दहाड़ मीलों तक सुनाई दे सकती है, जिसे सुनकर छोटे-बड़े समस्त जानवरों का कलेजा दहशत के मारे थरथरा उठता है!

सिंह के लिए छः मीटर तक की छलाँग मारना मामूली बात है! शिकार के वक्त वह सीधा हमला बोल देता है। इस प्राणी का कमर का हिस्सा तो दुबला-पतला और लचकीला-सा होता है, परन्तु आगे का भाग बड़ा ही शानदार, बलिष्ठ और भव्य होता है! इसका मस्तक शेष धड़ की तुलना में बहुत बड़ा और भारी जान पड़ता है। इस पर उसके चेहरे के आसपास अयाल-रूपी केशराशि की जो छटा छाई रहती है, उससे उसका मुखमण्डल और भी अधिक दीप्तिमान् तथा तेजस्वी प्रतीत होता है! सबसे अधिक आकर्षक तो होती है उसकी चाल, जिसके एक-एक कदम से राजसी शान और निर्द्वन्द्वता का भाव टपकता है! सिंह की आँखें अपने सुनहले-भूरे रंग, गोल आकार और तेज चमक के कारण दर्शक को पराभूत-सी कर देती हैं! जब वह क्रोध के आवेश में होता है, तब तो उनमें से मानो बिजली की लपट-सी दौड़ने लगती है। उस समय उसके ओठ खिंचकर और भी दब-से जाते हैं, नाक पर शिकन पड़ जाती है, कान उठकर सिर से चिपक-से जाते हैं और पूँछ ऊपर उठकर ऐंठी-सी दिखाई देने लगती है!

सिंह भारत में सौराष्ट्र प्रदेश के गिरनार पर्वत के इर्द-गिर्द के कुछ सौ किलोमीटर लंबे-चौड़े वन-क्षेत्र तथा अफ्रीका के उत्तरी, उत्तर-पूर्वी और दक्षिणी भूभाग में ही पाया जाता है। भारत में, गिरनार के क्षेत्र में, कुल ढाई सौ सिंह ही इस समय शेष रह गये हैं!

जोड़ा बँध जाने पर सिंह और सिंहनी एक छोटा-सा परिवार बनाकर रहते हैं। तब उन्हें कंदराओं में रहना ज्यादा पसंद होता है। सिंहनी एक बार में तीन-चार तक बच्चे देते पाई गई है। वह अपने नन्हें बच्चों की बड़ी देखभाल रखती है। बिल्ली की तरह वह उन्हें चाटती-चुमकारती, मुँह में उठाकर उन्हें यहाँ से वहाँ ले जाती और उनके साथ खेलती रहती है! उनकी रक्षा का सवाल सामने आने पर वह एकदम विकराल बन जाती है!

सिंह केवल रात्रि ही को शिकार के लिए निकला करता है और प्रायः गाय-भैंस, जेबरा, मृग आदि पर हाथ साफ कर अपना भरण-पोषण किया करता है। परन्तु विशेष परिस्थितियों में वह 'आदमखोर' भी बन जाता है, अर्थात् ढूँढ़-ढूँढ़कर केवल आदमियों को ही मारने की बुरी लत उसे पड़ जाती है!

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सिंह के बाद 'बिड़ाल-परिवार' का सबसे मशहूर सदस्य निस्संदेह 'शेर' या 'बाघ' ही है, और भयंकरता के लिहाज से तो, संभवतः, वह वनराज सिंह को भी मात करने-वाला प्राणी कहा जा सकता है। उसका रूप चित्र-विचित्र होता है। ऐसा प्रतीत होता है, मानो गहरे बादामी अथवा हलके केसरिया रंग की मखमली पृष्ठभूमि पर कलाकार कुदरत ने अपनी तूलिका से समानान्तर आढ़ी और टेढ़ी-तिरछी बहुतेरी वैसी ही काली-काली मोटी रेखाएँ या पट्टियाँ-सी उसके बदन पर खींच दी हों, जिस प्रकार कि जेबरा के बदन पर उसने चित्रित कर दी हैं !

यह भयावना जीव कद में लगभग एक मीटर और लम्बाई में (दुम के सिरे से नासिका तक) साढ़े तीन मीटर तक के आकार का होता है। यह विशेषकर हिमालय की तराई के घने जंगलों, बंगाल के सुन्दरबन नामक डेल्टा के इलाकों तथा विंध्य-सतपुड़ा-अरावली आदि मध्यवर्ती जंगली क्षेत्रों में कसरत से पाया जाता है। भारत के बाहर भी ईरान और कॉकेशश-प्रदेश, मलय-अन्तरीप एवं उसके समीपवर्ती द्वीप तथा मंचूरिया, चीन एवं कोरिया के कतिपय वन्य क्षेत्रों में वह पाया जाता है ! मंचूरियन बाघ की खाल पर के बाल अधिक घने और लम्बे होते हैं तथा उसका शरीर भी अधिक भारी-भरकम होता है ! कॉकेशश के व्याघ्र आकार में छोटे होते हैं। परन्तु वैज्ञानिकों की निगाह में ये सब एक ही विशाल बिरादरी के सदस्य हैं––उनकी अलग-अलग जातियाँ नहीं हैं। संभवतः, ये उसी पुरातन व्याघ्र-वंश के वर्तमान कुलदीपक हों, जिसके एक पुरखे––'कटारदंती व्याघ्र'–का उल्लेख पहले हम कर चुके हैं।

वनराज सिंह––अपनी जीवन-संगिनी सिंहनी के साथ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिंह की भाँति बाघ भी प्रायः रात्रि ही के समय शिकार की टोह में बाहर निकलता है और हिरन, गाय-भैंस, बकरी, बंदर आदि प्राणियों पर हाथ साफ़ करके अपनी उदर-पूर्ति किया करता है। वह सामान्यतया आदमी पर हमला नहीं किया करता। परन्तु विशेष परिस्थितियों में वह एक बिगड़ैल 'आदमखोर' प्राणी बन जाता है। उस समय जिस तरह की चालाकियाँ वह दिखाता है, वे जादू की-सी बातें जान पड़ती हैं।

शेर का शिकार करने का ढंग सिंह से भिन्न प्रकार का होता है। वह एक पक्का शिकारी प्राणी है और अपने शिकार को काबू में लाने के लिए जिस-जिस प्रकार की तरकीबों से वह काम लेता है, उससे उसकी बुद्धिमत्ता का पर्याप्त परिचय हमें मिलता है। वह लुक-छिपकर पैंतरे बदलता हुआ शिकार का लगातार पीछा करता चला जाता है और जब शिकार उसे क़ाबू में आया देख पड़ता है, तो बिजली की तरह वह उस पर टूट पड़ता है और उसकी गरदन दबोच देता है! बाघ पानी में तैरने का भी अभ्यस्त होता है और प्रायः बड़ी-बड़ी नदियों को मिनटों में पार कर लिया करता है।

तेंदुआ—सबसे फुर्तीला और चालाक हिंसक प्राणी

सिंह और बाघ के बाद, बिड़ाल-परिवार के मांसभक्षी हिंसक प्राणियों में सबसे खतरनाक 'तेंदुआ' (या गुलहा) ही है, जो अपनी चितकबरी वेशभूषा, फुर्तीले बदन एवं कमनीय चाल-ढाल के कारण शिकारी जानवरों के चरम विकास का नमूना माना गया है। यह जानवर प्रायः वृक्षों पर चढ़कर, पत्तों की आड़ में बदन छिपाये, किसी मोटी डाली पर शिकार की ताक में चिपका हुआ-सा बैठा रहता है। फलतः किस समय किस ओर से एकदम बिजली की लपट की तरह लपककर वह किसी पर आ टूटेगा, इसका किसी को पता भी नहीं रहता और वह अपना काम बना लेता है! आकार में वह दुम से नाक तक कुल मिलाकर लगभग ढाई मीटर से ज्यादा नहीं होता और उसका कद ज्यादा से ज्यादा पौन मीटर तक ही पहुँच पाता है! इस जीव की छोटी-बड़ी अनेक जातियाँ हैं, जो भारतवर्ष के अतिरिक्त एशिया माइनर, कॉकेशश, सीरिया, अरब, मध्य एशिया, ईरान, अफगानिस्तान, चीन, मंचूरिया, स्याम, बर्मा, मलय-प्रदेश, सुमात्रा, जावा और लंका आदि में भी मिलती हैं। अफ्रीका महाद्वीप में तो वह पूर्व में अबीसीनिया से लेकर पश्चिम में ठेठ अल्जीरिया तक एवं उत्तर में मिस्र और सूडान से लेकर दक्षिण में ठेठ आशा-अंतरीप तक फैला हुआ है।

तेंदुए को एक प्रकार से हम बाघ का 'लघु संस्करण' और बिल्ली का 'वृहत् संस्करण' कह सकते हैं। उसका रंग ललाई लिए हुए हलके बादामी या भूरे से लेकर हलके पीले या केसरिया तक विभिन्न गहराई का पाया जाता है। उसकी खास विशेषता है ठेठ दुम से लेकर सिर तक कहीं दूर-दूर और कहीं घनी सुशोभित काजल-से काले रंग की वे चटकीली गोल-गोल-सी चित्तियाँ, जिनके कारण उसका वेश चितकबरा दिखाई पड़ता है। उसका वेश ठीक वैसा ही होता है जैसा कि सूर्य की रोशनी में किसी घने वृक्ष के पत्तों की जमीन पर पड़ती हुई छाया की आकृति में हमें देखने को मिलता है। इसके बदन की गठन दर्शनीय होती है। इसका सिर चपटा और लँबोतरा-सा, चेहरा अपेक्षाकृत छोटा, पैर भी काफी छोटे, आँखें पीली और क्रूरता का भाव टपकानेवाली, बाल काफी महीन और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुलायम तथा दुम बहुत अधिक लंबी एवं लचकीली-सी होती है। ठंढे देशों की कतिपय जातियों में खाल के बाल काफी बढ़े हुए एवं रूखे-से पाये जाते हैं। एक तेंदुआ घोर काले रंग का मिलता है। यह दक्षिण भारत एवं भारतीय महासागर के द्वीपों का वासी है। विशेष परिस्थितियों में तेंदुए भी बाघ या सिंह की तरह 'आदमखोर' बन जाते हैं। उस समय वे अपनी चालाक आदतों के कारण बड़े ही खतरनाक और धोखेबाज़ साबित होते हैं।

बिड़ाल-परिवार का सबसे भयावना शिकारी--बाघ या शेर।

हिमप्रदेश के गुलहे--'साह' और 'लमचित्ता'

मैदान में पाये जानेवाले तेंदुओं से बहुत-कुछ नज़दीक का रिश्ता रखनेवाला एक गुलहा हिमालय जैसे हिमाच्छादित पर्वत के क्षेत्रों में दो-ढाई हजार मीटर की ऊँचाई पर मिलता है। यह हमारे प्रदेश में 'साह' के नाम से पुकारा जाता है। इसका आकार-प्रकार तो बहुत-कुछ साधारण तेंदुओं जैसा ही होता है, परंतु एक तो इसकी खाल पीत-वर्ण न होकर हल्के सलेटी रंग की एवं कुछ हरित-श्वेत झाईं-सी लिए हुए रहती है, जिस पर बड़ी ही मनोहर काली छल्लेदार चित्तियाँ निखरी रहती हैं! दूसरे, शीत प्रदेशों का वासी होने के कारण इसके बाल एकदम समूर जैसे लम्बे और मुलायम होते हैं। अन्य एक विशेषता इसमें यह भी होती है कि इसकी आँखें पीली न होकर हरितवर्ण माँजरी-सी होती हैं एवं कान ऐसे छोटे होते हैं, मानो कतरकर लघु बना दिये गये हों! यह गुलहा एक दुर्लभ प्राणी है, क्योंकि वह अति दुर्गम प्रदेशों का निवासी है। वह केवल पहाड़ी भेड़-बकरियों या कुत्तों का शिकार करके ही अपना भरण-पोषण किया करता है, मनुष्य पर प्रायः आक्रमण नहीं करता। पालने पर वह बड़ी ही विनम्र प्रकृति का हो जाया करता है। सबसे विचित्र बात तो यह है कि अन्य तेंदुओं की तरह यह डरावनी आवाज नहीं करता, कभी कदाचित् गुर्रा भर लेता है!

इसी का एक छोटा भाई 'लमचित्ता' (मेघवर्णीय तेंदुआ) है, जो संभवतः तेंदुआ-वर्ग का सबसे सुन्दर प्राणी कहा जा सकता है। यह दुर्लभ जीव आकार में अपने पूर्वोल्लिखित बन्धु 'साह' से तनिक छोटा होता है और उसके पैर तो इतने अधिकछोटे होते हैं कि उसकी

कुल ऊँचाई हाथ भर से ज्यादा नहीं पाई जाती है। इसका सिर बेहद चपटा और लम्बा,
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
कुक्कुरदन्त अपेक्षाकृत बहुत बड़े तथा दुम भी बेहद लम्बी एवं साधारण तेंदुओं की दुम से अधिक भारी होती है। परन्तु इसकी सच्ची शोभा तो दरअसल इसके बदन पर की उस चित्रकारी में पाई जाती है, जो सुनहले पीतवर्ण की पृष्ठभूमि पर यहाँ-वहाँ बादलों की-सी शक्ल की बड़ी-बड़ी काली चित्तियाँ एवं पट्टियाँ-सी निखराये रहती है! उसके इस चितकबरे सुन्दर वेश की बहुत-कुछ तुलना कतिपय बड़ी जाति के अजगरों के बदन पर की चित्रकारी से की जा सकती है। यह जीव प्रायः वृक्षों ही पर रहता है और पक्षियों का शिकार करके अपना गुजारा किया करता है। 'साह' की तरह यह भी अधिकतर मौन ही रहता है।

नई दुनिया के बिड़ालवंशी--'जागुआर', 'प्यूमा' और 'ओसीलॉट'

बिड़ाल-परिवार के जिन भयावने प्राणियों का परिचय हमने तुम्हें अब तक दिया है, वे सबके सब पुरानी दुनिया अर्थात् एशिया और अफ्रीका के ही निवासी हैं। अब अमेरिका की नई दुनिया पर भी इस सम्बन्ध में एक नजर डाल ली जाय। यहाँ हमें इस कुटुंब के तीन उल्लेखनीय सदस्य मिलते हैं--एक, 'जागुआर' (अमेरिकन बाघ); दूसरा, 'प्यूमा' (नई दुनिया का तेंदुआ) और तीसरा, 'ओसीलॉट' (अमेरिकन बाघ-बिल्ली)। इनमें डील-डौल के लिहाज से 'जागुआर' सबसे बड़ा होता है। यह पुरानी दुनिया के बाघ से तो छोटा, परन्तु तेंदुए से काफी बड़ा और जबर्दस्त ताकतवर जानवर होता है। इसके हल्के सुनहले पीले बदन पर छल्लेदार काली चित्तियाँ छाई रहती हैं। उसका सीना चौड़ा, माथा भारी, दुम छोटी (केवल ५० सेंटीमीटर लम्बी) और कुत्ते की तरह ऊँची उठी रहनेवाली, अगले पैर काफी मजबूत और आवाज बहुत-कुछ सिंह की गरज से मिलती-जुलती-सी होती है। कम फुर्तीला होने पर भी यह बड़ा ही भयावना, खूँख्वार और क्रूर प्राणी है। अपने दो मीटर लम्बे भारी-भरकम बदन के बावजूद यह पेड़ों पर भी चढ़ जाता है और चौड़ी नदियों में उतरकर उन्हें तैरकर पार करने से भी नहीं हिचकता! यह उत्तरी अमेरिका के टेक्साज प्रदेश से लेकर दक्षिणी अमेरिका के अमेजन नदी के इलाके, पेटेगोनिया प्रदेश और एंडीज के पर्वतीय प्रान्त में आम तौर पर पाया जाता है। यह बन्दर, कछुए, मछली, चिड़ियाँ, हिरन, तापीर, आदि को मारकर अपना भरण-पोषण करता है!

'प्यूमा' डीलडौल में जागुआर से छोटा होता है। इसका रंग सिंह का-सा भूरा-ललछौंह होता है तथा पेट का हिस्सा बाघ की तरह का सफेदी मायल होता है। दूर से यह जानवर बहुत-कुछ सिंहनी जैसा दिखाई पड़ता है, सिर्फ उसका सिर अपेक्षाकृत बहुत छोटा होता है। जागुआर की तुलना में कम साहसी होने पर भी यह उससे कहीं अधिक फुर्तीला और क्रियाशील होता है। अपने लचकीले बदन की बदौलत वह काफी ऊँचाई से कुदान भर सकता है। वह ठेठ कनाडा से दक्षिणी अमेरिका के पेटेगोनिया प्रदेश तक विस्तृत है और प्रायः जंगली भेड़, हिरन तथा घरेलू पशुओं का शिकार करता है। इसकी आवाज मानवीय स्त्री या बच्चे की क्रंदन-वाणी जैसी होती है।

'ओसीलॉट' (या अमेरिकन बाघ-बिलार) वस्तुतः जागुआर का ही एक नजदीकी रिश्तेदार प्रतीत होता है। परन्तु डीलडौल में वह बहुत छोटा है और उतना भयावना भी नहीं होता। एशियाई लमचित्ते की तरह यह जानवर भी अपनी खाल की असाधारण सुन्दरता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के लिए विख्यात है। इसकी वेशभूषा रुपहले-सलेटी वर्ण की पृष्ठभूमि पर बड़े सुचारु रूप से व्यवस्थित काली-काली सुन्दर चित्तियों और पट्टियों की मनोहर छटा छहराये रहती है। यह प्राणी वृक्षों ही पर रहता है और प्रायः रात्रि के समय चिड़िया, सर्प, छोटे वानर, आदि का शिकार कर अपना पेट पालता है।

तेंदुए का 'लघु संस्करण' चीता

'चीता' का महत्व इसलिए अधिक है कि हमारे देश में प्रायः शिकार करने के लिए वह पाला जाता रहा है। यह जानवर तेंदुए जैसा जान पड़ने पर भी उससे बिल्कुल पृथक् वर्ग का जीव है। यह उससे कहीं अधिक हल्का और छरहरे बदनवाला होता है। इसका सिर बेहद छोटा और गोल, टाँगें बड़ी मजबूत और लंबी, तथा बदन पर की काली चित्तियाँ बताशानुमा, एकदम छोटी एवं पास-पास सटी हुई-सी रहती हैं। शिकार के लिए पाले जाने पर इसे प्रायः आँखों को ढकनेवाली टोपी पहनाकर बन्द गाड़ी में शिकारगाह तक ले जाते हैं। जब शिकार दिखाई पड़ता है, तो आँखों पर की टोपी उतारकर चीते को छोड़ दिया जाता है। छोड़ते ही वह बिजली की तरह लपकता है और कुछ दूर दौड़कर ही शिकार को जा धर दबोचता है। बड़ी अवस्था में पाले जाने पर भी कुछ ही महीनों के दर्मियान यह मनुष्य से काफी हिलमिल जाता है और उसका सहयोगी बन जाता है!

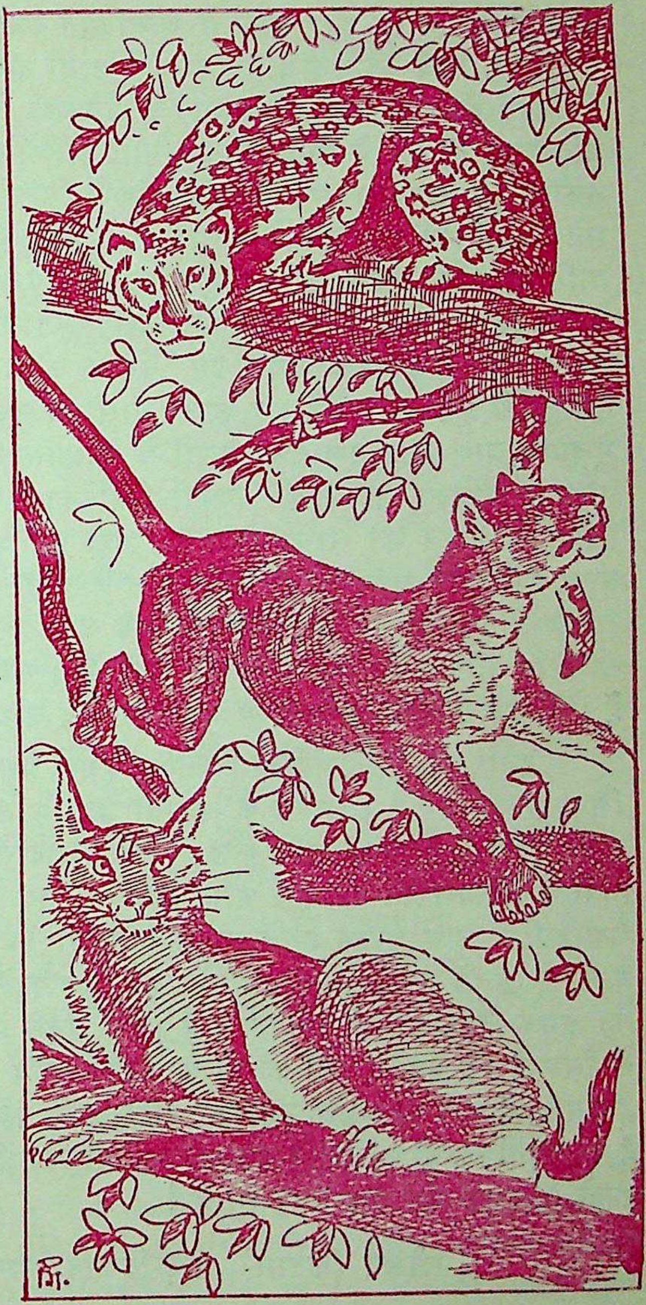

(ऊपर) तेंदुआ या गुलहा; (बीच में) अमेरिका में पाया जानेवाला 'प्यूमा' नामक चीता; (नीचे) स्याहगोश।

बिड़ाल-परिवार के अन्य सदस्य--बनबिलार, लिंक्स और स्याहगोश

ये शिकारी जीव भी बड़े तेज और खूँखार होते हैं। एक जाति 'तेंदुआ-बिल्ली' (लेपर्ड कैट) के नाम से मशहूर है, जो वृक्षवासी होती है। यह आकार में हमारी घरेलू बिल्लियों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
की जाति से छोटी होती है । दूसरी एक 'माछ बिड़ाल' (फिशिंग कैट) के नाम से पुकारी जाती है, जो भारत और लंका के अतिरिक्त बर्मा तक फैली पाई जाती है । इसका आहार मछलियाँ, घोंघे आदि हैं । यह दलदली क्षेत्रों की निवासिनी है। अन्य एक जाति 'सिकमार' (मार्बल्ड कैट) के नाम से विख्यात है, जिसकी विशेषता उसकी लंबी झबरी दुम है। इनके अतिरिक्त तिब्बत से मंगोलिया तक पाये जानेवाले मध्य एशिया के लघुकाय 'मेनुल बिलार', अफ्रीका की 'सरवाल' एवं 'सुनहली जंगली बिल्ली', योरप के साधारण 'बन-बिलार' आदि अनेकों जातियाँ इस वर्ग में गिनाई जा सकती हैं । ये रूप-रंग, आकार-प्रकार, गुण-धर्म, आदि में अपनी-अपनी विशेषताएँ रखती हैं । परन्तु दिलचस्पी के लिहाज से बिड़ाल-कुटुंब के इस निचले स्तर के प्राणियों में सबसे अनूठे और उल्लेखनीय हैं 'लिंक्स-वर्ग' के बेहद फुर्तीले और खतरनाक जीव । इस वर्ग के जीवों की मुख्य विशेषताएँ उनकी लम्बी टाँगें, ऐंठे हुए-से एवं ऊपर उठे हुए काले बालों के गुच्छों से युक्त लम्बे कान, छोटी दुम, घने मुलायम बाल और गले तथा गालों के आसपास बाघ का-सा बालों का फुलाव आदि हैं । ये एशिया, अफ्रीका, योरप और उत्तरी अमेरिका के भी कुछ हिस्सों में फैले हुए हैं । एक योरपीय लिंक्स तो मीटर भर लम्बा होता है । यही इस वर्ग का सबसे बड़ा जीव है । इसकी आँखें बहुत बड़ी और चालाकी से भरी प्रतीत होती हैं । रंग में लिंक्स पिलौंहे ललछौंह से लेकर रुपहले-साँवले तक विभिन्न कोटि के पाये जाते हैं । इनकी नाक छोटी होती है और मुँह के आसपास मूँछ के कुछ बाल निकले रहते हैं । खाल पर प्रायः कुछ काले धब्बे छाये रहते हैं । ये फुर्तीले जीव आसानी से वृक्षों पर चढ़ जाया करते हैं ।

इन्हीं का एक नजदीकी रिश्तेदार हमारे देश का सुप्रसिद्ध 'स्याहगोश' नामक फुर्तीला शिकारी जानवर है । भारत के अलावा यह फिलिस्तीन, अरब, इराक और अफ्रीका में भी पाया जाता है । इसकी खाल कुछ ललछौंह बादामी या सलेटी रंग की-सी एवं समानवर्णीय होती है । केवल पेट का कुछ भाग पीलापन लिए हुए या सफेद होता है । इस जानवर का 'स्याहगोश' नाम शायद इसके कानों के ऊपरी सिरे पर लिंक्स-वर्ग के प्राणियों के-से काले बालों के अनूठे गुच्छों के कारण पड़ा है । कुछ काले निशान (धारियों और चित्तियों के रूप में) इसके चेहरे पर भी बने रहते हैं । इस अनूठे प्राणी की सबसे अधिक ख्याति इस बात के लिए है कि वह बिजली की-सी फुर्तीवाला जीव है । कहते हैं, वह थोड़ी ऊँचाई पर उड़ते हुए पक्षियों तक को महज उछलकर और अपने पंजे का एक हाथ मारकर नीचे गिरा देता है ! अपनी लम्बी टाँगों की बदौलत यह दौड़कर शिकार को अपनी लपेट में ले लेता है । कहते हैं, इससे शेर तक घबड़ाता है !

खीखर (कटास), ताड़-बिलार, मुश्क-बिल्ली, नेवला आदि

बिड़ाल-परिवार के बाद हिंसक पशुओं की एक उल्लेखनीय बिरादरी कटास-वर्ग के लघु प्राणियों की है । इस वर्ग का 'खीखर' या 'कटास' नामक जीव लगभग पौन मीटर तक लम्बा होता है । लीमूर की-सी दुमवाले ये रात्रिचर जीव भूरे-सलेटी रंग के होते हैं और उनकी बालदार खाल पर बिल्लियों के-से काले-काले छल्ले या पट्टियाँ और चित्तियाँ आदि पड़ी रहती हैं । इनका मुँह लोमड़ियों का-सा होता है और ये प्रायः बिलों और झाड़ियों में अथवा पेड़ों पर छिपे रहते हैं । ये छोटी-छोटी चिड़ियों और कीट-पतिंगों से लेकर सर्प,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

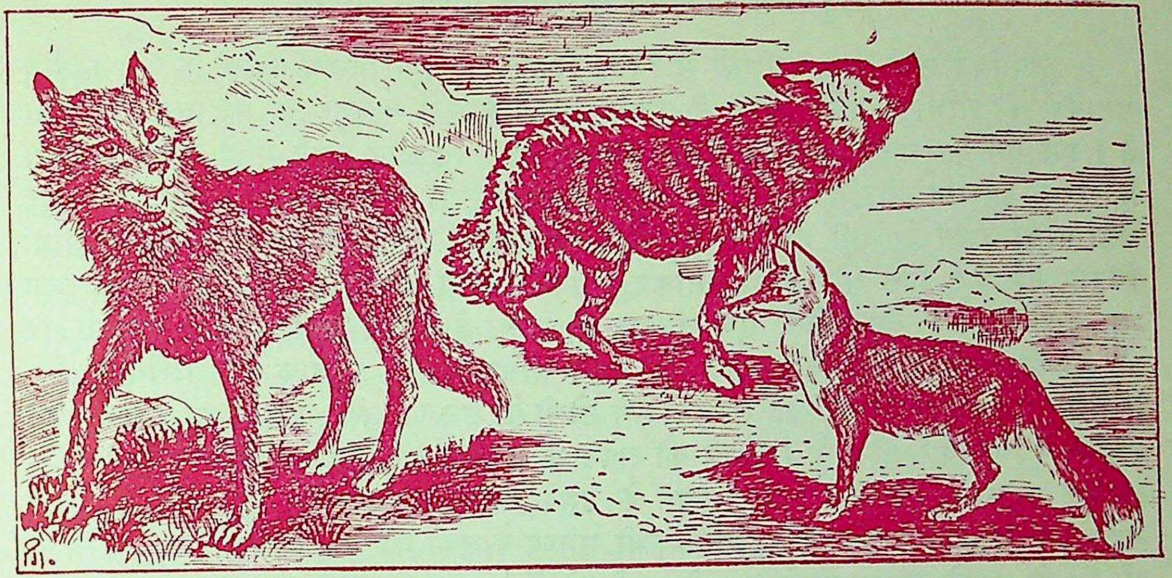

कुक्कुरवंश के कुछ प्राणी--(बाईं ओर) भेड़िया; (बीच में) लकड़बग्घा; (दाहिनी ओर) लोमड़ी ।

मेंढक एवं चूहों जैसे जानवरों को खाकर प्रायः अपना काम चलाते हैं । असली 'खीखर' या 'कटास' भारतवर्ष के अतिरिक्त अफ्रीका में भी पाये जाते हैं । अफ्रीकी जाति की लम्बाई दुमसहित लगभग सवा मीटर होती है और वह अपने भारतीय रिश्तेदार से अधिक श्याम-वर्णीय होती है । इन प्राणियों की एक विशेषता उनके मुँह में काफी अधिक संख्या में चर्वणक दाँतों का पाया जाना है । दूसरी एक विशेषता यह होती है कि इनकी दुम के नीचे एक ऐसी थैली या रसग्रंथि-सी पाई जाती है, जिसके अन्दर से एक तीव्र गंधयुक्त पदार्थ निकला करता है । यह पदार्थ एक जाति के कटास में बहुत सुगंधित होता है, इसीलिए उक्त प्राणी को 'मुश्क-बिल्ली' या 'कस्तूरी' के नाम से पुकारा जाता है । इसी वर्ग का अन्य एक जीव 'मुसंग' या 'ताड़-बिल्ली' के नाम से मशहूर है; कारण वह खजूर, ताड़, नारियल जैसे ऊँचे स्तंभाकार वृक्षों पर चढ़कर रहने का आदी है। ये ताड़-बिल्लियाँ एशिया और अफ्रीका में अलग-अलग वर्णों की पाई जाती हैं ।

कटास-वर्ग के इन छोटे-छोटे जीवों के अनेकों नजदीकी रिश्तेदार पुरानी दुनिया के अफ्रीकी, एशियाई और दक्षिणी-पश्चिमी योरपीय भूभागों में विस्तृत हैं । इनमें 'जेनेट', 'लिनसांग', 'हेमिंगैल', 'बिंटुरॉंग' आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । इन्हीं के गोत्र की दूर की एक बिरादरी हमारे सुपरिचित 'नेवले' एवं उससे मिलते-जुलते 'मीरकेट' नामक प्राणियों की है, जो इस बात में कटास-वर्गीय जानवरों से निराले हैं कि एक तो इनमें बदन बहुत लम्बे एवं पैर अत्यधिक छोटे होते हैं; दूसरे इनके गंध-थैली नहीं होती । साथ ही इनके बाल भी कहीं अधिक रूखे, लम्बे और मिश्रित वर्ण के या चितकबरे-से होते हैं। ये अत्यंत चपल और चंचलवृत्ति के जानवर हैं । ये प्रायः बिलों में रहते हैं और हमारे घरों में इधर-उधर घूमते देखे जा सकते हैं । इनकी भी कई उपजातियाँ मिलती हैं, जो चीन और भारत से लेकर दक्षिणी अफ्रीका तक फैली हुई हैं । नेवला साँपों का जानी दुश्मन है । वह बड़ी फुर्ती तथा होशियारी के साथ मुकाबला करके उन्हें मार देता है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुक्कुरवंश का सबसे खतरनाक प्राणी——भेड़िया

उपर्युक्त छोटे-छोटे प्राणियों से विदा होकर अब हम हिंसक पशुओं के उस द्वितीय महावंश की सीमा में प्रवेश करते हैं, जिसे जीव-विज्ञान में 'कुक्कुरवंश' का नाम दिया गया है। इस वर्ग का सबसे भयानक प्राणी 'भेड़िया' है। यह जीव देखने में तो कुत्ते जैसा होता है, परन्तु स्वभाव और वृत्ति में वह इतना खूँख्वार तथा आक्रमणकारी होता है कि वह जहाँ पाया जाता है, वहाँ बाघ या तेंदुओं से भी अधिक आतंक छाया रहता है। यह प्रायः गिरोह बाँधकर रहने और टोली बनाकर शिकार करने का आदी होता है। जिस समय यह भूखा होता है, बेहद ढीठ एवं खूँख्वार हो जाता है। ऐसी स्थिति में यह आदमी पर भी हमला करने से नहीं हिचकता। यह बहुत अधिक कपटी, चालाक और धोखेबाज होता है। यह युद्धप्रवीण सैनिकों की तरह अपनी टोली के अलग-अलग सदस्यों को अलग-अलग स्थानों में छिपाकर धोखे से शिकार को लपेट में ले आने की बाकायदा योजना बनाता है। अक्सर मनुष्य-बालकों को उठा ले जाने के उसके किस्से भी प्रतिदिन सुने जाते हैं। यही नहीं, इस खूँख्वार प्राणी द्वारा कभी-कभी मनुष्य-बालकों को पाल-पोसकर बड़ा करने के भी किस्से पुराने जमाने ही से सामने आते रहे हैं!

भेड़िया सशक्त और लम्बी टाँगोंवाला होता है। उसके कान सदैव ऊँचे उठे-से रहते हैं। उसके दाँत और जबड़े विशेषतया शिकार के लिए ही निर्मित होते हैं। चलते समय दुम सीधी और गुस्से की हालत में कुछ नीचे ऐंठी हुई-सी रहती है। रंग में भेड़िया हल्का ललछौंह भूरा होता है, जिसमें कुछ स्याहीपना मिला रहता है। यह सघन वनों या पर्वतीय क्षेत्रों की अपेक्षा झाऊवाले मैदानों में रहने का ज्यादा शौकीन होता है और अपने बच्चों को माँद या विवर में रखकर पालता है। इसकी मादा कुत्ते के पिल्लों जैसे तीन-चार से छः-सात तक बच्चे एक बार में देती है। भेड़ियों की सूँघने, देखने और सुनने की शक्ति अत्यंत विकसित होती है और दौड़ने में तो ये हारते ही नहीं। ये भारतवर्ष, साइबेरिया आदि एशिया के अधिकांश भागों के अलावा, उत्तरी योरप के रूस, पोलैंड, ऑस्ट्रिया आदि देशों तथा उत्तरी अमेरिका में भी पाये जाते हैं। अफ्रीका, दक्षिणी अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया इनसे सर्वथा मुक्त हैं। ठंढे देशों में जाड़े में भूख के मारे ये बेहद उपद्रवी हो जाते हैं।

सियार, लोमड़ी और जंगली कुत्ता

भेड़िये के बाद कुक्कुरवंश के अन्य दो प्रसिद्ध प्रतिनिधि 'सियार' (या गीदड़) और 'लोमड़ी' हैं, जो मनुष्य के लिए विशेष खतरनाक न होते हुए भी छोटे-छोटे जानवरों और खेती के जबर्दस्त शत्रुओं में से हैं। सियार पौन मीटर लम्बा एक छोटा-सा प्राणी है, जिसका रंग ललछौंह भूरे-सलेटी से लेकर खिचड़ी श्यामल पिलौंहा तक पाया जाता है। इसकी दुम साँवली काली और झबरी-सी होती है और वह प्रायः नीचे की ओर लटकती रहती है। ये काफी डरपोक प्रकृति के होते हैं और अक्सर अँधेरा होने पर ही बाहर निकलते हैं। प्रायः शाम होते ही गाँवों की सीमा पर इनकी आवाज सुनाई देने लगती है। मांसजीवी प्राणी होकर भी ये मकई के भुट्टों, ककड़ी-खरबूजों और गन्ने के खेतों पर भी हाथ साफ करने से नहीं हिचकते। इनकी चालाकी और मक्कारी तो पुराने जमाने ही से इतनी मशहूर है कि हमारे यहाँ 'पंचतंत्र' की-सी कहानियाँ उनकी करतूतों के वर्णन से भरी पड़ी हैं!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लोमड़ी भी हमारी बस्तियों से सटकर रहनेवाला एक चालाक किस्म का जंगली जानवर है। इस छोटे-से कुक्कुरवंशी प्राणी के शरीर का आकार तो एक मामूली दुबले-पतले कुत्ते से ज्यादा नहीं होता, परन्तु उसकी दुम अपेक्षाकृत बहुत लम्बी और झाड़ू की-सी झबरी होती है। साथ ही उसका मुँह नेवले का-सा आगे निकला हुआ और आँखें खड़ी पलकोंवाली चालाकी से भरी होती हैं। रंग इसका मिश्रित ललछौंह से लेकर भूरे-सलेटी तक विविध प्रकार का पाया जाता है। ये जीव जमीन में बिल खोदकर रहते हैं, परन्तु इनकी चतुराई का एक उदाहरण यह भी है कि अक्सर ये बिज्जू जैसे जानवरों के बिलों को हथियाकर जबरन उनमें रहने लगते हैं। ये जीव पुरानी और नई दुनिया के अधिकांश भागों में विस्तृत पाये जाते हैं और सियार की भाँति इन्हें भी मांस के अतिरिक्त कंद-मूल-फल खाने का गहरा शौक होता है। इनकी योरपीय और उत्तरी अमरीकी जातियों में लाल और सलेटी रंग की दो किस्में बहुत प्रसिद्ध हैं, जिनकी मुलायम बालदार खालों की वहाँ बहुत कीमत आँकी जाती है। इसीलिए वहाँ लोमड़ियों के शिकार का काफी रिवाज भी है। सबसे सुन्दर वर्ण की लोमड़ी धुर उत्तरी हिम-प्रदेशों में पाई जाती है, जिसका रंग गरमी की ऋतु में तो नीला-सलेटी-सा रहता है और जाड़ा आते ही एकदम पूर्णतया सफेद हो जाता है! शिकार के समय पीछा किये जाने पर लोमड़ी आक्रमणकारियों को ऐसा छकाती और चकमा देती है कि जान पर आ पड़ने पर कभी-कभी झूठमूठ ही मृतक का स्वाँग रचकर, यह जमीन पर लेट जाती है और शिकारी का ध्यान बँटते ही आँख बचाकर भाग खड़ी होती है!

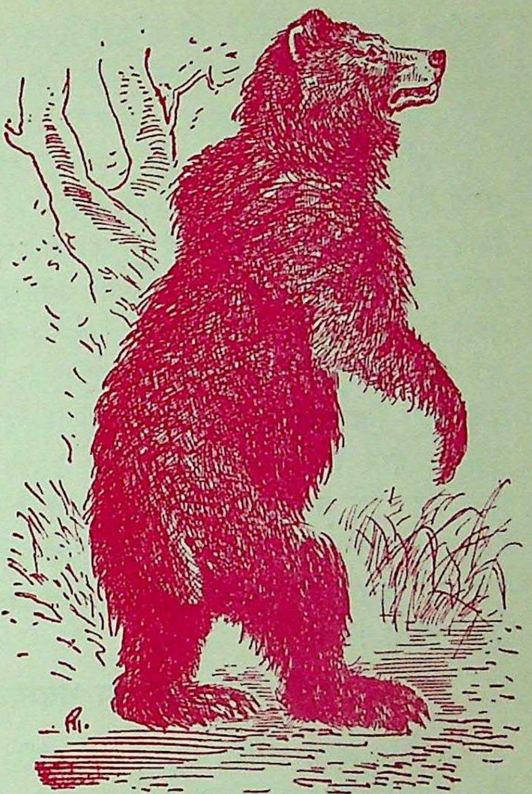

हमारे देश का काला भालू या रीछ।

भेड़िया, सियार और लोमड़ी के उपरान्त कुक्कुरवंश का अन्य एक महत्वपूर्ण सदस्य मनुष्य का पुराना साथी कुत्ता है, जिसकी अनेकों जातियाँ मिलती हैं। इनमें से कुछ अभी जंगली अवस्था में भी पाई जाती हैं। जंगली कुत्तों की एक प्रसिद्ध जाति हमारे अपने देश में 'धोल' या 'सोनहा' के नाम से विख्यात है। यह जानवर टोली बाँधकर शिकार करने का आदी होता है। उसका सामूहिक आक्रमण इतना जबर्दस्त होता है कि उसके आगे बाघ तक शिकार छोड़कर भाग खड़ा होता है! इन्हीं जैसा अन्य एक खूँखवार जंगली कुत्ता ऑस्ट्रेलिया का 'डिंगो' है!

सबसे भौंडा हिंसक पशु—लकड़बग्घा

लगभग मीटर भर लम्बे ऐसे जानवर की कल्पना करो, जिसके अगले पैर तो काफी बड़े और मजबूत तथा पिछले बहुत छोटे और मुड़े हुए-से हों। उस पर उसका मुँह तो बिड़ाल-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वंशीय हिंसक प्राणियों की अपेक्षा कुक्कुरवंशीयों से अधिक मिलता-जुलता-सा हो और खाल पर के बालों का मटमैला भूरा-साँवला रंग तथा उनके ऊपर पड़ी हुई मैली काली धारियाँ, पट्टियाँ आदि उसे साक्षात् बाघ का ही तुच्छ रिश्तेदार जताती हों ! तब सियारों की-सी एक भद्दी झामरी दुम की भी कल्पना करो और सोचो कि अपनी इन असमान टाँगों तथा पीछे की ओर झुके हुए भारी-से बदन को लिए हुए लँगड़ाता-सा यह किस तरह ऊँचा मुँह किये चलता है ! बस, यही है लकड़बग्घे की तस्वीर ! यह घिनौना-सा प्राणी जितना बद-शकल है, वैसी ही बदनुमा उसकी आदतें भी हैं । वह है पशु-जगत् का अंत्यज ! उसका पेशा शिकार द्वारा भरण-पोषण करने के बजाय अन्य जानवरों द्वारा मारे गये जीवों या मरे हुए प्राणियों के सड़े-गले लोथड़ों को खाकर ही गुजारा करना है । परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि इस कारण यह किसी कदर कम खतरनाक हो । वस्तुतः इसका जबड़ा इतना मजबूत और भयावना होता है कि उसके एक ही दबाव में बड़े-बड़े पशुओं की हड्डियाँ चकनाचूर हो जाती हैं । गनीमत यही है कि स्वभाव से यह डरपोक होता है। परन्तु उसकी यह कायरता कभी-कभी उसे चोरी करने पर भी उतारू कर देती है और वह बस्तियों में रात को चुपके से घुसकर छोटे पालतू जानवरों के अलावा मनुष्य के बच्चों तक को उठा ले जाता है !

जंतु-जगत् का भयावना सर्वभक्षी--भालू या रीछ

सिंह, बाघ, चीता आदि की भाँति 'भालू' या 'रीछ' भी हमारे देश के लिए आम तौर पर एक जाना-पहचाना हुआ हिंसक प्राणी है । परन्तु कहीं मदारी की डुगडुगी पर नाचते हुए, नकेल पहने भालू को देखकर तुम यह न समझ बैठना कि यह कोई कम खतर-नाक जानवर है ! वह पालतू बनने पर तरह-तरह की नकलों के खेल, मल्ल-कुश्ती के करतब और नाच आदि जो दिखाते पाया जाता है, सो केवल डंडे के जोर के मारे ही करता है । अन्यथा जंगली हालत में उसके पास फटकना मौत को मोल लेने जैसा है ! यह ताकतवर जीव सिंह और बाघ तक को युद्ध के लिए चुनौती देते पाया जाता है, फिर मनुष्य की बात कौन कहे !

भालुओं की अनेक जातियाँ और उपजातियाँ पाई जाती हैं । इनमें सबसे बड़े डील-डौल का भालू उत्तरी अमेरिका के अलास्का प्रदेश का कादिअक द्वीप का रजतवर्णीय 'भूरा भालू' है, जिसकी ऊँचाई (पैरों पर खड़े रहने की दशा में) तीन मीटर से अधिक और वजन आठ क्विंटल होता है ! इसका सिर लगभग एक हाथ चौड़ा और उतना ही लम्बा होता है और अगले पैरों में फौलाद के अंकुशों जैसे आठ सेंटीमीटर लम्बे खौफनाक नाखून होते हैं । डीलडौल के लिहाज से यह प्राणी वर्तमान हिंसक पशुओं में सबसे बड़ा माना जा सकता है।

भूरे भालुओं की कई जातियाँ मध्य योरप के जंगलों और मध्य एशिया के पर्वतीय क्षेत्रों में ठेठ जापान तक विस्तृत हैं, जो पूर्वोल्लिखित रुपहली जाति से कम डीलडौल की होकर भी बड़ी भयावनी हैं । इस जाति के भालुओं की एक विशेषता यह है कि ये जाड़े भर अपनी माँदों में झपकी मारे पड़े रहते हैं और बर्फ गलने पर पुनः बाहर विचरते हैं !

'काले भालू' से तो हम सभी सुपरिचित हैं । यह हिमालय की निचली श्रेणियों एवं तराई के इलाकों से लेकर ठेठ दक्षिण भारत तक पाया जाता है । हिमालय का काला भालू

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बृहदाकार होता है। उसके बाल छोटे, मुलायम और समानतः जमे हुए-से होते हैं एवं थूथन अधिक आगे को निकला हुआ होता है। मैदानी रीछ के बाल कहीं ज्यादा लंबे और गरदन के आसपास अयाल का-सा रूप धारण किये हुए रहते हैं। इस कृष्णकाय जाति की छाती पर काले बालों के बीच अंग्रेजी के 'वी' अक्षर की तरह एक बड़ा सफेद चिन्ह बना रहता है। ये भालू मांस के अलावा तरह-तरह के फल-फूल, कंद-मूल और शहद तक शौक के साथ खाते हैं। शहद की खोज में ये पेड़ों पर भी चढ़ जाते हैं। वस्तुतः भालू एक सर्वभक्षी प्राणी है। वह कीड़े-मकोड़े, दीमक, मछली, सब-कुछ खा लेता है। जंतुशालाओं में वह सिगरेट पीते भी देखा जा सकता है!

उत्तरी ध्रुव-क्षेत्र के सफेद भालू।

ध्रुव-प्रदेश के सफेद भालू

दर्शनीयता के लिहाज से इन प्राणियों की सबसे अनूठी जाति ध्रुव-प्रदेश के सफेद भालुओं की है। आकार में ये छोटे और हलके डील के होते हैं। इनकी गरदन बहुत लम्बी, सिर छोटा और कुक्कुरवंशियों जैसा आगे को निकला हुआ, पैर बहुत बड़े और सशक्त तथा नाखून अपेक्षाकृत छोटे होते हैं। यह ऋक्ष-जाति केवल उत्तरी ध्रुव-प्रदेश के हिमक्षेत्रों ही में पाई जाती है। वह बारहों मास बर्फ के वातावरण में रहने की अभ्यस्त है। उसका आहार मछली, सील, घोंघे आदि जलजीवों से लेकर बारहसिंघा, लोमड़ी, तरह-तरह के पक्षी, आदि सब कुछ होता है। अपनी उस रुपहली श्वेत वेशभूषा में ये अनोखे रीछ आस-पास की धवल हिमराशि के बीच खूब ही फबते हैं! न केवल इनका सारा बदन ही बल्कि पैरों के तलुवे का भाग भी सफेद बालों की घनी राशि से ढका रहता है। ये सफेद भालू जबर्दस्त तैराक होते हैं! वे डुबकी लगाकर मछलियाँ पकड़ते भी पाये जाते हैं। सील का शिकार करते समय वे उनके निकास के गड्ढों के मुहानों पर ताक लगाये बैठे रहते हैं और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्योंही कोई सील साँस लेने के लिए बाहर निकली नहीं कि अपने पंजे की झपट से उसे बाहर खींच लेते हैं। ये जीव (विशेषकर इनकी मादाएँ) जाड़े के दिनों में कई हफ्तों तक बिना कुछ खाए-पीए अपनी बर्फ की माँदों में निद्रा में लीन पड़े रहते हैं।

सील, वालरस, समुद्री सिंह, गज-सील आदि हिंसक जलजीव

ध्रुव-प्रदेशों में पाये जानेवाले 'सील', 'वालरस' आदि मत्स्य-भोजी स्तनपोषी जल-जंतुओं की भी गणना हिंसक पशुओं की बृहत् बिरादरी में ही की जाती है। ये जलजीव वास्तव में कभी स्थलवासी ही रहे होंगे, पर परिस्थितिवश वे क्रमशः जल के निवासी बन गये हैं। इसी प्रयास में इन अनोखे स्तनपोषियों के हाथ-पैर धीरे-धीरे बदलकर तैरने में मदद देनेवाले चपटे सुफनों जैसे अङ्गों में रूपान्तरित हो गये हैं। ये हिंसक प्राणी जल छोड़कर प्रायः तटवर्ती स्थल पर भी आ जाते हैं। तीन प्रधान समूहों में वर्गीकृत इन जलजीवों के प्रथम समूह में 'समुद्री सिंह' या 'कानवाली सील'; द्वितीय में 'वालरस' और तृतीय में 'असली सील', 'गज-सील', आदि की गणना होती है। 'कानवाली सील' या 'समुद्री सिंह' में स्पष्टतः कान दिखाई पड़ते हैं और कुछ में एक प्रकार का अयाल भी पाया जाता है। तीन-चार मीटर तक लम्बे पिलौंहे-भूरे या साँवले वर्ण के ये प्राणी समूहों में ही रहने के आदी हैं। पालने पर ये निसेनियों पर चढ़ना, नाक के छोर पर गेंद या लम्बी बल्ली साधना आदि सर्कसी खेल सीख जाते हैं! 'वालरस' तीन-चार मीटर लम्बा और चालीस किलोग्राम तक वजनी प्राणी है, जिसके चेहरे पर घनी मूँछें और आधे या पौन मीटर तक लम्बे सुअर के दाँतों जैसे दो कराल दंष्ट्र होते हैं! यह मुछंदर मांस और चर्बी का एक हिलता-डुलता बोरा-जैसा जान पड़ता है, जिस पर वजन के मारे गहरी शिकनें पड़ी रहती हैं। उधर 'असली सील' यद्यपि स्वयं डीलडौल में बहुत बड़ी नहीं होती—वह डेढ़-दो मीटर लंबी ही पाई जाती है—परन्तु उसकी 'गजसील' नामक जाति छः से दस मीटर तक की लंबी देखी गई है! 'गजसील' की नासिका का अग्रभाग हाथी की सूँड की भाँति आगे निकला रहता है! यह प्राणी उत्तर के अलावा दक्षिणी ध्रुव-प्रदेश में भी मिलता है। पिलौंहे सलेटी वर्ण की 'असली सील' जब सीना तानकर गरदन ऊँची उठाये खड़ी होती है, तो उसकी भावभङ्गी से मनुष्य का भ्रम होने लगता है!

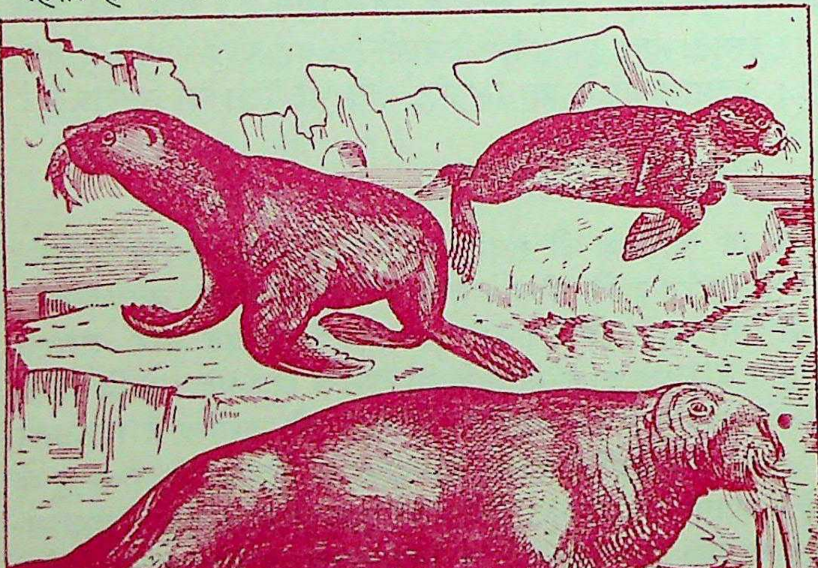

(पीछे की ओर) सील; (सामने) वालरस नामक स्तनपोषी जलजीव।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बीते हुए युगों के कतिपय बड़े आकार के प्राणियों के असाधारण डीलडौल का हाल तुम पिछले एक प्रकरण में पढ़ चुके हो । यद्यपि यह बात सही है कि जैसे बृहत्-काय जीव इस पृथ्वी पर पूर्वकाल में गुजर चुके हैं, वैसे तो अब इस दुनिया में हमें देखने को नहीं मिलते, फिर भी आज कुछ नमूने ऐसे उपलब्ध हैं, जो कम-से-कम उन विलुप्त महाकाय प्राणियों के समकक्ष रखे जाने का दावा अवश्य कर सकते हैं ! प्रस्तुत प्रकरण में अपने इन्हीं समकालीन बृहत्काय जीवों का परिचय हम तुम्हें देने जा रहे हैं ।

सबसे बड़ा वर्तमान जीव--'तिमि' या 'व्हेल'

तुम्हें यह जानकर अचंभा होगा कि जंतु-जगत् का वर्तमान सबसे बड़ा प्राणी जलचर जीव है, थलचर नहीं ! वह है महासागरों का निवासी 'व्हेल' या 'तिमि' । परन्तु मत्स्य की-सी शक्ल का होकर भी, यह जलचर मछली कदापि नहीं माना जा सकता । यह है दरअसल स्तनपोषी वर्ग का एक जीव, जो परिस्थितिवश महासागरों का वासी बन गया है । यह है हम जैसा एक जरायुज (अर्थात् गर्भाशय में पोषण करके संतान पैदा करनेवाला) जीव ।

इस बृहत्काय जीवधारी की अनेक जातियाँ पाई जाती हैं, जो मोटे तौर पर 'बिना दाँत-वाली' और 'दाँतवाली' इन दो महासमूहों में बाँटी जा सकती हैं । बिना दाँतवाली जाति की व्हेलों का प्रमुख लक्षण उनके मुँह में 'व्हेलबोन' नामक अस्थि-रचना का पाया जाना तथा नथुनों के अलग-अलग खुलने की व्यवस्था होना है । 'व्हेलबोन' एक प्रकार की कुदरती छलनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सी होती है ! यह लगातार तरतीबवार सजी हुई असंख्य त्रिकोणाकार अस्थि-फलकों या हड्डियों की प्लेटों की शृंखला जैसी होती है। प्लेटें तालु की सतह से आरम्भ होकर मुख की छत के दोनों बाजू में नजदीक-नजदीक सटी हुई-सी व्यवस्थित रहती हैं। गिनती में ये पतली प्लेटें प्रत्येक ओर ढाई सौ से तीन सौ तक होती हैं। वे इस प्रकार से सज्जित होती हैं कि उन सबके बीच एक तरह की झिरियों का जाल-सा बन जाता है, जिनमें से होकर पानी तो छनकर बाहर निकल सकता है, परन्तु उसमें तैरते हुए सूक्ष्म जीव आदि बिना छने वहीं बचे रह जाते हैं ! यह अनूठी व्यवस्था प्रकृति ने इसलिए की है कि इतने बड़े डीलडौल का यह प्राणी केवल प्रोटोजोआ-वर्ग के अति छोटे-छोटे एककोशीय जलजीवों अथवा अत्यन्त छोटी-छोटी मछलियों आदि का ही आहार करके अपना गुजर-बसर करता है––वह बड़े जल-जंतुओं को नहीं खाया करता ! 'व्हेलबोन'-रूपी अनूठी छलनी इस कार्य में बड़ी सुविधा प्रदान करती है। जब यह जीवधारी जल की बड़ी-सी घूँट लेता है, तो उसकी जीभ की हलचल द्वारा पानी की राशि तो उक्त अस्थि-रचना रूपी छलनी की अगणित झिरियों में से छनकर पुनः बाहर निकल आती है, पर उसमें मिश्रित असंख्य छोटे-छोटे समुद्री जीव-जंतुओं का ढेर वहीं बचा रहकर उसके आहार का साधन बन जाता है।

सबसे बड़ी तिमि––'रोरक्वाल'

अदंतक तिमियों की तीन मुख्य जातियाँ हैं––ग्रीनलैंड या ध्रुवप्रदेश की 'राइट-व्हेल', प्रशान्तमहासागरीय 'साँवली व्हेल' और 'रोरक्वाल' या 'नील-तिमि'। इनमें प्रथम जाति की तिमि का सिर बहुत बड़ा होता है तथा व्हेलबोन भी काफी लम्बी, पतली एवं काले वर्ण की होती है। दूसरी की व्हेलबोन पीतवर्ण की एवं लघु आकार की होती हैं। यह जाति तेरह से सोलह मीटर तक के डीलडौल की पाई जाती है। तीसरी जाति की तिमि 'रोरक्वाल' का सिर तो अपेक्षाकृत छोटा होता है, और उसके गले से छाती तक का सारा भाग समानान्तर बनी हुई अनेक लम्बाकार खाईनुमा रेखाकृतियों से युक्त होता है; परन्तु इस वर्ग की तिमि डीलडौल में सबसे बढ़ी-चढ़ी होती है। इसी की एक उपजाति 'कुबड़ी-तिमि' (हंपबैक-व्हेल) है, जो अनूठे ढंग से ऊँट की कूब की तरह धन्वाकार मुड़ी हुई-सी होती है। यद्यपि यह सोलह मीटर से ज्यादा लम्बी नहीं होती, परन्तु इस वर्ग की मुख्य जाति की व्हेल–जिसे 'रोरक्वाल' या नील-तिमि कहते हैं––प्रायः सत्ताईस से बत्तीस मीटर तक की लम्बाई की होती है ! यह दीर्घाकार प्राणी आज के दिन संसार के सबसे बड़े जीवधारी का स्थान ग्रहण किये हुए है ! इसके भारी-भरकम शरीर और बृहत् आकार का कुछ अनुमान तुम इस काल्पनिक तुलना द्वारा कर सकते हो कि यदि इसके बदन की लम्बान के समानान्तर हाथियों की एक कतार खड़ी की जाय, तो उसके लिए शायद आठ-दस हाथी हमें जुटाना पड़ेंगे ! और यदि किसी एक बड़ी-सी तराजू में एक ओर इस प्राणी को तथा दूसरी ओर हाथियों को रखकर हम उसके बराबर वजन करना चाहेंगे, तो इसके लिए जरूरत होगी, शायद तीस हाथियों की ! कहते हैं, मनुष्य के लिहाज से इसका तौल सामान्य वजन के लगभग २८०० आदमियों के बराबर होगा। इसका मुख-गर्त तो इतना बड़ा होता है कि एक पर एक सीधे खड़े होकर दो लम्बे आदमी आसानी से उसमें घुस सकते हैं ! अथवा यों कहिये कि चार मीटर ऊँचे उसके बृहत् मुख-द्वार में आसानी से महावत-सहित एक हाथी खड़ा किया जा सकता है !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दंतक तिमि-वर्ग—'स्पर्म-व्हेल और 'किलर व्हेल'

'दंतक' या दाँतवाली तिमियों की अनेक उपजातियाँ हैं, जिनमें सबसे उल्लेखनीय दो हैं—एक तो 'स्पर्म-व्हेल' या मोमी-तिमि; दूसरी 'शिकारी तिमि' (या किलर व्हेल)। स्पर्म-व्हेलके ऊपरी जबड़े में तो कोई काम के दाँत नहीं होते, परन्तु निचले जबड़े में छः-छः इंच लम्बे अगणित दंत होते हैं। इस तिमि की मुख्य विशेषता यह है कि इसका सिर बहुत बड़ा और सामने से चपटा-सा होता है! साथ ही इसके हवा निकालनेवाला एक ही नथुना या छिद्र होता है। आकार में इस जाति की व्हेल उन्नीस से अट्ठाईस मीटर तक पहुँचते पाई जाती है। इसका नाम 'स्पर्म-व्हेल' या मोमी-तिमि इसलिए पड़ा है कि उसमें 'स्पर्मसिटी' नामक एक गाढ़ा काला तैलीय द्रव बहुत अधिक परिमाण में पाया जाता है। ठंढक में वह लगभग मोम जैसा जमकर हल्का हो जाता है। दूसरा एक और मूल्यवान् पदार्थ, जो इस तिमि में पाया जाता है, 'अंबरग्रिस' है। यह एक तीव्र गंधयुक्त पदार्थ होता है। यहाँ हम तुम्हें यह बता दें कि तिमि-वर्ग के सभी प्राणियों को साँस लेने के लिए समय-समय पर पानी की सतह पर ऊपर आना पड़ता है। प्रायः बड़ी जाति की व्हेलें अपने नथुने से पानी का जो जबर्दस्त फव्वारा-सा छोड़ते देख पड़ती हैं, वह मात्र उनकी साँस के वेग से उमड़नेवाली फुहार ही होती है। यह धारणा गलत है कि तिमि बहुत-सा पानी पीकर पुनः उसे बाहर फेंकती है!

दंतक तिमियों के समूह के एक प्राणी को वैज्ञानिकों ने 'शिकारी तिमि' या 'किलर व्हेल' का नाम दे रक्खा है। यह विकराल जीव, जिसे 'महासागर का भेड़िया' कहकर पुकारा जाता है, आकार में तो दस मीटर से अधिक नहीं होता, परन्तु बड़ी से बड़ी तिमियों तक के लिए भी

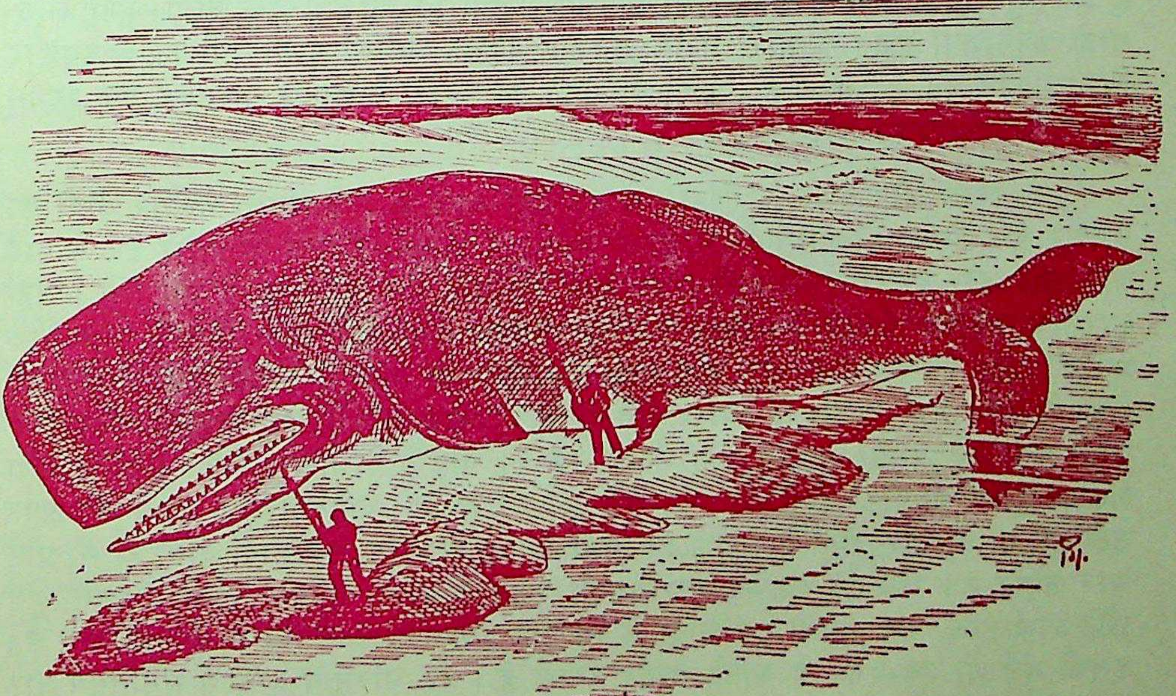

'स्पर्म-व्हेल' जो बिना दाँतवाली नील-तिमि जितनी लंबी न होकर भी ८ मीटर की लंबाई तक पहुँचते पाई गई है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वह मानो साक्षात् कालरूप होता है! इसका कारण यह है कि इसके प्रत्येक जबड़े में एक-एक दर्जन बड़े ही प्रचण्ड और चीर-फाड़ के लिए उपयुक्त कराल दाँत होते हैं। ये क्रूर प्राणी भेड़ियों की तरह टोली बाँधकर शिकार करने के आदी होते हैं। अनुशासनबद्ध सनिकों की तरह पंक्तिबद्ध होकर जब इनका समूह तैरता हुआ आगे बढ़ता है, तो जहाँ भी उनकी टोली जा पहुँचती है, वहीं हाहाकार मच जाता है! ये खूँख्वार जानवर छोटी सीलों और सूँस आदि जल-जंतुओं को तो समूचे ही हड़पकर निगल जाते हैं और बड़े डीलडौल की तिमियों पर भी जंगली कुत्तों या भेड़ियों की भाँति टूटकर नोंच-नोंचकर उनके चिथड़े कर डालते हैं!

दाँतवाली तिमियों की बिरादरी के ही नजदीक के रिश्तेदार गंगा जैसी नदियों और समुद्रों में पाये जानेवाले 'सूँस' या 'डाल्फीन' नामक वे मशहूर जलजीव हैं, जो डेढ़-दो मीटर से लेकर ढाई-तीन मीटर तक के डीलडौल के पाये जाते हैं। इसी वर्ग का एक अनोखा प्राणी 'नरवल' कहलाता है, जिसकी विशेषता है उसकी थूथन पर एक अनोखे भाले-नुमा तीखे लम्बे सींग या दाँत का पाया जाना। यह सींग वस्तुतः लहरदार ढंग से लिपटे हुए दो कराल दंष्ट्रों द्वारा रचित होता है। इसकी लम्बाई कभी-कभी दो-ढाई मीटर तक पहुँचते पाई गई है! किसलिए प्रकृति ने इसे यह शस्त्र प्रदान किया है, समझ में नहीं आता!

थलचरों का सरदार--हाथी

भारतवासियों के लिए हाथी का परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं, चूँकि अपने इतिहास के आरम्भकाल ही से इस बृहदाकार पशु के साथ हमारी गहरी जान-पहचान रही है। परन्तु दुनिया के अन्य अनेक देशों के लिए--जहाँ कि वह नहीं पाया जाता--यह जीव-धारी अपने टनों वजन के भारी शरीर, सूँड़रूपी अद्‌भुत अनोखी लम्बी नासिका, श्वेतवर्णीय विशालाकृति दंत एवं सहज ही पालतू बन जाने की प्रवृत्ति के कारण निस्संदेह एक महान् कुतूहल और आश्चर्य की वस्तु है!

डीलडौल और वजन के लिहाज से हाथी ही आज के दिन समस्त थलचर जीवों का सरदार है। उसकी दो जातियाँ इस समय दुनिया में मिलती हैं--एक तो हमारे देश में पाई जानेवाली और दूसरी अफ्रीका की। इन दोनों जातियों में परस्पर काफी अन्तर है। जहाँ भारतीय गजराज ऊँचाई में अधिक से अधिक लगभग सवा तीन मीटर होता है, वहाँ उसके अफ्रीकी बन्धु का कद पौने चार मीटर तक पहुँचते पाया जाता है! इसी प्रकार भारतीय हाथी के कान जहाँ ज्यादा से ज्यादा पौने दो मीटर चौड़े होते हैं, वहाँ अफ्रीकी गजराज के उससे कहीं बड़े अर्थात् लगभग तीन मीटर तक की चौड़ाई के पाये जाते हैं! इसके अलावा अफ्रीकी हाथी की पीठ ढोरों की तरह बैठी हुई या सपाट तथा भारतीय हाथी की ऊपर उठी हुई या कूबदार होती है। अफ्रीकी हाथी के बाहरी दाँत, नर-मादा दोनों ही में, पौने चार मीटर तक लंबे एवं लगभग एक क्विटल वजन के, तथा भारतीय हाथी में इससे बहुत छोटे आकार के, कम वजनी एवं मादा में बिल्कुल गायब या नाममात्र के ही पाये जाते हैं। इनकी सूँड़ भी एक-दूसरे से काफी अन्तर रखती है। वह भारतीय हाथी में समानरूप और चिकनी सतह की होती है एवं एक ही 'उँगली' (अथवा पकड़ने के उपकरण) से युक्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होती है। उधर अफ्रीकी गजराज में उसकी सतह पर छल्लेनुमा शिकनों की एक शृंखला-सी उभरी रहती है तथा सिरे पर एक के बजाय दो 'उँगलियाँ' बनी रहती हैं।

परन्तु अपने तुच्छ भेदों के बावजूद, हाथी की ये दोनों वर्तमान जातियाँ एक ही मूल वंश की दो शाखाओं-सी हैं और उनके पुरखे, संभवतः, एक ही रहे होंगे, ऐसा अनुमान किया जाता है। हाथी के दो प्रसिद्ध पूर्वज 'मैमथ' और 'मेस्टाडॉन' का जिक्र हम पहले कर चुके हैं।

हाथी के दाँत और सूँड़--क्या और क्यों ?

'हाथी के दाँत दिखाने के और, खाने के और' इस कहावत के अनुसार इस महाकाय प्राणी के जो कराल तीखे दाँत बाहर निकले हुए दिखाई पड़ते हैं, वे उसे भोजन में कोई मदद नहीं देते। वह उनसे केवल वृक्षों की डालियाँ आदि तोड़ने में मदद लेता है। वस्तुतः वे हैं उसके आक्रमण और रक्षा के शस्त्र। वे उसके ऊपरी जबड़े के कर्त्तनक दंतों के परिवर्द्धित रूप जैसे हैं। वैसे, हाथी के चबानेवाले दाँत भी होते हैं, जो मुँह के भीतर छिपे रहते हैं। वे काफी मजबूत और अन्य जीवों के दाँत-दाढ़ों से बड़े होते हैं। परन्तु इस प्राणी का जो सबसे अनोखा और उपयोगी अङ्ग होता है, वह है दरअसल उसकी लम्बी सूँड़, जो कि उसकी थूथन या नासिका तथा ऊपरी ओष्ठ का लंबायमान सम्मिलित रूप मात्र है! अपने इस अद्भुत अङ्ग की बदौलत ही हाथी अन्य सब जीवधारियों से एक पृथक् वर्ग में रक्खा गया है। इस लम्बी नासिका के रंध्र या नथुने उसके ठेठ सिरे पर जाकर खुलते हैं। वहीं उसमें एक ऐसा क्रियाशील उपकरण होता है, जिसे लौकिक भाषा में उसकी 'उँगली' कहा जाता है। इस उपकरण की सहायता से हाथी छोटी से छोटी वस्तुएँ, यहाँ तक कि एक पैसा तक, धरती पर से उठा लेता है! दूसरे शब्दों में, यह सूँड़रूपी 'हाथ' इस प्राणी का निश्चय ही सबसे अधिक क्रियाशील, सशक्त और उपयोगी अङ्ग है। वह उससे न केवल घास-पात का कौर उठाकर मुँह में रखने में ही

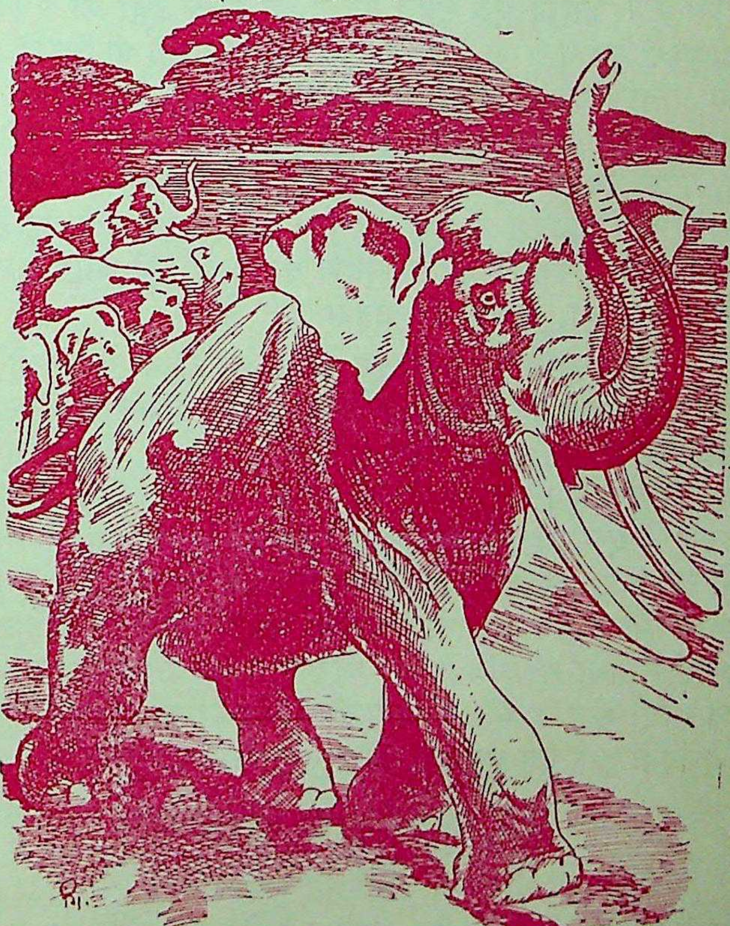

स्थलचरों का सरदार भारतीय गजराज।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मदद लिया करता, बल्कि उसी की सहायता से वह पानी भी पीता, बड़ी-बड़ी डालियों को अपनी अजगर की-सी लपेट में लेकर उखाड़ देता या तोड़ देता और टनों वजन के लट्ठों को क्रेन-यंत्र की तरह एक से दूसरी जगह पर फूल की भाँति उठाकर रख देता है ! प्राय: ये प्राणी नदियों में नहाते समय सूँड़ में पानी भर-भरकर अपने बदन पर छोड़ते देखे जाते हैं । उससे ये धूल और पत्तियाँ आदि भी उठाकर अपने डील पर छोड़ते हैं । जब ये पालतू बन जाते हैं, तो सूँड़ को ऊँची उठाकर लोगों को सलाम करते तथा उसी के द्वारा महावत को उठाकर अपने बदन पर बिठाते हैं ।

यद्यपि पालतू दशा में हाथी अकेले भी रहते देखा जाता है, तथापि वास्तव में वह झुण्डों में रहनेवाला प्राणी है । उसके ये झुण्ड, जंगली अवस्था में, आसपास की बस्तियों के लिए एक भयावना खतरा पैदा कर देते हैं । वे जिन खेतों पर टूट पड़ते हैं, उसका सफाया कर देते हैं । बिगड़ खड़े होने पर हाथी बड़े-बड़े वृक्षों को जड़ से उखाड़ फेंकते हैं और दौड़कर शत्रु का पीछा करके अपने कराल दाँतों से उसे उछाल देते अथवा पैरों के नीचे रौंदकर उसकी चटनी बना देते हैं ! हाथी की निगाह और श्रवण-शक्ति तो अपेक्षाकृत उतनी तीव्र नहीं होती, परन्तु उसकी घ्राण-शक्ति निस्संदेह बेहद बढ़ी-चढ़ी और तेज होती है ! इसका एक सबूत यह है कि केवल हवा को सूँघकर वह काफी दूर से मनुष्य की मौजूदगी का पता पा लेता है ! हाथी की बोली भी निराले ही ढंग की होती है । वह तुरही की आवाज की-सी तीखी और कर्कश होती है, जिसे उसकी 'चिघाड़' कहते हैं । इस जानवर का रंग साधारण तौर पर तो साँवला या काली मिट्टी का-सा गहरा सलेटी ही होता है, परन्तु विशेष परिस्थितियों में सफेद रंग के हाथी भी कभी-कभी पैदा हो जाते हैं, जिनकी स्याम और ब्रह्मदेश में बड़ी कद्र है । ये वहाँ पूजे जाते रहे हैं । कभी-कभी ऐसे हाथी भी मिल जाते हैं, जिनके दो से अधिक बाहरी बड़े दाँत पाये जाते हैं । अफ्रीका में एक गजराज मारा गया था, जिसके नौ बाहरी दाँत थे !

हाथी अभी भी पृथ्वीतल पर पर्याप्त संख्या में जंगली दशा में विद्यमान है । भारतीय हाथी हिमालय की तराईवाले इलाकों तथा दक्षिण में मैसूर के जंगलों में पाया जाता है । इसके अतिरिक्त लंका, बर्मा, मलयप्रदेश, स्याम, कोचीन चीन, सुमात्रा और बोर्नियो में भी वह मिलता है । इसे पकड़ने की क्रिया बड़ी ही कठिन और खतरनाक होती है । इसके लिए जंगल में एक बड़ा-सा घिरौंदा या हाता, पेड़ों के तनों के साथ मोटी शहतीरों या बल्लियों को बाँधकर, तैयार किया जाता है । इसे 'खेड़ा' कहते हैं । तदनंतर पालतू हाथियों पर सवार होकर कई होशियार आदमी जंगली हाथियों के झुण्ड को एक ओर को घेरते और भगाते हैं तथा तरकीब से घेर-घारकर उनके उस झुण्ड को वे इस हाते में ले आते हैं । जब सब हाथी खेड़े के भीतर आ जाते हैं, तो उसका द्वार बन्द कर दिया जाता है । इसके बाद कई दिनों तक इन हाथियों को पालतू बनाने का दुष्कर कार्य जारी रहता है ।

हाथी बड़ा उपयोगी पशु है

हाथी की आँखें तो उसके विशाल आकार को देखते हुए बहुत छोटी होती हैं, परन्तु उसके कान चौड़े पंखों जैसे बहुत बड़े होते हैं । उन्हें वह मक्खी आदि उड़ाने के लिए प्राय: हिलाया करता है । इस पशु की खाल, जो कि काफी मोटी होती है, निर्लोम-सी होती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है और पैर वृक्ष के तनों जैसे मोटे तथा एक तरह के दबे हुए नाखूनों या सुमों से युक्त होते हैं।

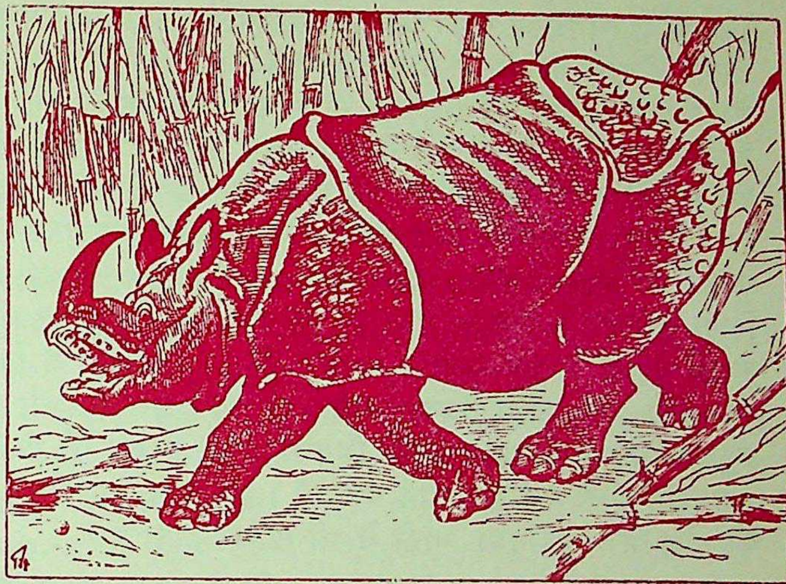

भारतीय गैंडा, जिसकी खाल प्रायः अभेद्य होती है।

एक बार में मादा हाथी केवल एक ही बच्चा देती है। इस स्तनपोषी पशु की आयु सौ से डेढ़ सौ वर्ष तक की होती है। आहार भी इसका कम नहीं होता! यह विशुद्ध शाकाहारी प्रतिदिन लगभग बीस क्विंटल घास-पात और लगभग चालीस किलोग्राम अनाज खा लेता है। इतने भारी शरीरवाले होकर भी हाथी कुशल तैराक होते हैं। वे नहाने के बेहद शौकीन होते हैं। हाथी की चाल से तो हम सब सुपरिचित हैं ही। वह काफी धीरे किन्तु जमकर पैर टिकाकर चलनेवाला प्राणी है। उसकी इस झूमती हुई-सी चाल से जहाँ एक प्रकार की बेफिक्री, मस्ती और मदमातेपन का भाव टपकता है, वहाँ वह शान्ति, धैर्य, अडिग निश्चय और समझदारी की भी प्रतीक है। जब हाथी दौड़ता है, तो अन्य पशुओं की तरह वह सरपट नहीं भागता, बल्कि लंबी-लंबी डगें या फलाँगें भरता है।

हाथी अनेक प्रकार से उपयोगी भी सिद्ध हुआ है। अपनी अमित शक्ति के कारण वह पुराने जमाने में बहुतायत से युद्ध में काम में लाया जाता था। बर्मा, असम और लंका आदि प्रदेशों में उससे सवारी के काम के अलावा जंगल साफ करने और बड़े-बड़े लट्ठे ढोने का काम लिया जाता है। शेर आदि खतरनाक पशुओं का शिकार करने में तो अरसे से हाथी काम में लाया जाता रहा है। इसके लिए उसकी पीठ पर एक प्रकार की बैठक कस दी जाती है, जिसे 'हौदा' कहते हैं। उसी में बैठकर शिकारी शेर पर निशाना मारते हैं। भारतवर्ष में हाथियों को तरह-तरह के गहनों और झूल आदि से सजाकर जुलूसों में निकालने का भी पुराने जमाने से रिवाज रहा है।

अद्‌भुत कवचधारी पशु—गैंडा

हाथी के बाद, डीलडौल के लिहाज से, वर्तमान थलचर पशुओं में दूसरा स्थान गैंडे का ही है! अपनी कवचरूपी दुर्भेद्य शिकनदार खाल और नासिका के सिरे पर की विचित्र तीखी सींगनुमा रचना के कारण यह पशु आज प्रकृति की जंतुशाला का अपने ढंग का एकमात्र आकर्षक नमूना बचा हुआ है।

गैंडे की पाँच जातियाँ इस समय विद्यमान हैं। इनमें से दो अफ्रीकी हैं और तीन हैं एशियाई। एशियाई जातियों में सबसे विशाल गैंडा भारतवर्ष का है। यह नेपाल में भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मिलता है। निरंतर मारा जाने के कारण यह अब बहुत कम संख्या में शेष रह गया है। इसकी ऊँचाई दो मीटर से कुछ कम तक की पाई गई है। लम्बाई दुम से नाक तक चार मीटर तक की होती है। इसकी नासिका पर एक अद्भुत शृंगनुमा रचना होती है, जो आधे मीटर तक की हो सकती है। वजन में यह तीन-साढ़े तीन टन का होता है। इसका रंग मिट्टी के-से सलेटी वर्ण का होता है। इसकी खाल बेहद मोटी, कड़ी और शिकनों द्वारा अनेक विभागों में बँटी हुई कवचनुमा होती है। उसका यह आवरण उसके लिए जिरह-बख्तर का काम देता है। यह खाल इतनी अधिक चीमड़ और दुर्भेद्य होती है कि न तो किसी जानवर के पंजे या दाँत का ही कोई असर उस पर हो सकता है, न तलवार आदि शस्त्रों का ही। इस खूबी के कारण ही पुराने जमाने में उससे ढाल बनवाने का प्रचलन था। गैंडे की खाल गरदन, कंधे, पृष्ठभाग और पिछली टाँगों की जाँघों के इलाके में बहुत अधिक मोटी और गहरी शिकनों द्वारा पर्तदार-सी होती है, जिससे कि उसके अलग-अलग हिस्से-से बन गये जान पड़ते हैं। उसके आसपास के पुट्ठों आदि का अंश एक प्रकार की गोल-गोल घुंडीनुमा गाँठों से भी खचित होता है।

एशिया में इस प्राणी की दो जातियाँ क्रमशः जावा और सुमात्रा में भी मिलती हैं। जावावाले गैंडे डीलडौल में भारतीय गैंडे से बहुत छोटे होते हैं। इनमें केवल नर ही के थूथन पर सींगनुमा रचना होती है। सुमात्रावाले गैंडे में एक के बजाय दो 'सींग' पाये जाते हैं। जावावाले गैंडे की खाल पर एक प्रकार की रेखाकृतियाँ-सी होती हैं और सुमात्रा-वाले की खाल पर रोएँ होते हैं।

एशियाई जातियों से बिल्कुल निराली अफ्रीकी गैंडे की वे दो प्रमुख बिरादरियाँ हैं, जिनमें से एक तो लौकिक बोली में 'श्वेत' या गौरवर्णीय और दूसरी 'कृष्णकाय' या काली कहलाती है। अफ्रीका का तथाकथित श्वेतवर्णीय गैंडा काफी बड़े डीलडौल का पशु होता है। उसका कद दो मीटर से कुछ कम और लम्बाई लगभग पाँच मीटर तक पहुँची हुई होती है। अफ्रीकी गैंडों की खाल भारतीय गैंडे की तरह अलग-अलग शिकनों में विभक्त-सी नहीं होती। दूसरे उनके थूथन पर एक के बजाय दो सींगनुमा रचनाएँ होती हैं। इनमें अगले 'सींग' का आकार लगभग पौने दो मीटर तक का भी पाया गया है! इनके अगले दाँत बिल्कुल नहीं होते।

गैंडा शुद्ध शाकाहारी प्राणी है। वह घास-पात खाकर अपना भरण - पोषण करता है। वह कीचड़ में लेटकर उससे अपने सारे बदन को लथपथ कर लेने तथा इधर-उधर लोटकर अपनी खाल को रगड़ने का बड़ा शौकीन होता है। गैंडे की दृष्टि तो कमजोर होती है, परन्तु सुनने और सूँघने की शक्ति तीव्र होती है। उसके कान सिर के ऊपर खड़े देख पड़ते हैं। ये पशु भड़क उठने पर बड़े वेगपूर्वक दौड़ते हैं और दौड़ते या चलते समय अपना सिर एकदम नीचा किये रहते हैं।

गैंडे का शृंग—क्या और क्यों ?

अपनी थूथन पर हाथ भर लम्बा तीखा शृंग उगाये रहने पर भी गैंडा सींगदार प्राणी नहीं है। उसकी नासिका पर की यह सींगनुमा रचना वस्तुतः अस्थि या सींग के-से पदार्थ द्वारा बनी हुई नहीं होती। वह तो उसकी थूथन की खाल में से विकसित केवल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कतिपय कड़े बालों जैसे तंतुओं के आपस में चिपककर एक हो जाने के फलस्वरूप सींग का-सा रूप ग्रहण कर लेती है। किन्तु गैंडे का शृंग असली सींग हो या न हो, इसमें जरा भी शक नहीं कि वह एक भयावना और शक्तिशाली हथियार होता है। आक्रमण के समय यह उसी से चोट करता है। गैंडा वैसे तो मनुष्य या अन्य किसी भी जीवधारी पर हमला नहीं करता, परन्तु यदि स्वयं उस पर कोई आक्रमण करे, तो वह विकराल हो उठता है। उस समय उसकी भयावनी टक्कर के सामने बड़ा से बड़ा जानवर भी नहीं टिक सकता।

ऊँचाई में सभी वर्तमान पशुओं को मात करनेवाला प्राणी 'जिराफ'

यदि भारी-भरकम डील के लिहाज से वर्तमान जंतु-संसार के नेताओं का स्थान क्रमशः 'तिमि', 'हाथी' और 'गैंडा' जैसे पशुओं को प्राप्त है, तो कद या ऊँचाई में सबका अग्रणी होने का गौरव 'जिराफ' नामक जानवर को है। यह प्राणी कुदरत की एक अजीब-सी करतूत है! यह पशु देखने में इतना बेतुका और नकली-सा जान पड़ता है कि उस पर विश्वास करना कठिन हो जाता है। भला, लगभग ढाई-तीन मीटर ऊँची टाँगों और उतनी ही ऊँची गरदनवाले इस चितकबरे लँबटंगू की किस जानवर से हम उपमा दें? वह तो ऊँट, मृग और गौ, तीनों ही का कुछ-कुछ सम्मिश्रण-सा है! इसकी ऊँचाई छः साढ़े छः मीटर तक पहुँचते पाई गई है, जो इतनी अधिक होती है कि यदि भारतीय हाथी को दूसरे हाथी पर खड़ा कर दिया जाय, तब भी उसकी बराबरी न हो पायेगी! जंतु-जगत् के अनेक विचित्र पशुओं की तरह जिराफ भी केवल अफ्रीका ही में पाया जाता है। वह झुंडों ही में रहने का अभ्यस्त है। उसका रंग पीतवर्णीय भूरा-सा होता है, जिस पर बादामी-नारंगी रंग की सुंदर चित्तियाँ पड़ी रहती हैं। इसकी अगली टाँगें पिछली से अधिक लंबी होती हैं। इसके फलस्वरूप यह जब अपनी गरदन ऊँची करता है, तो इसकी पीठ धरती के समानान्तर न रहकर गरदन की ऊपरी कोर के साथ-साथ मिलती

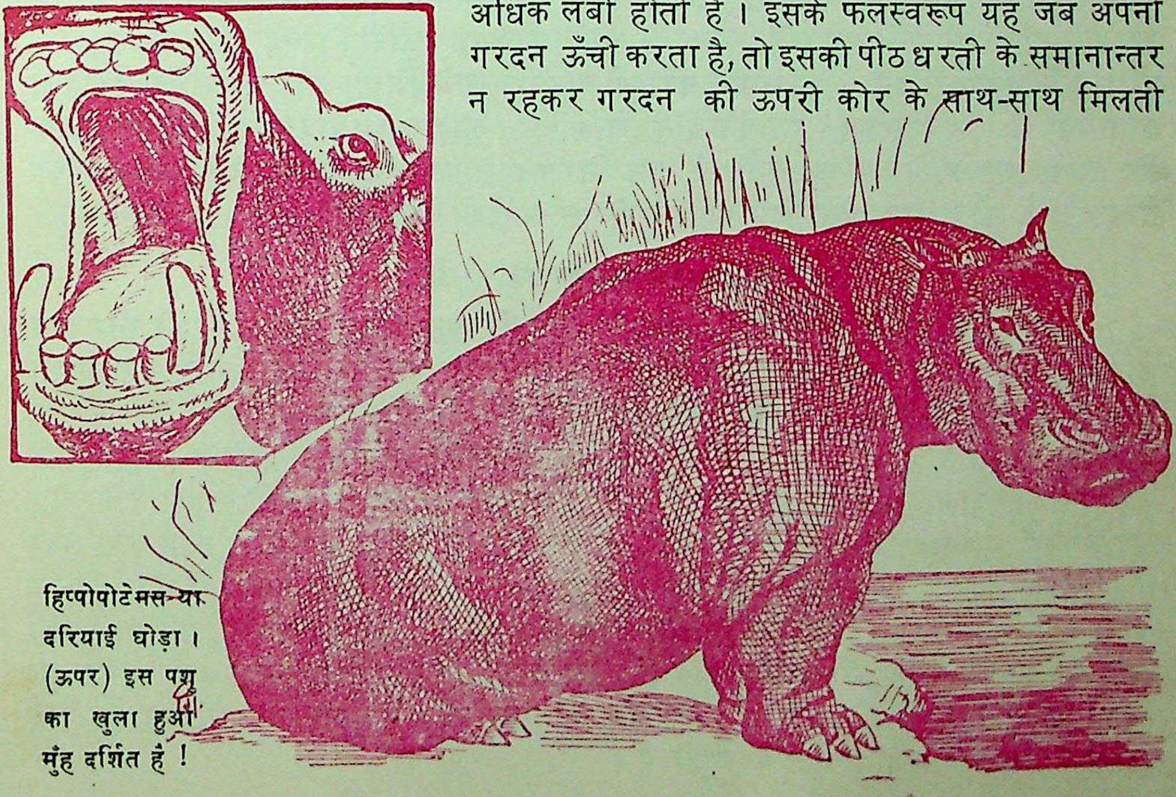

हिप्पोपोटेमस-या दरियाई घोड़ा। (ऊपर) इस पशु का खुला हुआ मुंह दर्शित है!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हुई नीचे की ओर लगातार ढालू होती हुई देख पड़ती है ! इस पशु के सिर पर दो या इससे भी अधिक छोटे-छोटे सींग होते हैं, जिन पर खाल मढ़ी रहती है तथा बालों के गुच्छे सुशोभित रहते हैं। इसके पैरों में ढोरों जैसे खुर तथा पीठ पर अयाल होते हैं। सबसे विचित्र तो होती है उसकी जीभ, जो मुँह से लगभग हाथ भर बाहर निकाली जा सकती है ! यह सारी व्यवस्था प्रकृति ने इस जंतु में केवल इसलिए की है, ताकि ऊँचे वृक्षों की पत्तियाँ वह खा सके ! यह शाकाहारी एक निरापद प्राणी है। वह कभी कोई आवाज नहीं करता और खतरे के समय तेजी से दौड़ता है।

४० क्विंटल वजनी भीमकाय पशु 'हिप्पोपोटेमस'

लगभग चार मीटर लंबा, सवा मीटर ऊँचा और चालीस क्विंटल वजन का अद्भुत पशु 'हिप्पोपोटेमस' (दरियाई घोड़ा) भी भीमकाय पशुओं की मण्डली में अपना विशेष स्थान बनाए हुए है ! परन्तु इसके नाम से हमें इस भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए कि वह घोड़ों की बिरादरी का पशु होगा ! सच तो यह है कि अश्व-जाति से उसका कोई नाता-रिश्ता नहीं; वह वस्तुतः वाराह-वर्ग का प्राणी है, जो परिस्थितिवश जलचर बन गया है। अति लघु पैरों पर सधा हुआ उसका ढोल-जैसा बदन धरती को छूता-सा जान पड़ता है ! उधर उसका सिर इतना विशाल, बृहत् जबड़ोंवाला तथा बेहद चौड़े एवं सपाट थूथन से युक्त होता है कि देखकर डर लगता है !

इस जानवर के भयावनेपन की पराकाष्ठा तब होती है, जबकि अपने विशाल जबड़े फैलाकर यह अपना गुफा का-सा मुँह खोलता है ! इस कंदरावत् मुख-विवर में निचले जबड़े के द्वार पर लगभग पचीस-पचीस सेंटीमीटर लंबे दो कराल दंष्ट्र हमें दिखाई देते हैं। ये भयावने दाँत ऐसे जान पड़ते हैं, मानो दो मोटी कीलवत् खूँटियाँ जबड़े की हड्डी में गड़ी हों ! इस भयावनी झाँकी को उसकी बड़ी-सी खुरदरी लाल जिह्वा और भी अधिक डरावना बना देती है ! परन्तु इन डरावने दाँतों से सज्जित होकर भी यह जीवधारी, जहाँ तक कि उसके आहार-विहार का संबंध है, एक निरापद शाकपातभोजी पशु है ! वह जबर्दस्त तैराक और गोताखोर होता है। यह पशु केवल अफ्रीका में मिलता है।

'रेगिस्तान का जहाज'--ऊँट

अपने ऊँचे कद के लिहाज से, हमारा चिरपरिचित पालतू पशु ऊँट भी भीमकाय जानवरों की गणना करते समय कदापि नहीं भुलाया जा सकता। यह अनोखा पशु अपनी बेहद लंबी टाँगें, विचित्र कूब, छोटी-सी पूँछ, लँबोतरे मुँह, लटकते-से होंठ तथा लंबी गरदन के कारण अत्यन्त भौंडा लगता है, फिर भी वह हमारे लिए अत्यन्त उपयोगी है। वही पुराने जमाने से रेतीली मरुभूमि में यातायात का हमारा एकमात्र साधन है। इसी से वह 'रेगिस्तान का जहाज' कहलाता है। ऊँट रेगिस्तानी वनस्पतियों को खाकर ही अपना काम चला लेता है। निर्जल मरुभूमि में सफर करते समय वह अपने पेट की विशेष थैलियों में बहुत-सा पानी जमा कर लेता है, जो हफ्तों उसके काम में आता है। उसके पैरों के चौड़े चपटे तले बालू पर चलने में विशेष सहायक होते हैं। वह काफी बोझ लादकर लंबी डगें भरते हुए कोसों की दूरी तय कर सकता है। इस पशु की एक जाति में (जो मध्य एशिया में पाई जाती है) एक के बजाय दो कूबें होती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ अनोखे थलचर

अगले पृष्ठों पर दी गई तस्वीरों में दिग्दर्शित प्राणियों की अजीब-सी शक्लों पर जरा गौर करो ! क्या तुम इन्हें किसी सनकी चितेरे की मनगढ़न्त करतूत मात्र न कहोगे ? भला, कौन एकाएक यह मान लेगा कि ये हैं दरअसल ऐसे कुछ जानवरों की आकृतियाँ, जो इस धरती पर सचमुच मौजूद हैं ! ये न केवल पृथ्वी पर वन्य दशा में विद्यमान हैं, वरन् इनमें से कई जंतुशालाओं में भी देखे जा सकते हैं । आइए, इनका परिचय प्राप्त करें ।

विचित्र कवचधारी 'आर्माडिल्लो'

पृ० ६३ के चित्र में सबसे ऊपर दिग्दर्शित प्राणी पर जरा अपनी निगाह डालो ! यह कैसा अद्भुत कवचधारी है ? इसका सारा बदन, यहाँ तक कि सिर, पैर और दुम भी, आपस में जुड़ी हुई एक प्रकार की कड़ी अस्थिवत् शल्कों या प्लेटों के कवच से आच्छादित है ! इसका यह कवच कछुए की पीठ पर की ढाल की भाँति दुर्भेद्य है ! इस जिरह-बख्तरधारी के पैर बहुत बड़े आकार के अंकुशों जैसे मजबूत नखों से सुसज्जित हैं, जो संख्या में प्रति पैर तीन से पाँच तक होते हैं । इसके बदन का निचला भाग बालों से ढका रहता है । इस जीव का नाम इसके रूप के अनुरूप ही है—'आर्माडिल्लो' अर्थात् कवचधारी! यह नई दुनिया (विशेषकर दक्षिणी अमेरिका) ही में मिलता है । इसकी छोटी-बड़ी कई उपजातियाँ हैं, जो एकाध मीटर से लेकर पंद्रह-बीस सेंटीमीटर तक के विविध आकारों की पाई जाती हैं ! कुछ जातियों में मुँह चींटीखोर जैसा लंबा या आगे निकला हुआ भी होता है और जीभ काफी लंबी होती है । ये सब 'अदंतक' वर्ग के कीट-

भक्षी प्राणी हैं और अपनी दुर्भेद्य रक्षा-योजना के बावजूद ये केवल रात्रि को ही बाहर निकलते हैं। अपने नाखूनों से ये गहराई तक जमीन खोद लेते हैं और केवल बिलों ही में रहते हैं। इन कवचधारियों को देखकर लाखों वर्ष पूर्व के 'ग्लिप्टोडान' नामक उस विलुप्त जिरहबख्तरधारी का स्मरण हो आता है, जो कि दक्षिणी अमेरिका के इन्हीं क्षेत्रों में कभी विद्यमान था और जिसका आकार गैंडे के बराबर था ! संभवतः ये 'आर्माडिल्लो' उसी के बौने वंशज या नातेदार हों !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'पैंगोलिन' या साल

इसके बाद जो विचित्रवेशी प्राणी उसी पृष्ठ के चित्र में तृतीय स्थान पर दिग्दर्शित हैं, 'पैंगोलिन' या 'साल' कहलाता है। यह अदंतक जंतु केवल एशिया और अफ्रीका ही में पाया जाता है। इसके मुँह में दाँत बिल्कुल नहीं होते और जीभ विशेष प्रकार की चिपचिपी एवं लंबी होती है, जो बाहर निकालकर दूर तक पहुँचाई जा सकती है। यह योजना इन प्राणियों के शरीर में प्रकृति ने इसलिए की है, ताकि ये चींटियों और दीमक आदि को (जो कि इनका एकमात्र आहार हैं) सरलता से चट कर सकें। लँबोतरे मुँह और बड़े-बड़े नाखूनों से युक्त लगभग पौन मीटर से पौने दो मीटर तक के आकार के इस अनोखे जीव की मुख्य विशेषता इस बात में है कि उसका सारा बदन खपरैल की भाँति एक तरह के कड़े सिन्नों या शल्कों से छाया रहता है। उसका यह शल्करचित कवच इतना दुर्भेद्य होता है कि उस पर बंदूक या पिस्तौल की गोली का भी कोई असर नहीं हो पाता ! खतरे के समय यह जानवर इस प्रकार अपने मुँह और दुम को टाँगों के बीच छिपा लेता है कि उसका सारा बदन गेंद की-सी गोल शक्ल का बन जाता है ! तब भला किसकी मजाल है कि उसे तनिक भी हानि पहुँचा सके ! एक तो खपरैल जैसे उसके वे सिन्ने योंही दुर्भेद्य होते हैं, दूसरे संकट में वह उन्हें इस तरह फुला लेता है कि उनकी नोकें, जो तेज धारवाली होती हैं, आक्रमणकारी के लिए खतरा पैदा कर देती हैं ! यह एक डरपोक और निरापद रात्रि-चर जीव है, जो अपने तेज नाखूनों से धरती में बिल खोदकर दिन भर उसी में पड़ा रहता है। इसका बिल जमीन से ढाई-तीन मीटर की गहराई पर पौने दो मीटर के घेरे में होता है, जिसके मुँह को यह मिट्टी से बन्द कर लेता है। यह केवल दीमक या चींटी खाकर ही गुजारा करता है, जिन्हें अपनी चिपचिपी जीभ की मदद से आसानी से यह चाट लिया करता है। चलते समय यह अपने पैरों के नाखूनी पंजों को पीछे की ओर मोड़ लेता है। हमारे यहाँ इसे 'बनरोहू', 'सल्लू साँप' आदि नामों से भी पुकारा जाता है।

ऐंटईटर या चींटीखोर

पैंगोलिन तथा आर्माडिल्लो का यह दूर का अदंतक रिश्तेदार केवल दक्षिणी और मध्य अमेरिका तथा ट्रिनिडाड में ही मिलता है। इसकी वेशभूषा की विशेषता यह है कि इसका शरीर सिन्नों या शल्कों से ढका न होकर केवल सुअर के-से कुछ रूखे कड़े बालों से आच्छादित रहता है। ये केश उसके आगे के पैरों, पुट्ठों और दुम पर जाकर बहुत घने हो गये हैं। इस जंतु की सबसे बड़ी जाति का डीलडौल पौने तीन मीटर तक का पाया जाता है। इसका मुँह बेहद लंबी सँकड़ी चोंच-सा होता है और दुम बड़ी-सी झामरी झाड़ू

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जैसी होती है। काले-सलेटी रंग के इसके बदन पर कंधों और छाती से लगाकर ठेठ पिछले पुट्ठों तक काले रंग की एक दोहरी पट्टी-सी फैली रहती है, जिसकी कोर पर सफेद बालों की किनारें सुशोभित होती हैं। इसके अगले पैर तथा छाती का बहुत-सा अंश एकदम सफेद या बादामी-सा होता है। इन अगले पैरों में आगे निकला हुआ एक बड़ा-सा नख होता है, जो जमीन खोदने में काफी सहायक होता है। ये कीटभक्षी भी रात्रिचर होते हैं।

चींटीखोरों की बृहत् बिरादरी का एक दूर का रिश्तेदार 'आर्ड-वार्क' कहलाता है, जो केवल अफ्रीका ही में पाया जाता है। लगभग डेढ़-पौने दो मीटर लंबा यह जीव देखने में बड़ा ही भौंडा होता है। इसके बेहद लंबी थूथनवाले मुँह पर खरगोश-जैसे बड़े लंबे कान ऊँचे उठे रहते हैं! पीठ भी खरगोश या चूहों की-सी उभरी हुई होती है और दुम छछूँदर की-सी पाई जाती है। इसकी एक विशेषता यह होती है कि इसके मुँह में कुछ दाँत भी होते हैं, जो बिना जड़ के होते हैं। इसका भी आहार दीमक और चींटियाँ हैं! यह भी अपने अन्य कीटभक्षी बंधुओं की भाँति निशाचर है और धरती में बिल खोदकर रहता है।

स्लॉथ, जो वृक्षों पर उल्टा लटके रहता है

अब हम तुम्हारा ध्यान पृ० ६५ के चित्र में सबसे ऊपर प्रदर्शित जंतु की ओर ले जाना चाहते हैं, कारण वह भी ऊपर उल्लिखित 'अदंतक-वर्ग' का ही एक जीव है। वृक्षों की डालियों को अपने पंजों से पकड़कर सदैव औंधा लटका रहनेवाला यह अनोखा जानवर 'स्लॉथ' कहलाता है। यह अधिकतर दक्षिणी अमेरिका के ब्रजिल जैसे घने जंगली प्रदेशों ही में पाया जाता है। यह नितान्त वृक्षवासी जीव है। जमीन पर आकर यह बिल्कुल बेबस और लाचार हो जाता है! यदि कोई इसका वह औंधा आसन छुड़ाकर धरती पर इसे ला बिठाये, तो

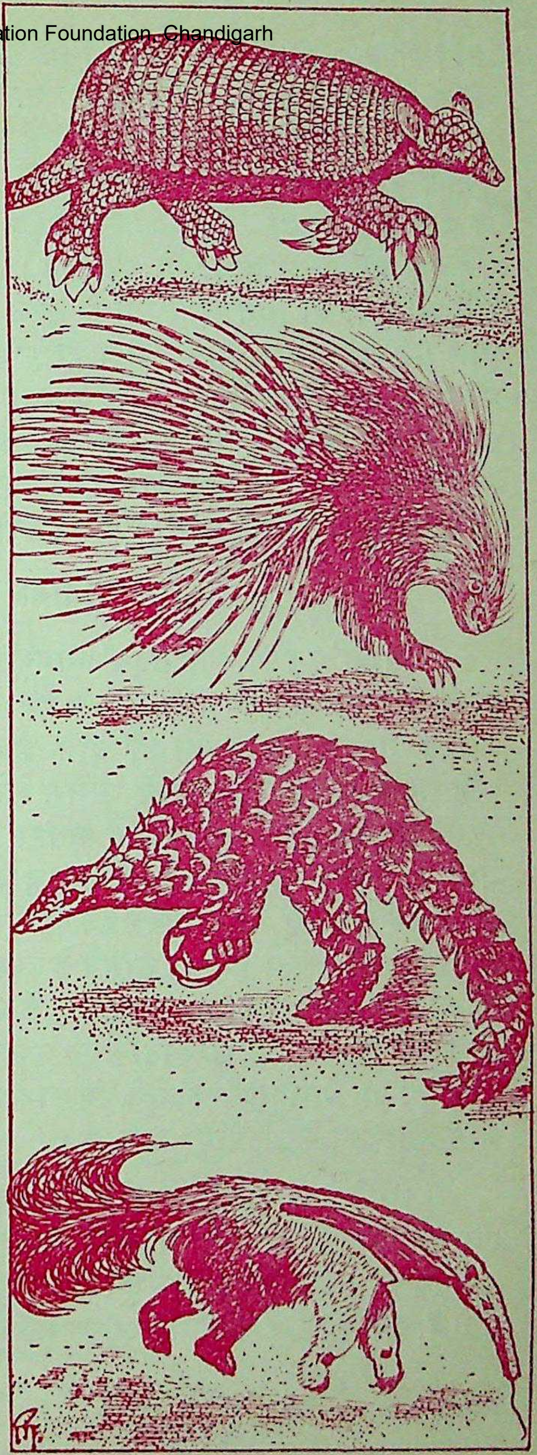

(क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर)
आर्माडिल्लो; साही; साल; और चींटीखोर। 'साही' को छोड़कर इनमें के शेष तीनों प्राणी वैज्ञानिकों द्वारा 'अदंतक' समूह में शरीक माने गये हैं!

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वहाँ भी यह हाथ-पैर फैलाकर चित ही लेट जाता है। इन जंतुओं के लिए मानो सारी दुनिया उल्टी है ! इस जानवर का नाम 'स्लॉथ' इसलिए पड़ गया है कि एक तो यह बड़ा ही सुस्त या काहिल जंतु है; दूसरा देखने में भालू जैसा जान पड़ता है, यद्यपि भालुओं से इसका दूर का भी कोई नाता नहीं है ! यह शुद्ध शाकाहारी है। इसके दाँत केवल नाममात्र के होते हैं। इसका शरीर बालों से ढका रहता है। रंग भूरे-बादामी-सा होता है, जिस पर एक हरितवर्ण छाया-सी रहती है। सिर गोल और छोटा, कान नाममात्र के, हाथ-पैर लंबे और दो या तीन उँगलियों से युक्त एवं मुड़े हुए नाखूनदार पंजोंवाले होते हैं। इसके बाल पर से वर्षा का पानी शीघ्र ही झर जाता है। उन पर काई की जाति की एक तरह की नन्हीं-नन्हीं वनस्पतियाँ भी उग आती हैं, जिससे उन पर हरी-हरी झाईं देख पड़ती है। इसी से इन जीवों के बारे में यह कहा गया है कि ये अपने बदन पर मानो हरा बगीचा उगाये रहते हैं ! ये सुस्त जीव इसी प्रकार औंधे लटके-लटके सारी जिन्दगी काट देते हैं और उसी प्रकार औंधे रहकर एक से दूसरी डाली पर धीरे-धीरे खिसकते रहते हैं।

विचित्र शूलधारी 'साही'

'साही' या 'पारक्यूपाइन' नामक विचित्र वेशधारी जंतु-संसार का एक निराला ही प्राणी है। इसकी मुख्य विशेषता उसके बदन पर उगे हुए मिश्रित काले-सफेद रंग के उन असंख्य तीखे काँटों का वह परिधान है, जो कि इस प्राणी के कारगर अस्त्र हैं। ये तीखे काँटे देखने में बड़े ही सुहावने मालूम देते हैं और साधारणतया नीचे सिमटे हुए-से रहते हैं। परन्तु जब यह प्राणी अपने लिए खतरा देखता है, तो फौरन् ही वे इसके बदन पर खड़े हो जाते हैं, जिससे कि वह अधिक फूला हुआ और खतरनाक-सा दिखाई पड़ने लगता है। शत्रु को डराने के लिए यह जानवर इन काँटों को हिलाकर उनसे एक प्रकार की खन-खन आवाज भी निकालने लगता है। यह सामने से दुश्मन पर हमला करने के बजाय अपनी दुम की ओर से या बाजू से वार करता है। प्राय: शत्रु के नजदीक खिसककर वह इस तरह अपनी दुम को झकझोरता है कि उसके तीखे काँटों में से कुछ उसके शरीर में से छूटकर दुश्मन के बदन में चुभ जाते हैं ! यह प्राणी कृन्तकदन्ती वर्ग का सदस्य है। यह भारत के अलावा अफ्रीका, दक्षिणी योरप और अमेरिका में भी पाया जाता है।

साही रात ही को विचनेवाला जीव है। यह शाकपातभोजी प्राणी है और प्राय: खेतों एवं बाग-बगीचों पर धावा बोलकर उन्हें चौपट करता रहता है। आकार में यह पौन मीटर के लगभग और वर्ण में श्यामल-भूरे रंग का होता है। काँटों के अलावा इसके शरीर पर बाल भी होते हैं, जो बड़े कड़े होते हैं। इसका मुँह चूहे जैसा तथा पैर तीखे नाखूनी पंजोंवाले होते हैं।

जंतु-जगत् का अनोखा इंजीनियर—'बीवर'

कृन्तकदन्ती प्राणियों का अन्य एक उल्लेखनीय जंतु 'बीवर' नामक अनूठा जानवर है। गिलहरी या चूहे की-सी शक्ल के इस पौन मीटर आकार के बालदार प्राणी का सिर गोल, कान बहुत छोटे, पिछले पैर बत्तखों के-से जालदार और दुम बेहद चपटी, सिन्नेदार तथा पचीस सेंटीमीटर लंबी होती है। केवल योरप-अमेरिका के उत्तरी इलाकों का निवासी यह जानवर जंतु-जगत् का सबसे चतुर इंजीनियर है ! इसकी निर्माण-कला-विषयक दक्षता का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिचय हमें मिलता है उनके द्वारा अपने वास-स्थान के पास के जलाशयों पर बाँधे जानेवाले अत्यन्त आश्चर्यजनक कृत्रिम बाँधों के रूप में ! इन बाँधों को, जिनकी लंबाई पचीसों मीटर और ऊँचाई डेढ़-दो मीटर तक होती है, ये प्राणी किसी नाले का पानी रोकने के लिए बाँधा करते हैं । इस कार्य को करते समय ये आधुनिक इंजीनियरिंग-कला के श्रेष्ठतम सिद्धान्तों और नियमों का पालन करते देखे जाते हैं ! उदाहरणार्थ, यदि बाँध अधिक लंबा हुआ, तो वे उसे धारा के प्रवाह के विरुद्ध एकदम आड़ा न रखते हुए, एक घुमाव-सा देकर, गोलाई में तिरछा-सा बनाते हैं, ताकि पानी का जोर कम किया जा सके ! इस कार्य के लिए वे जलाशय के तटवर्ती वृक्षों की सामग्री से ही काम लेते हैं । वे वृक्षों के मोटे तनों को अपने तीक्ष्ण दाँतों से कुतरकर गिरा देते हैं । उनके डेढ़ मीटर लंबे टुकड़े करके वे उन्हें खींचते हुए बाँध की जगह पर ले जाते और टेढ़े-तिरछे ढंग से उन्हें एक-दूसरे पर रचते जाते हैं । इस काम में एक साथ कई बीवर मिलकर काम करते हैं । खाली जगह को भरने के लिए ये छोटी-छोटी टहनियों, पेड़ों के छिलकों, घास-पात, कीचड़, मिट्टी आदि मसाला काम में लेते हैं । सबसे बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि दूर के वृक्षों को गिराकर उनके भारी लट्ठों को बाँध की जगह तक लाने के लिए ये लघुकाय प्राणी वहाँ तक छोटी-छोटी नहरें-सी खोद डालते हैं और उन लकड़ियों को उनकी जलधारा में बहाकर ठेलते हुए निश्चित स्थान तक ले आते हैं !

तुम पूछ सकते हो कि आखिर यह छोटा-सा प्राणी यह सारी मेहनत किसलिए किया करता है ? इसका उत्तर यह है कि स्थलचर होकर भी वह है दरअसल पानी पर निर्भर एक जीव ! इसीलिए वह जलाशयों के किनारे ही अपना घर बाँधता है । अपने बिलनुमा घरों की रचना करने में भी ये प्राणी अपनी

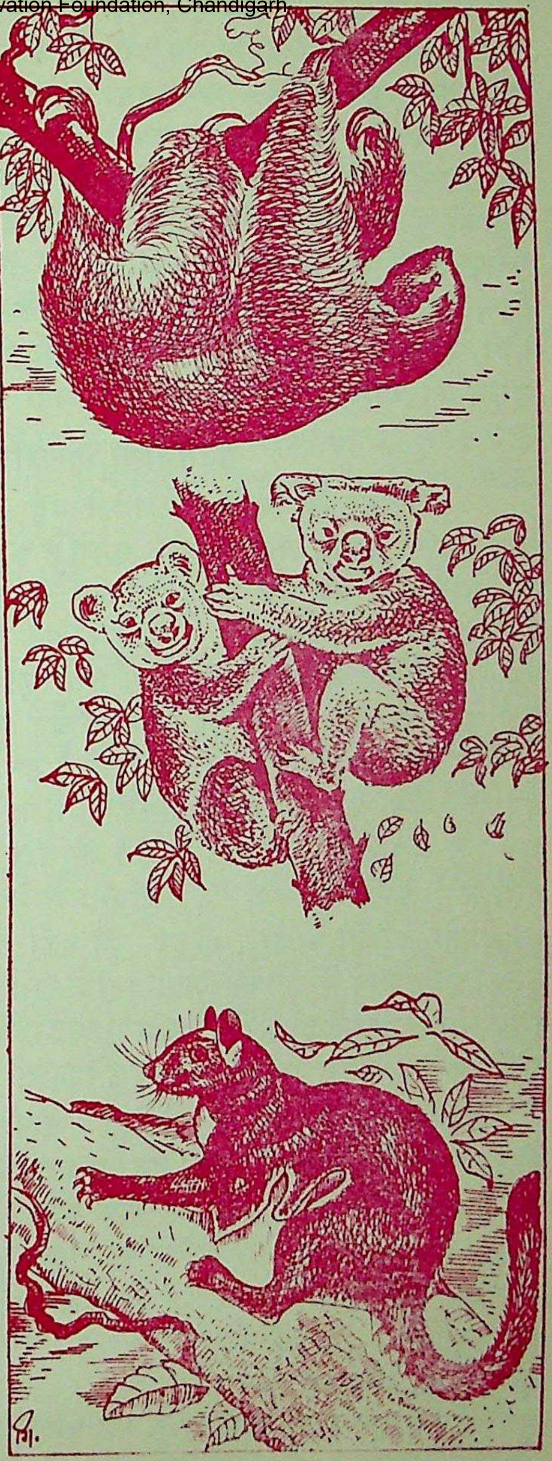

(क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर)
वृक्षों पर औंधा लटका रहनेवाला 'स्लॉथ'; बच्चों के लिए पेट की जेबनुमा थैली से युक्त 'कोआला' नामक विचित्र वृक्षवासी; और उड़नेवाली गिलहरी ।

इंजीनियरी की कला का पूर्ण परिचय देते हैं। इनके ये घर गुंबदनुमा छत से ढके हुए होते हैं और बाँध द्वारा पानी रोककर बनाये गये उस कृत्रिम जलाशय या तालाब से वे एकदम सटे हुए रहते हैं। ये घर स्वतः तो पानी की सतह से ऊपर ही रहते, परन्तु उनमें से आने-जाने के रास्ते या द्वार इस ढंग के बने हुए होते हैं कि वे सदा पानी ही में डूबे रहते हैं। तारीफ तो इस बात में रहती है कि भीतर से घर एकदम सूखा बना रहता है और उसकी गुंबदनुमा छत भी मिट्टी आदि से पक्की की जाकर इतनी मजबूत बनी रहती है कि उसमें ऊपर से वर्षाजल की एक बूंद भी नहीं आ पाती ! प्रायः एक ही घर में कई बीवर मिलकर रहते हैं और एक ही जलाशय के आसपास ऐसे अनेक घर बने रहते हैं। जलजंतु होने के नाते, बीवर स्वभावतः ही कुशल तैराक होता है। इसकी खाल अपने मुलायम समूर की बदौलत बड़ी ही कीमती मानी जाती है। (देखो पृ० ६७ का चित्र।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उड़नेवाली गिलहरियाँ, हिरनामूसा, आदि

कुतरकर खानेवाले तीक्ष्णदंती वर्ग के सभी जीवधारियों का परिचय देने के लिए तो यहाँ पर्याप्त स्थान नहीं है और उनमें से कई एक--जैसे चूहा, गिलहरी, खरगोश, आदि--से आम तौर पर सब कोई वाकिफ हैं, तथापि इस वर्ग के कुछ विचित्र नमूनों का उल्लेख परम आवश्यक है। उनमें से एक हैं तरह-तरह की उड़नेवाली गिलहरियों की वे जातियाँ, जो अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया तथा एशिया के भारत, बर्मा आदि प्रदेशों में पाई जाती हैं। ये नन्हें रात्रिचर प्राणी देखने में बड़े ही कमनीय होते हैं। इनकी आँखें स्वप्निल-सी होती हैं। पर सबसे अद्‌भुत तो होता है इनके बदन की दोनों बाजू में हाथ की कलाई से पैर के टखने तक फैला हुआ उनकी त्वचा का वह विस्तार, जो कि हाथ-पैर फैलाने पर मर्जी के अनुसार चमगादड़ के डैने या पंख की तरह तनकर इन्हें हवा में तैरने में सहायता देता है ! इसी व्यवस्था की सहायता से ये गिलहरियाँ एक पेड़ से उछलकर, हवा में उड़ती या पैरती हुई-सी, पचास मीटर की दूरी तक के दूसरे किसी वृक्ष पर जा उतरती हैं ! इनकी इस उड़ान में उनकी चपटी चौड़ी दुम मानो निदेशक पतवार का-सा काम देती है। ये गिलहरियाँ दिन में प्रायः किसी वृक्ष के कोटर में अपने बदन को गोलाकार-सा बनाकर छिपी हुई सोई रहती हैं, केवल रात्रि को बाहर निकलती हैं। हमारे देश में इन्हें 'सूरजभगत' कहते हैं।

क्रन्तकदंतीय वर्ग के विचित्र जीवों में एक 'हिरनामूसा' भी है। यह अपनी बेहद ऊँची पिछली टाँगों पर तीव्र वेग से उछल-उछलकर दौड़नेवाला एक अनोखा प्राणी है। इसके शरीर का सबसे विचित्र अङ्ग इसकी बीस सेंटीमीटर लंबी दुम होती है, जिसके सिरे पर सिंह की पूँछ का-सा बालों का एक गुच्छा होता है ! इस दुम के सहारे उछल-उछलकर यह ऐसी छलाँगें भरता है कि देखनेवालों को यह भ्रम हो जाता है, मानो वह उड़ा जा रहा हो ! इसके कान बहुत बड़े और आँखें भी काफी बड़ी होती हैं। इसे देखकर कँगारू की याद आ सकती है। हमारे अपने देश के अलावा यह मध्य एशिया, दक्षिण-पूर्वी योरप एवं पूर्वी अफ्रीका में भी पाया जाता है।

संसार का सबसे अनोखा आत्मघाती--'लैमिङ्ग'

दूसरे एक छोटे-से क्रन्तकदंती--'लैमिङ्ग'--की भी कथा बड़ी दिलचस्प है। एक मामूली-सी चुहिया के आकार का लगभग आठ सेंटीमीटर लंबा यह प्राणी नार्वे और स्वीडन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का निवासी है। प्रति बारह वर्षों में एक बार इस लघुकाय प्राणी की एकबारगी ही बाढ़-सी आ जाती है और उसकी संख्या तीव्रता से बढ़ने लगती है। तब, संभवतः, आहार की कमी का अनुभव कर उसकी वह फौज, या तो सीधे पश्चिम में अटलांटिक महासागर की ओर या पूर्व में एक समुद्री खाड़ी की ओर, बिना किसी बाधा का खयाल किये अग्रसर होने लगती है। ये जीव लगभग एक मीटर के फासले पर रहनेवाली समानान्तर पंक्तियों में चलते हैं और रास्ते में पड़नेवाली नदियों और झीलों को भी इसी तरह सीधे चलते हुए तैरकर पार करते हैं, चाहे इस प्रयत्न में उनमें से कई डूब ही क्यों न जाएँ! राह के पहाड़ों को भी, चक्कर काटकर बचाने के बजाय, सीधी चढ़ाई करके ही वे लाँघते हैं और घास या अनाज के पुआलों की भी परिक्रमा करने के बजाय, उनके बीच से सुरंगनुमा रास्ते बनाकर आगे बढ़ते हैं! उनका यह अभियान रात ही को चलता है, दिन में प्रायः वे पड़ाव डालकर विश्राम करते और सोते रहते हैं। निस्संदेह, जिस ओर से उनका यह दल निकलता है, उस तरफ जो भी अनाज, घास-पात आदि राह में पड़ता है, उसका सफाया होता चला जाता है। परन्तु आखिर यह काफिला जाता कहाँ है?

तुम्हें यह जानकर विस्मय होगा कि इस तरह निरंतर बाधा-अड़चनें लाँघने पर उसकी समाप्ति आखिर जाकर होती है उन सबके सामुदायिक आत्मघात के रूप में, केवल मौत के दामन में! कारण, अन्त में जब वे समुद्रतट पर पहुँचते हैं, तो अपनी अब तक की लगातार बढ़ते रहने की आदत से लाचार ये मूर्ख समुद्र में भी उसी तरह उतर पड़ते हैं जैसे कि अब तक नदी-नालों में उतरते रहे थे। वे सागर की लहराती हुई अपार जलराशि में कूदते चले जाते हैं और किसी जलजंतु के मुख में समाकर या डूबकर अपनी इहलीला समाप्त कर देते हैं! बारह वर्ष बाद जब पुनः उनकी भीड़ काफी बढ़ जाती है, तो फिर से ज्यों-का-त्यों यही आत्मघात का खेल दोहराते हुए उनका काफिला सागर की ओर चल पड़ता है! उनका यह महाप्रयाण सदियों से होता चला आ रहा है!

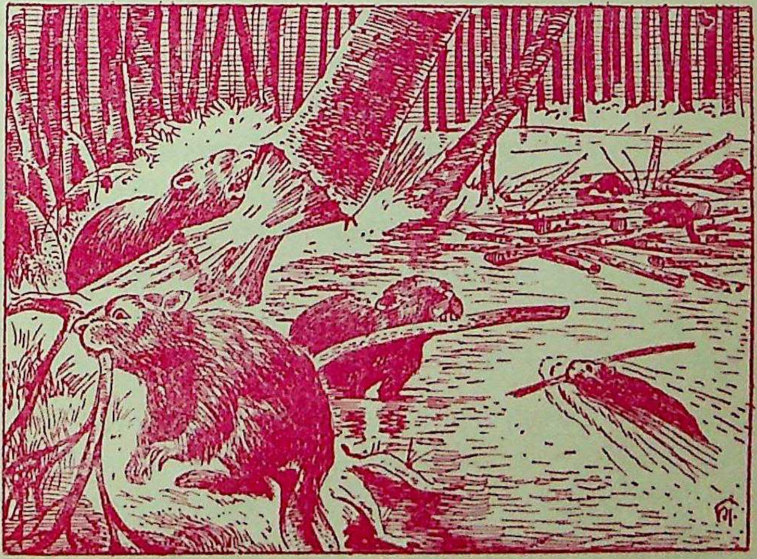

जंतु-जगत् के चतुर इंजीनियर बीवर बाँध बनाने के लिए वृक्षों को काटकर लकड़ियाँ ढो रहे हैं।

भाँति-भाँति के चूहे

स्तनपोषी-समूह में जितनी अधिक बिरादरियाँ कुतरकर खानेवाले तीक्ष्ण-दंती जीवों की मिलती हैं, उतनी और किसी भी दूसरे वर्ग की नहीं मिलतीं! न केवल इनकी जातियों-उपजातियों ही की तादाद सबसे बढ़ी-चढ़ी है, बल्कि प्रत्येक जाति के सदस्यों की संख्या भी अनगिनत है। चूहे ही की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मिसाल लो--कहते हैं, यदि एक जोड़ा भूरे चूहे की तीन वर्ष की समस्त संभावित सन्तान और पुनः उन सबकी सन्तानों की पूरी मर्दुमशुमारी की जाय, तो वह दो करोड़ से भी अधिक संख्या पर जा पहुँचेगी ! यह छोटा-सा जीव अपने कुतरनेवाले दाँतों से प्रति वर्ष करोड़ों रुपये के अनाज की हानि करता है और उसके कारण प्लेग आदि बीमारियों के फैलने से जो हानि होती है, सो अलग ! गिलहरियों की तरह चूहों की भी अनेक जातियाँ हैं। उनमें काले, भूरे और साँवले चूहे तथा मूस, घूँस आदि के अलावा 'सफेद चूहे', 'जल-चूहे', 'मुश्क-चूहे', 'गानेवाले चूहे', आदि कई जातियों के नाम गिनाये जा सकते हैं। इसी सिलसिले में 'छछूँदर', 'काँटाचूहा' या 'झाऊ चूहा', 'श्रू' आदि उन कीटभक्षी प्राणियों का भी उल्लेख किया जा सकता है, जो कि चूहों या कुतरकर खानेवाले जीवों से दूर का भी संबंध न रखते हुए भी संख्या में उन्हीं की तरह बढ़े-चढ़े हुए हैं। ये सब स्तनपोषी जीव हैं !

अण्डा देनेवाले विचित्र स्तनपोषी--'बत्तखचोंचा' और 'शूलधारी चींटीखोर'

अब स्तनपोषी-वर्ग के ऐसे दो अद्भुत प्राणियों की जानकारी हम तुम्हें कराने जा रहे हैं, जो अपनी सन्तान को पैदा करते हैं अण्डों द्वारा और उनका पालन-पोषण स्तनपोषियों की तरह दूध पिलाकर करते हैं ! इन अनूठे स्तनपोषियों का दुग्ध स्तनों से नहीं, बल्कि बहुत-से नन्हें-नन्हें छिद्रों से निकलता है, जो कि उनके पेट पर बने रहते हैं !

ऐसे केवल दो प्राणी इस समय पृथ्वी पर मौजूद हैं। इनमें से एक का नाम 'बत्तख-चोंचा' या 'प्लेटीपस' रक्खा गया गया है और दूसरा 'एकिड्ना' या 'शूलधारी चींटीखोर' कहलाता है। प्रथम जंतु लगभग पचास सेंटीमीटर लंबा भूरे रंग के घुँघराले घने ऊनी बालों से ढका एक भौंडा-सा जानवर होता है। इसके लगभग छः सेंटीमीटर लंबी और पाँच सेंटीमीटर चौड़ी बत्तखों की-सी चपटी चोंच होती है। यह प्राणी केवल ऑस्ट्रेलिया और टस्मानिया ही में मिलता है। जलपक्षियों की तरह इसके पैर जालदार होते हैं ! इन योग्यताओं की बदौलत यह जीव जलाशयों में प्रवेश करके उनके तले पर के कीचड़ को अपनी चपटी चोंच से उलट-पलट डालता और उनमें के कीड़ों, केंचुओं तथा छोटे-छोटे घोंघों आदि को बटोरकर उन्हें अपने गालों के भीतर बनी हुई विशेष प्रकार की थैलियों में भर लेता है। अपने पंजों के मजबूत नाखूनों द्वारा वह तेजी से मिट्टी खोद लेता है। वह बिल बनाकर रहता और शत्रुओं को धोखा देने के लिए उस बिल में कुछ झूठे सुरंगनुमा रास्ते बनाता है, जिससे कि वे उसका पता न पा सकें ! ये प्राणी जबर्दस्त तैराक और गोताखोर होते हैं। इनके नर के पिछले पैर की जाँघ में एक खोखला-सा कड़ा शूल-सा होता है, जो कि इनके बदन में स्थित विष-ग्रंथियों से संबद्ध होता है। यह शूल इस जंतु का एक भयंकर शस्त्र है !

इस वर्ग का दूसरा अंडा देनेवाला स्तनपोषी –'शूलधारी चींटीखोर' या 'एकिड्ना'– भी ऑस्ट्रेलिया का ही निवासी है। इसका बदन 'साही' या 'काँटाचूहे' की भाँति एक प्रकार के तीखे शूलवत् कड़े काँटों से ढका रहता है। संकट पड़ने पर काँटाचूहे या साल की भाँति यह भी अपने बदन को कुंडलाकार समेटकर गेंद जैसा बन जाता है ! इसका मुँह चींटीखोरों जैसा लंबी थूथनवाला होता है और उन्हीं की-सी चिपचिपी इसकी जीभ भी होती है। यह सारी योजना कुदरत ने इस प्राणी में इसलिए की है कि इसका मुख्य आहार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चींटी, दीमक आदि जीव हैं। परन्तु हमारे लिए तो इसका महत्व इस बात में है कि यह एक ऐसा प्राणी है, जो अंडज होकर भी बच्चों को अंडों से बाहर निकलने पर अपने बदन में बनी हुई एक थैली में रक्खे रहता है, जहाँ कुछ हफ्तों तक वह उनका पालन-पोषण करता है। 'साही' आदि की तरह यह प्राणी भी बिल बनाकर रहता और अपने पंजों से बड़ी तेजी के साथ जमीन खोद डालता है।

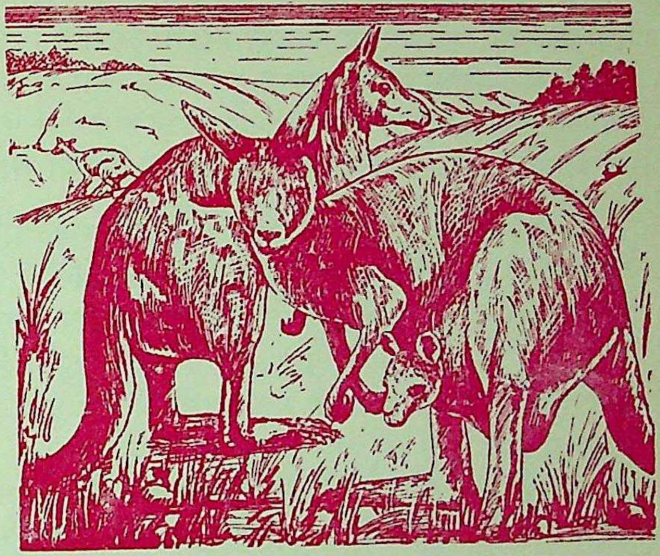

बच्चे को पेट की जेबनुमा थैली में बिठाये रहनेवाला जीव 'कँगारू'।

बच्चों को पेट की जेबनुमा थैली में लिए रहनेवाले स्तनपोषी—'कोआला', 'ओप्पोसुम' और 'कँगारू'

अब तुम्हें स्तनपोषी-समुदाय के कतिपय ऐसे अजीब प्राणियों का हाल हम सुनाना चाहते हैं, जो प्रसव के बाद संतान को एक उम्र तक अपने पेट के ऊपर बनी हुई एक तरह की जेबनुमा थैली में बिठाये फिरते हैं। इस वर्ग का सबसे मशहूर प्राणी 'कँगारू' है, जो केवल ऑस्ट्रेलिया ही में पाया जाता है। अन्य दो उल्लेखनीय जीव हैं—एक तो ऑस्ट्रेलिया का निवासी, वृक्षों पर चढ़कर रहनेवाला, भालू की-सी शक्ल का 'कोआला' नामक छोटा-सा अनोखा प्राणी; दूसरा 'ओप्पोसुम' नामक छोटा-सा जानवर, जो केवल अमेरिका ही में मिलता है।

'कोआला' आकार में पौन मीटर लंबा एक घने बालवाला जानवर है, जिसके कान भालुओं जैसे, बहुत बड़े, गोल और बालों के गुच्छों से छाये हुए रहते हैं, तथा पैर बहुत छोटे और तोतों की-सी उँगलियोंवाले होते हैं। इसके दुम बिल्कुल नहीं होती, बदन का रंग सलेटी-सा होता है और समूर बहुत घना पाया जाता है। ये जीव ऑस्ट्रेलिया के युकैलिप्टस वृक्ष की निचली डालियों पर चढ़कर दिन भर सोते रहते हैं और शाम होने पर उछलने-कूदने लगते हैं। ये डेढ़ मीटर तक ऊँचे उछल जाते हैं। कोआला प्रसव के तीन महीने बाद तक बच्चे को पेट के बाहरी हिस्से में बनी हुई एक जेबनुमा थैली में लिए रहते हैं। जब वह बच्चा कुछ बड़ा हो जाता है, तो माँ के गले में हाथ डाले उसकी पीठ पर चिपका रहता है।

'ओप्पोसुम' बड़े नर्म बालवाला एक वृक्षवासी स्तनपोषी है। वह एक बार में पाँच से चौदह तक बच्चे दिया करता है और सो भी साल में दो-तीन बार ! ये बच्चे जनमते ही रेंगकर मादा के पेट पर बनी हुई जेबनुमा थैली में घुस जाते हैं। वहीं दूध पीते हुए वे बड़े होते हैं। इस जीवधारी की दुम लगभग तीस सेंटीमीटर लंबी होती है, जिसे नई दुनिया के वानरों की तरह पेड़ों की डालियों में लपेटकर वह उससे पाँचवें हाथ का-सा काम लेता है। प्रायः इसके दस-बारह बच्चे अपनी छोटी-छोटी दुमें माँ की दुम से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिपटाये उसकी पीठ पर चढ़े रहते हैं ! यह रात्रिचर प्राणी दिन में किसी वृक्ष की कोटर या डालियों की झुरमुट में छिपा सोता रहता है। वह फलों से लेकर कीड़े, अण्डे, छोटे-छोटे पक्षी और जानवर तक सभी कुछ खा लेता है। जब यह सामने संकट देखता है, तो लोमड़ी की तरह एकदम मुर्दा-सा बनकर जमीन पर लेट जाता है और ज्योंही मौका पाता है, उठकर भाग खड़ा होता है ! इसका मुँह भी लोमड़ियों का-सा लंबा होता है।

बच्चों को पेट की जेबनुमा थैली में रखनेवाले स्तनपोषियों में सबसे प्रसिद्ध जीव 'कँगारू' है। देखने में यह एक हास्यास्पद बेडौल पशु जान पड़ता है ! उसके शरीर का अगला हिस्सा तो कुत्ते के-से डीलडौल का और पिछला धड़ मानो ढोरों की देह जैसा भारी होता है। इस पर उसके पृष्ठभाग से जुड़ी रहती है एक बहुत मोटी, लंबी एवं वजन के मारे जमीन ही पर पड़ी-सी रहनेवाली अजीब दुम, जिससे यह पशु चलते और उठते-बैठते समय तीसरी टाँग की भाँति सहारा लिए रहता है ! कँगारू की दो जातियाँ मिलती हैं—एक ललछौंह-भूरी, दूसरी हल्के राखी वर्ण की। राखी वर्ण का कँगारू बहुत बड़ा होता है। उसके प्रौढ़ नर तो पौने दो मीटर तक उँचे और एक क्विटल वजन के पाये जाते हैं ! बेडौल बदन का होने पर भी कँगारू बड़ी जबर्दस्त छलाँग मारनेवाला प्राणी है। यह साधारणतया दुम घसीटता हुआ-सा उँकड़ू-उँकड़ू और धीरे-धीरे चलता है, परन्तु जब वह भड़क उठता है, तो एकदम आठ-नौ मीटर लंबी छलाँग भरने लगता है ! उस समय वह दो-ढाई मीटर ऊँची बाड़ को भी आसानी से कूद जाता है। ओपोस्सुम की तरह इसके भी पेट पर बच्चों को रखने के लिए एक जेबनुमा थैली रहती है ! इसके नवजात शिशु पैदा होते ही रेंगकर इसमें जा घुसते हैं, यद्यपि उस समय वे केवल ढाई सेंटीमीटर लंबे और दृष्टिहीन होते हैं। इसी थैली की दीवार में स्थित स्तनों से दूध पी-पीकर वे बड़े होते हैं। उस थैली से वे पहले-पहल चार महीने बाद बाहर निकलते हैं। कँगारू एक वनस्पतिभोजी प्राणी है। वह स्वभाव से भीरु होता है। उसकी आदत दिन भर पड़े रहकर सुस्ताते रहने और केवल सुबह-शाम आहार आदि की पूर्ति के हेतु हिलने-चलने की होती है। इस प्राणी की देखने, सुनने और सूँघने की शक्ति काफी तीव्र होती है। कँगारू प्रायः आपस में मनुष्यों की तरह बाकायदा 'घूँसेबाजी का खेल' खेलते भी देखे जाते हैं।

मृग-समुदाय—भाँति-भाँति के हिरन, बारहसिंघे, नीलगाय आदि

थलचरों की दुनिया में एक बहुत बड़ी तादाद मृग-समुदाय के जानवरों की है। इन मृगों की अनेक जातियाँ संसार के विविध भागों में, ठंढे ध्रुवप्रदेशों से लेकर ठेठ विषुवत् उष्ण प्रदेशों तक, फैली हुई हैं। इनमें देखने में सबसे भव्य और बड़े डीलडौल के मृग बारहसिंघे और उसकी बिरादरी के हैं। इसके विपरीत सबसे सुन्दर, कमनीय और मनभावनी मृग-जातियाँ हिरनों की हैं, जो हमारे अपने देश में 'कृष्णसार', 'चिकारा', आदि विविध नामों से पुकारी जाती हैं। बारहसिंघा-वर्ग के कतिपय प्रख्यात भारतीय मृग 'चीतल', 'साँभर', 'माहा', 'हंगल', 'पाढ़ा', 'काकड़' आदि हैं, जिनमें डीलडौल और सींगों के फैलाव के लिहाज से 'साँभर' सबसे बड़ा है। इसके प्रौढ़ नर का कद कंधों की जगह डेढ़ मीटर से भी अधिक और लंबाई ढाई-पौने तीन मीटर तक की होती है। वजन में ये दो क्विटल तक के हो सकते हैं। ये बारहसिंघे इसलिए कहलाते हैं कि इनके नरों के मस्तक पर उगे हुए मीटर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भर लम्बे सींगों में वृक्षों की डालियों की-सी शाखें फूटी रहती हैं। ये शाखें 'साँभर' में तो प्रति ओर तीन ही होती हैं, परन्तु 'माहा' और 'हंगल' में वे निश्चय ही प्रति ओर छः-छः अर्थात् कुल मिलाकर बारह की संख्या तक पहुँची हुई रहती हैं। इन सींगों को ये प्राणी समय-समय पर उतार देते या गिराते भी पाये जाते हैं, जिनकी जगह पर कालान्तर में नये सींग निकल आते हैं! 'हंगल' केवल काश्मीर के शीत वन्य प्रदेशों ही में पाया जाता है। यह साँभर से भी भारी वजन का प्राणी होता है। 'माहा' हिमालय की तराई और देश के मध्यवर्ती पर्वतीय वन्य प्रदेशों का वासी है। इन सभी पशुओं को झुंडों ही में रहने की आदत है, परन्तु जोड़ा बँधने से पहले ये अकेले भी भटकते हुए देखे जा सकते हैं। जब खतरे का सामना होता है, तो नर साँभर एक अजीब तरह की हुँकार-सी आवाज करके पैरों को जोरों से पटकते हैं। कहते हैं, धोखा देने के लिए बाघ इनकी इस आवाज की हूबहू नकल किया करता है!

भारतीय मृगों की छोटी जातियों में 'चिकारा' अपनी बड़ी-बड़ी सुन्दर आँखों के लिए प्रख्यात है और साधारण 'कृष्णसार हिरन' अपनी कलछौंह बादामी रंग की खाल तथा बल खाये हुए तीखे लंबे तुरहीनुमा सींगों के लिए! ये हिरन जबर्दस्त चौकड़ी भरनेवाले द्रुतगामी पशु होते हैं। अन्य प्रख्यात भारतीय मृगों में हिमालय की ऊँची श्रेणियों में पाये जानेवाले 'कस्तूरी-मृग' का उल्लेख आवश्यक है, जिसकी नाभि से 'कस्तूरी' या मुश्क नामक सुगंधित पदार्थ मिलता है। इसके मुँह से दो दंतियाँ-सी निकली रहती हैं!

भारत से बाहर भी बारहसिंघों की अनेक प्रसिद्ध जातियाँ नई-पुरानी दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों में प्राचीनकाल ही से फैली हुई हैं। इनमें उत्तरी अमेरिका के शीतवनों का एकछत्र सम्राट् 'मूज', उसी का उत्तर-योरपीय विलुप्तप्राय बन्धु 'एल्क', उत्तरी ध्रुव-

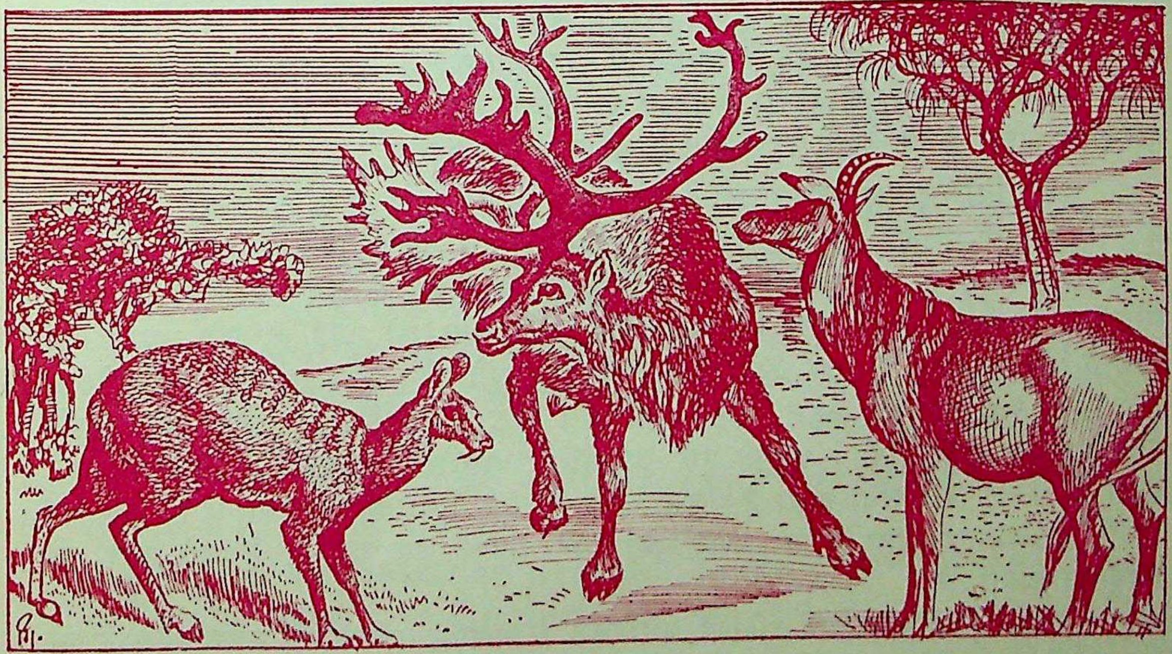

(क्रमशः बाँई ओर से दाहिनी ओर को) कस्तूरी-मृग; बारहसिंघा और नीलगाय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रदेशों के टंड्रा-क्षेत्रों के निवासी 'केरीबू' और 'रेनडीयर' तथा कनाडा एवं संयुक्त राज्य (अमेरिका) के पश्चिमी इलाकों का अधिपति 'वापिती' या 'अमरीकी एल्क', आदि सबसे बड़ी और विख्यात बिरादरियाँ हैं। 'मूज' देखने में बड़ा भौंडा होता है, यद्यपि उसके लगभग दो मीटर फैलाव के शाखदार सींग ताड़पत्र की-सी अपनी विचित्र रचना के कारण आकर्षक कहे जा सकते हैं। वह कद में डेढ़ से दो मीटर तक ऊँचा होता है! ध्रुव-प्रदेशीय बारहसिंघों में नर-मादा दोनों ही के शाखदार सींग होते हैं। उनमें से कई ध्रुव-प्रदेशीय लोगों द्वारा पालतू भी बना लिए गये हैं। वे स्लेज-गाड़ियाँ आदि खींचने के काम में लाये जाते हैं। जोड़ा बाँधने की ऋतु में इनके नर मादाओं के लिए आपस में सिर टकरा-टकराकर तथा सींग उलझाकर प्रचण्ड द्वन्द्व-युद्ध करते हैं।

डीलडौल के लिहाज से बारहसिंघों के बाद मृग-समूह के एक निकट के नातेदार भारतीय 'नीलगाय' का स्थान सर्वोपरि है। यह गौ-वर्ग और मृग-समुदाय के बीच की कड़ी जैसे एंटीलोप-परिवार नामक पशु-वर्ग का प्रतिनिधि प्राणी है। यह हृष्ट-पुष्ट पशु निलछौंह श्यामल-राखी रंग का होता है, इसीसे 'नीलगाय' कहलाता है। इसके पचीस सेंटीमीटर लंबे तीखे सींग होते हैं और ग्रीवा पर घोड़े के बालों की-सी अयाल पाई जाती है। यह खुरदार जंगली प्राणी झुंडों में रहता और खेती को बहुत नुकसान पहुँचाता है।

अनोखे शफवर्गीय--'जेबरा', 'लामा' और 'तापीर'

शफवर्गीय अर्थात् खुरवाले पशुओं में 'जेबरा', 'लामा' और 'तापीर' नामक तीन जानवर अपने ढंग के सबसे निराले हैं। इनमें दर्शनीयता के लिहाज से जेबरा निश्चय ही सबसे बाजी मार ले सकता है। इस खच्चरनुमा पशु की मुख्य विशेषता है इसके बदन पर की चौड़ी-चौड़ी सफेद और काली समानान्तर-सी पट्टियों द्वारा रचित वह खुशनुमा चित्रकारी, जो किसी चितेरे के हाथों बनाई गई-सी जान पड़ती है! बड़े गदहे के आकार का यह पशु केवल अफ्रीका में जंगली स्थिति में पाया जाता है। यह झुंडों में रहता है और अपनी विचित्र वेशभूषा के कारण अँधेरे में या चाँदनी रात में पेड़ों की छाया में इस तरह घुल-मिल जाता है कि देखने पर समीप से भी नहीं देख पड़ता!

दूसरे विचित्र पशु 'लामा' को देखते ही हमें एक साथ ही ऊँट, जंगली भेड़ और मृग-परिवार के पशुओं की याद आ जाती है। ऊननुमा सफेद बालों से ढका, ऊँट की बिरादरी का यह दूर का नातेदार केवल दक्षिणी अमेरिका के पर्वतीय क्षेत्रों में पाया जाता है। वहाँ इसकी कुछ जातियाँ पालतू भी बना ली गई हैं, जो सवारी या सामान ढोने के काम में लाई जाती हैं। इसके कान लंबे और ऊपर उठे हुए, पैर अपेक्षाकृत छोटे तथा दुम भी बहुत छोटी होती है। ऊँट की जाति का होकर भी इसकी पीठ पर कूब नहीं होती। इसकी एक उपजाति 'अल्पाका' कहलाती है, जिसका ऊन बहुत ही उम्दा और लंबा होता है। इस प्राणी की एक विचित्र आदत यह है कि जब यह किसी से अप्रसन्न होता है, तो उसके चेहरे पर अपना थूक उड़ाता है, जो बहुत ही बदबूदार होता है!

'तापीर', जो मध्य एवं दक्षिणी अमेरिका के अलावा एशिया के मलाया देश में भी मिलता है, बड़ा ही भौंडा जानवर होता है। यह खुरदार प्राणी एक ओर तो बिना सूँड़

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

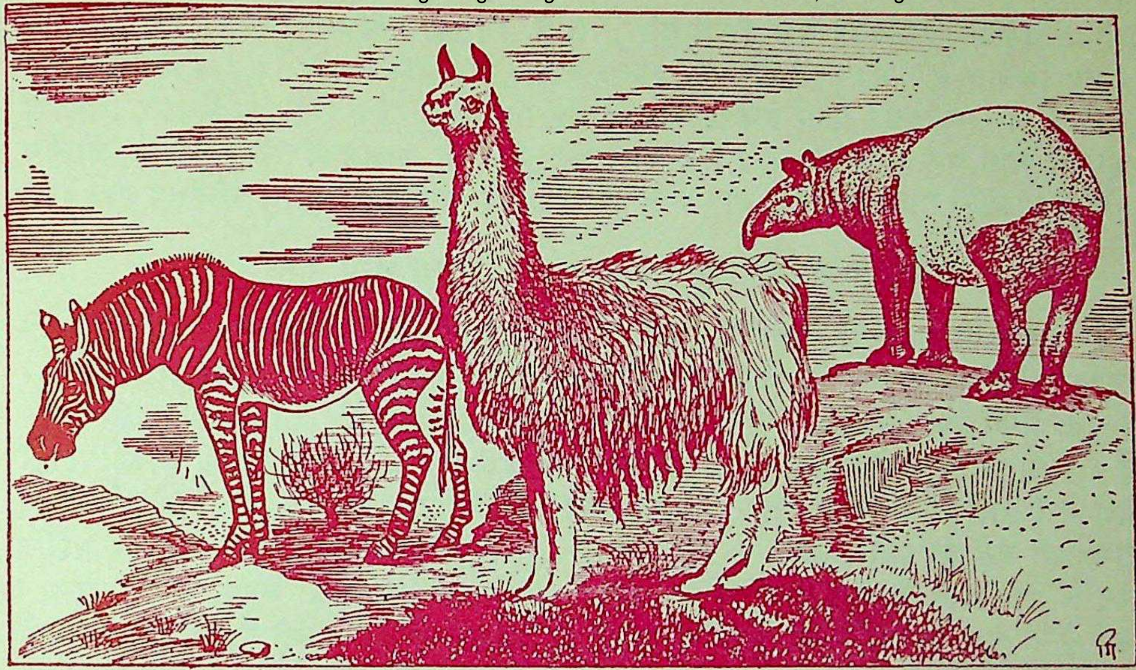

तीन अनोखे शफवर्गीय पशु—(क्रमशः बाईं ओर से) जेबरा, लामा और तापीर।

के हाथी के समान लँबोतरे चेहरे के कारण बड़ा अजीब लगता है; दूसरी ओर, उसकी कटी हुई-सी दुम उसे और भी अधिक बेतुका बना देती है ! इस पशु की एशियाई जाति का बदन मानो दो विभागों में बँटा हुआ-सा जान पड़ता है; कारण, उसके सिर, गरदन और अगले तथा पिछले पैरों का हिस्सा तो काला एवं कंधों से पुट्ठों तक का बीच का भाग एकदम सफेद होता है ! इस विचित्र वेषभूषा में वह ऐसा जान पड़ता है, मानो उसके शरीर के मध्य भाग को सफेदी से पोत दिया गया है, अथवा उस पर श्वेत वर्ण का गिलाफ चढ़ा दिया गया है ! यह विचित्र पशु प्रकृति के अजायबघर का एक दुर्लभ नमूना है, जो विकास की सीढ़ी के किसी लुप्त सोपान का बचा हुआ स्मारक है !

वाराह-वर्ग के पशु—बनैला और पालतू सुअर

शफवर्गीय प्राणियों की एक सुप्रसिद्ध बिरादरी वाराह-समुदाय के पशुओं की है, जिनके प्रमुख प्रतिनिधि 'सुअर' से हम सभी वाकिफ हैं। यह पशु पालतू भी बना लिया गया है, साथ ही जंगली अवस्था में भी बहुतायत से मिलता है। वनों में पाये जानेवाले जंगली सुअर अपने कटारनुमा बढ़े हुए दाँतों के कारण अत्यन्त खतरनाक होते हैं। वे डील में लगभग डेढ़ मीटर लंबे और पौन मीटर ऊँचे होते हैं तथा वजन में डेढ़ क्विंटल तक के पाये जा सकते हैं। उनका रंग कुछ कत्थई-काला-सा होता है, जिस पर भूरेपन की झाईं रहती है। उनके बदन के ऊपरी हिस्से पर अत्यन्त कड़े बालों की पंक्तियाँ-सी रहती हैं। ऐसे बाल दुम के सिरे पर भी पाये जाते हैं।

सुअर वैसे तो वनस्पतिभोजी पशु है, जो खेती को बहुत नुकसान पहुँचाता है, परन्तु कभी-कभी वह मृत जानवरों का मांस भी खा लेता है। हमारी बस्तियों में घूमते-फिरते पाये जानेवाले पालतू सुअर तो विष्टा आदि गंदी वस्तुओं को भी उदरस्थ करने से नहीं चूकते !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बनैले सुअर बहुत तेज दौड़नेवाले पशु हैं, जिसका परिचय उनका शिकार करते समय मिलता है। भड़क उठने पर अथवा घायल हो जाने पर वे अत्यन्त खौफनाक हो जाते हैं और पलटकर ऐसा हमला करते हैं कि मनुष्य तो क्या शेर जैसे भयंकर शिकारी की भी जान पर आ बनती है। भैंस की तरह सुअर भी कीचड़ में लोटने के बड़े शौकीन होते हैं। इनकी मादा वर्ष में दो बार बच्चे पैदा करती है, जो संख्या में आधे दर्जन तक होते हैं।

गौ-वर्ग के अनोखे पशु--गौर, गयाल, अरना भैंसा, याक आदि

खुरवाले प्राणियों में हमारे सबसे अधिक पहचाने हुए और अत्यन्त उपयोगी प्राणी निस्संदेह गौ-वर्ग के पशु हैं, जिनमें गाय-बैल और भैंस प्रमुख हैं। शायद तुम्हें यह जानकर अचंभा होगा कि इस वर्ग के कुछ पशु अभी भी निपट जंगली दशा में पृथ्वी पर विद्यमान हैं। इनमें सबसे उल्लेखनीय गौर, गयाल तथा अरना भैंसा नामक प्राणी हैं, जो हमारे देश में मिलते हैं। 'गौर' और 'गयाल' साढ़े तीन मीटर तक लंबे और पौने दो मीटर तक ऊँचे बड़े ही गठीले बदन के पशु होते हैं। ये मिश्रित भूरे-सफेद एवं मटमैले कलछौंह रंग के पाये जाते हैं और छेड़ देने पर बेतरह बिगड़ उठते हैं तथा भयंकर रूप से हमला कर बैठते हैं। 'अरना भैंसा' भैंस की जाति का प्रसिद्ध जंगली प्राणी है, जो हिमालय की तराई के इलाके के अलावा मध्यप्रदेश एवं बंगाल तथा उड़ीसा के कतिपय क्षेत्रों में पाया जाता है। यह सामान्य पालतू भैंसों से बहुत बड़ा और चौड़े सींगोंवाला प्राणी होता है। इसका मिजाज बहुत गरम होता है और बिगड़ने पर तेंदुओं या घायल शेर तक पर हमला बोल देने में उसे हिचक नहीं होती। इसी के दूर के नातेदार कतिपय जंगली भैंसे अफ्रीका, फिलीपाइन तथा सेलीबीज द्वीपों में भी मिलते हैं। इस वर्ग के प्राणियों में सबसे प्रचण्ड अमेरिका के जंगली 'बिसन' नामक पशु हैं, जो किसी समय योरप में भी पाये जाते थे। निरंतर शिकार के कारण ये लगभग लुप्त-से हो चुके हैं।

तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि तिब्बत का प्रसिद्ध पालतू चौपाया 'याक' भी विशाल गौ-वंश का ही एक पशु है। अतः इसका भारतीय नाम 'सुरागाय' या 'चँवरी गाय' एकदम उपयुक्त और सार्थक नाम है। दूध देनेवाले इस पशु की मुख्य विशेषता उसके बदन पर चँवर की तरह आजू-बाजू लटके हुए काले-भूरे लंबे बाल एवं अर्द्ध-वर्तुलाकार परिधि में फैले हुए उसके लंबे सींग हैं। शीतप्रदेश का वासी यह पशु छः हजार मीटर ऊँचे तिब्बती पठार का सवारी और असबाब उठानेवाला एकमात्र साधन है।

जंगली भेड़ें और बकरे

भेड़-बकरी-वर्ग के जंगली अवस्था में पाये जानेवाले चित्र-विचित्र प्राणियों में सबसे प्रसिद्ध एक ओर तो योरप, मध्य एशिया, दक्षिणी अरब तथा अबीसीनिया के 'आइबेक्स' तथा मध्य एशिया एवं अफगानिस्तान आदि में पाये जानेवाले 'पासंग', 'मारखोर' नामक बकरे हैं। दूसरी ओर हैं मध्य एशिया के इलाकों में पाई जानेवाली 'उरियल', 'अर्गली' आदि भेड़ें। इन पशुओं के सींग तरह-तरह के आकार के घुमावदार, बल खाये हुए और पेंचदार-से होते हैं! इन्हीं की उपजातियाँ 'शेमॉय', 'गुरल', आदि वे भेड़ें हैं, जो अपने उत्तम चमड़े के लिए विख्यात हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पक्षियों की दुनिया

आकर्षण और सुन्दरता के लिहाज से, सारे जीव-जगत् में जितनी गहरी दिलचस्पी आम तौर पर हमें पक्षियों के प्रति होती है, उतनी जानवरों के दूसरे किसी भी वर्ग के प्रति नहीं ! चिड़ियों को प्रकृति की महान् जंतुशाला में वही ललित और मनमोहक स्थान प्राप्त है, जो कि वनस्पतियों की दुनिया में फूलों का है ! फूलों की तरह ये रंग-बिरंगे जीव भी हमारे लिए जिन्दगी की सारी मधुरता या मिठास, सरसता और सुकुमारता, ताजगी और रंगीनी तथा आजादी और रोशनी के प्रतीक जैसे हैं । दरअसल इन्हें यदि हम 'परदार उड़ते हुए फूल' कहें तो बेजा न होगा। साथ ही इनकी मीठी बोलियों के लिए इन्हें 'जिन्दा वाद्ययंत्रों' या चलती-फिरती संगीत की धुनों की भी उपाधि दी जा सकती है ! सच तो यह है कि यदि पक्षी न हों, तो दुनिया एकदम फीकी मालूम देने लगेगी !

वैज्ञानिकों द्वारा निर्धारित पक्षियों की विविध बिरादरियाँ

वैज्ञानिकों के कथनानुसार अब तक ज्ञात पक्षियों की जातियों-उपजातियों की कुल तादाद चौदह हजार बताई जाती है ! यहाँ उनकी इन बिरादरियों के प्रमुख महासमूहों की एक सूची हम दिये दे रहे हैं, जिनमें ये सब वर्गीकृत कर दिये गये हैं। ऐसे कुल २५ समुदाय वैज्ञानिकों ने निर्धारित किये हैं, जो अलग-अलग वर्गों, उपवर्गों एवं परिवारों में पुनर्विभाजित हैं । परन्तु हम यहाँ केवल चौदह मुख्य समूह ही दे रहे हैं :—

१. **दाँतवाले पक्षी**—इस वर्ग की मात्र तीन बिरादरियों का पता हमें प्रस्तर-विकल्पों से मिलता है । ये सब आदिम पक्षियों की जातियाँ थीं, जो अब लुप्त हो चुकी हैं । विगत एक प्रकरण में इनका हाल दिया जा चुका है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

२. उड़ने से लाचार पक्षी––इस समूह के चार बृहत् वर्ग हैं। ऐसे पक्षियों के पंख तो होते हैं, पर वे उड़ नहीं सकते। उदाहरणार्थ, शुतुर्मुर्ग, एमू, ह्री, कैसोवारी। इस वर्ग का एक पक्षी 'माओ' भी था, जो अब नहीं मिलता।

३. गोताखोर या पनडुब्बे पक्षी––इनके पैर झिल्लीदार होते हैं, जो पानी के भीतर तैरने के लिए उपयुक्त होते हैं। उदाहरणार्थ, ऑक, पेंगुइन आदि।

४. तैराक पक्षी––इनके शरीर विशेष रूप से तैरने के लिए ही बने होते हैं। साथ ही ये समुद्र पर लंबी उड़ानें भी भर सकते हैं। उदाहरणार्थ, अल्बेट्रॉस, पेट्रेल, गल, कुररी, पेलिकन, कोर्मोरेण्ट आदि।

५. लगलग-वर्ग के पक्षी––ये चिड़ियाँ लंबी गरदन और बेहद लंबी टाँगोंवाली होती हैं। ये छिछले पानी में प्रायः पैदल विचरा करती हैं। यथा, बगुला, दाबिल, लगलग आदि।

६. जलपक्षी––इनके पैर जालदार और चोंच लंबी तथा चपटी होती है। उदाहरणार्थ, बत्तख, हंस, सुरखाब आदि।

७. दलदलों में रहनेवाले पक्षी––ये अधिकतर छिछले पानी में विचरनेवाले बगुले जैसे पक्षियों के भाई-बन्धु होते हैं। यथा, सॉरस, हंसावर आदि।

८. किनारे के पक्षी––ये अपने आहार की टोह में प्रायः जलाशयों के तट पर रहा करते हैं। जैसे, टिटिहरी।

९. शिकारी पक्षी––अँकुए-सी मुड़ी हुई चोंच और मजबूत तीक्ष्ण पंजोंवाले ये पखेरू हिंसक और मांसभक्षी होते हैं। यथा, उकाब, चील, बाज, शिकरा, उल्लू, गिद्ध आदि।

१०. वे पक्षी जिनका मनुष्य द्वारा शिकार किया जाता है––उदाहरणार्थ, बटेर, लवा, मोर, तीतर, आदि।

११. कबूतर और फाख्ता वर्ग के पक्षी––इनका भी मनुष्य द्वारा शिकार किया जाता है तथा ये पाले भी जाते हैं।

१२. शुक-वर्ग––तरह-तरह के तोते, आदि।

१३. कठफोड़ और उसकी बिरादरी की चिड़ियाँ––इस वर्ग के पक्षियों की चोंच सूजे की तरह नुकीली और लंबी होती है, जिससे ये लकड़ी छेद सकते हैं।

१४. बस्तियों, खेतों, बाग-बगीचों आदि के आसपास बसेरा लेनेवाली चिड़ियाँ––इस समूह में कोई पच्चीस वर्ग के पक्षी हैं, जिनकी कई हजार विभिन्न उपजातियाँ पाई जाती हैं।

संसार का सबसे बड़ा पक्षी 'शुतुर्मुर्ग', जो उड़ने से लाचार है

क्या तुम्हें यह भारी अचंभे की-सी बात नहीं लगती कि जो प्राणी डीलडौल के लिहाज से सारे पक्षी-जगत् के सरदार अर्थात् सबसे बड़े पखेरू कहलाने के अधिकारी हैं, वही (जहाँ तक कि उनके उड़ने का सवाल है) इतने लाचार और बेबस-से हैं कि वे बेचारे नाम भर को भी धरती से ऊपर उठकर आसमान की सैर करने में नितान्त असमर्थ हैं!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भला, कुदरत ने इनके साथ यह कैसी विचित्र मजाक की है? इन प्राणियों में से कुछ के नमूने–यथा, 'शुतुर्मुर्ग', 'एमू', 'कैसोवारी', 'किवी' और 'ह्वी'–प्राय: जंतुशालाओं में देखने को मिल सकते हैं। इन्हीं की तालिका में दो और पक्षी–'डोडो' और 'मोआ'–भी सम्मिलित हैं। ये दोनों ही कुछ समय से इस पृथ्वीतल से सदा के लिए विलुप्त हो चुके हैं।

सबसे पहले हम 'शुतुर्मुर्ग' का ही परिचय तुम्हें दें, जिसे कि इस समय संसार के सबसे बड़े पक्षी का गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस पक्षि-राज का कद सवा दो मीटर के लगभग होता है और वजन डेढ़ क्विंटल के लगभग! इस भीमकाय पक्षी में उड़नेवाले पंख या डैने तो यद्यपि अब भी मौजूद हैं एवं उनकी आकृति भी काफी बड़ी है, तथापि वह उड़ना पसन्द नहीं करता! संभवतः, उसका उड़ने का अभ्यास महज इसीलिए छूट गया हो कि शरीर के अत्यधिक भारी हो जाने के कारण उसे उड़कर आसमान में जाने में बेहद असुविधा होती रही हो। परन्तु इस प्राणी के पंख निरंतर बेकार रहने के कारण जहाँ अनुपयोगी बन गये, वहाँ उसकी टाँगें अत्यधिक काम में आने के फलस्वरूप बेहद मजबूत और विशेष रूप से पशुओं की-सी सुविकसित होती चली गईं! इसका कारण शायद यह था कि उड़ने संबंधी अपनी योग्यता की कमी की पूर्ति दौड़ने की असाधारण शक्ति प्राप्त करके उसने कर डाली!

क्या तुम इस बात को मानने को तैयार होगे कि इतने भारी-भरकम

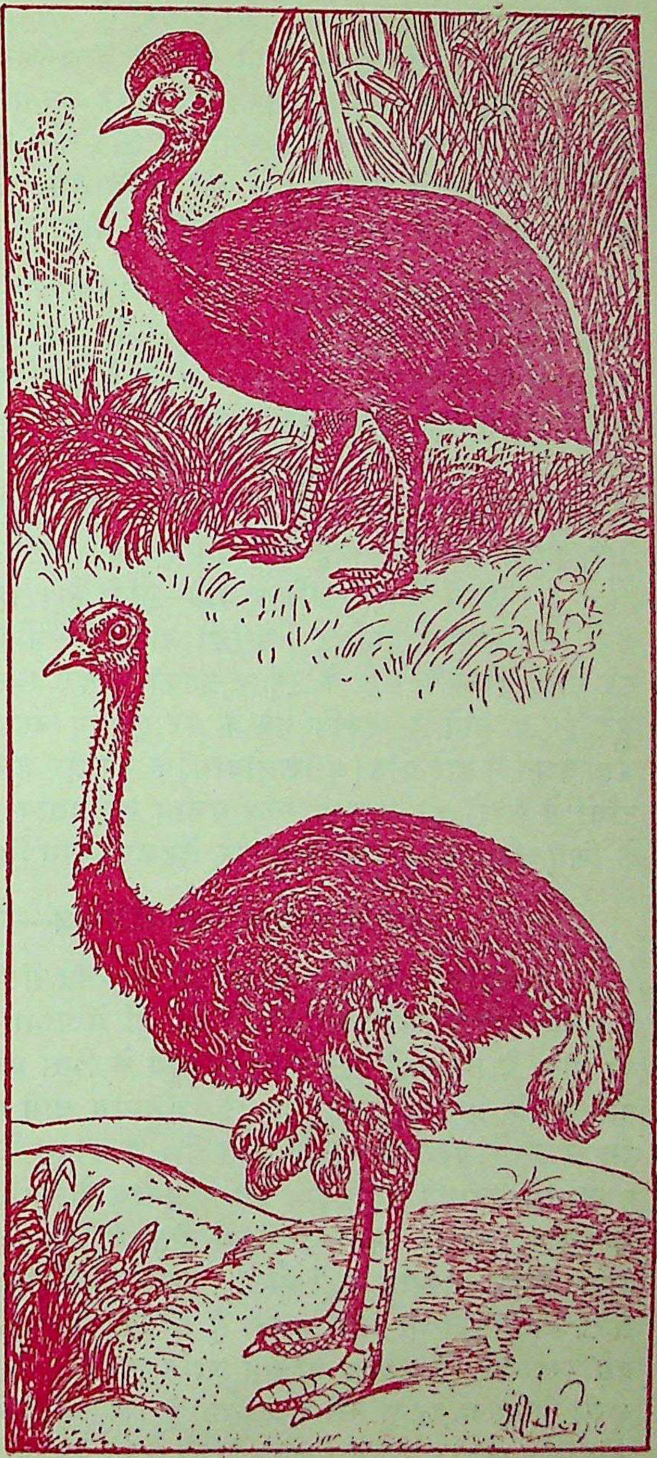

संसार के सबसे बड़े पक्षी, जो उड़ने से लाचार हैं---(ऊपर) 'कैसोवारी'; (नीचे) 'शुतुर्मुर्ग'। 'कैसोवारी' ऑस्ट्रेलिया का निवासी है और 'शुतुर्मुर्ग' अफ्रीका का।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डीलडौलवाला यह पक्षिराज जब दौड़ता है, तो उसकी गति कभी-कभी 'पंजाब-मेल' या 'फ्रंटियर-मेल' जैसी डाकगाड़ियों की गति के लगभग पहुँचने लगती है, अर्थात् वह करीब ८० किलोमीटर प्रति घण्टे तक की रफ्तार अपनी दौड़ में पैदा कर लेता है! दरअसल वह दौड़ता क्या है, एक-एक छलाँग में आठ-आठ मीटर तक का फासला तय करता हुआ, मानो वायु-गति से भागता है! वह दौड़ते समय अपने आजू-बाजू के दोनों पंख या डैनों को इस तरह चौड़े फैला लेता है, जैसे कि नौका की पाल।

शुतुर्मुर्ग मूलतः अफ्रीका महाद्वीप का निवासी है, जहाँ उसकी तीन उपजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें से एक उत्तर में इराक, सीरिया और अरब तक फैली हुई है। परंतु अब इस पक्षी को अमेरिका के कतिपय क्षेत्रों में पालने का भी सफल प्रयत्न हुआ है। इस काम के लिए चरागाहों में बड़े-बड़े खुले अहाते या घिरौंदे-से बनाये जाते हैं, जिनमें बहुत बड़ी संख्या में ये पक्षी सदैव विचरते रहते हैं। इन्हें पालने का मुख्य उद्देश्य वस्तुतः उनके कीमती परों का व्यवसाय है। ये पर मुलायम होने के कारण अति उपयोगी और मूल्य-वान् समझे जाते हैं! यह उल्लेखनीय है कि शुतुर्मुर्ग के हर पैर में केवल दो ही उँगलियाँ होती हैं। उनमें से एक अधिक बड़ी होती है। पैरों की तरह इसकी गरदन भी काफी लंबी और सशक्त होती है। इसकी भावभङ्गी और मुद्रा देखने में ऊँट की-सी होती है। नर-मादा दोनों के परों के रंग में काफी अन्तर रहता है। मादा के पर कुछ धूमिल राखी-भूरे रंग के होते हैं, जबकि नर के पर एकदम चटकीले काले होते हैं। इस पक्षी का प्रत्येक अंडा वजन में ढाई पौंड (१ किलोग्राम) के बराबर होता है! बिगड़ उठने पर शुतुर्मुर्ग अपनी टाँगों से जोरों की लात मारकर बचाव का प्रयत्न करता है। कभी-कभी अपनी रक्षा करने के लिए वह मरुभूमि की बालू पर लेटकर अपने सिर को छिपाने की कोशिश भी करता है।

उड़ने से लाचार अन्य पक्षिराज--एमू, कैसोवारी और ह्री

डीलडौल के लिहाज से शुतुर्मुर्ग के बाद संसार का दूसरा सबसे बड़ा पक्षी 'एमू' है। यह बड़ा पखेरू केवल ऑस्ट्रेलिया ही में पाया जाता है। कद में यह डेढ़ मीटर तक का होता है। इसकी पंख-राशि शुतुर्मुर्ग से भिन्न प्रकार की होती है। ये पर मानो पतली तीलियों के आसपास लटकती हुई मुलायम घास की पत्तियों की तरह फूस के छप्पर के ढंग से उसके बदन पर छाये रहते हैं। वे गरदन के समीप एक प्रकार का छितराया हुआ गुच्छा-सा दरसाये रहते हैं। इस पक्षिराज के पैरों में शुतुर्मुर्ग की-सी दो उँगलियों के बजाय तीन-तीन पतली लंबी उँगलियाँ होती हैं, जिनके सिरे पर तीखे नाखून होते हैं। रंग इसका बहुत आकर्षक नहीं होता। इसके पर मिश्रित काले और सफेद होते हैं, जिससे यह खैरा कबचितरा-सा जान पड़ता है। विकासक्रम की दृष्टि से यह प्राणी शुतुर्मुर्ग आदि अन्य बड़े पखेरुओं से अधिक प्राचीन जाति का है। यह प्रायः रेतीले मैदानों और वनों की खुली जगह में रहना पसन्द करता है। शुतुर्मुर्ग की तरह यह भी दौड़ने में तेज होता है और जब खतरा सामने देखता है, तो अपने पैरों से पीछे की ओर जोरों से दुश्मन को लात मारता है। यह नहाने का बेहद शौकीन होता है और बड़ी-बड़ी नदियों को तैरकर पार कर लेता है। इसका आहार फल, कंद-मूल और पत्तियाँ आदि हैं। इसके अण्डे हरितवर्ण के होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आकार में 'एमू' ही के मुकाबले का, परन्तु देखने में उससे कहीं अधिक सुन्दर और आकर्षक, ऑस्ट्रेलिया का 'कैसोवारी' नामक पक्षी है। उसकी निलौंहे काले रंग की चटकीली पंखराशि के साथ लाल, हरे और बैंजनी रंग की भड़कीली निर्लोम ग्रीवा एवं सिर पर मुकुट-जैसी कलगी का सुन्दर मेल उसे सहज ही इन दौड़नेवाले पक्षियों में सबसे मनोहर प्राणी का गौरवपूर्ण पद दिला सकता है। यह पक्षी सघन वनों का वासी है और बहुत बिगड़ैल मिजाज तथा झगड़ालू होता है। यह बेहूदा आक्रमणकारी अपने पैरों की लात मारकर नखों से शत्रु पर बुरा घाव कर सकता है। इसकी करीब बीस जातियाँ मिलती हैं। इस पक्षी की एक विशेषता यह है कि अपने अण्डों को सेने तथा बच्चों की देखभाल करने का सारा जिम्मा मादा के बजाय नर ही अपने ऊपर लिए रहता है!

उड़ने से लाचार परन्तु दौड़ने में तेज पक्षियों के इस मनोरंजक वर्ग का चौथा अनोखा प्राणी 'ह्री' है। इसे प्रायः 'अमरीकी शुतुर्मुर्ग' के नाम से पुकारा जाता है। यह पक्षी आकार में असली शुतुर्मुर्गों से काफी छोटा होता है और बदन के अलावा इसके सिर तथा गरदन पर भी हल्के पर होते हैं। इसके पैरों में तीन उँगलियाँ होती हैं। कैसोवारी की तरह इन पक्षियों में भी अण्डों को सेने तथा बच्चों की देखभाल का सारा दायित्व नर पर ही रहता है! असली शुतुर्मुर्ग की तरह ये भी बहुत

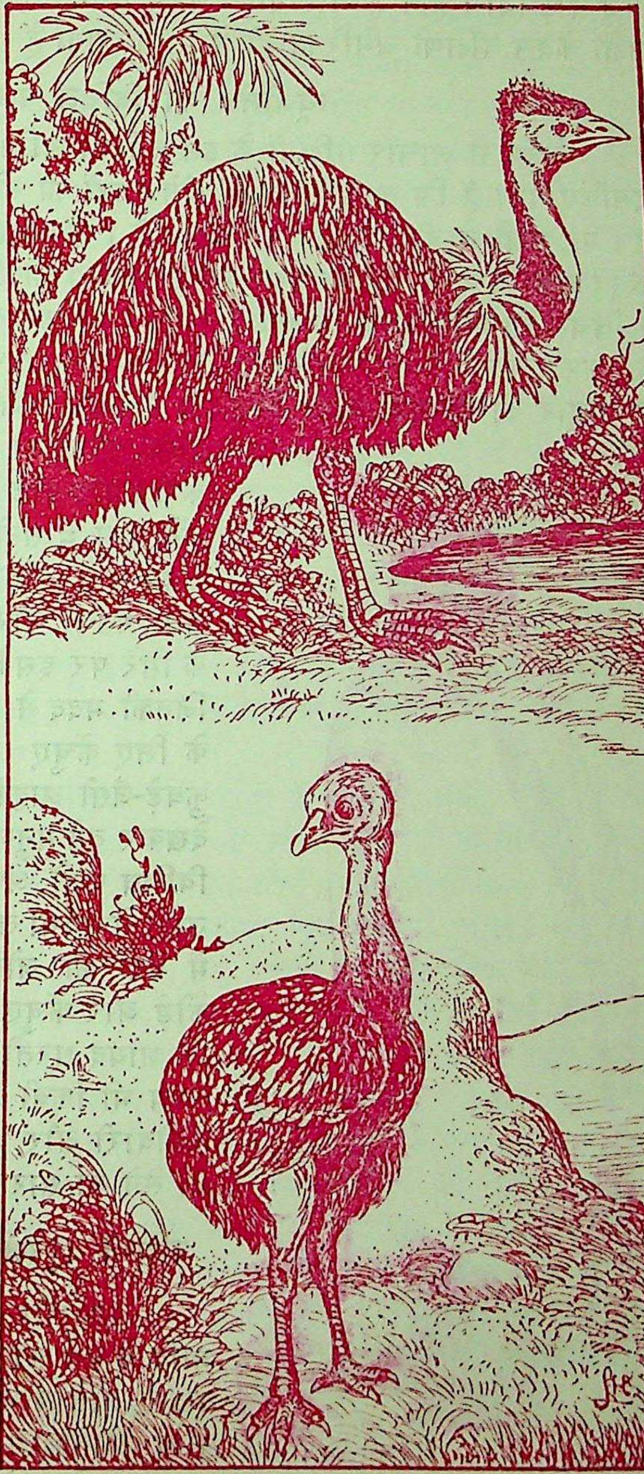

संसार के सबसे बड़े पक्षी, जो उड़ने से लाचार हैं—(ऊपर) 'एमू'; (नीचे) 'ह्री' या अमेरिकन शुतुर्मुर्ग। 'एमू' ऑस्ट्रेलिया में मिलता है, 'ह्री' दक्षिणी अमेरिका में!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेज दौड़नेवाले होते हैं और दौड़ते समय अपने एक पंख को ऊपर उठाये रहते हैं ! यह पक्षी केवल दक्षिणी अमेरिका ही में पाया जाता है ।

न्यूजीलैंड का विचित्र पक्षी 'किवी'

उड़ने से लाचार पक्षियों के इस वर्ग का अन्तिम प्राणी 'किवी' है । इसका यह नाम इसलिए पड़ा है कि वह 'कि इ वी' जैसे स्वरों की सीटी जैसी एक कर्कश आवाज लगाता है । यह पक्षी न्यूजीलेण्ड द्वीप में मिलता है । जंतु-वैज्ञानिकों के लिए यह अनोखा प्राणी बड़े कुतूहल की वस्तु है, क्योंकि पक्षी-वर्ग का सदस्य होकर भी इसकी बहुतेरी बातें साही जैसे रात्रिचर स्तनपोषियों से मिलती हैं । सबसे अनोखी बात तो यह है कि यह धरती में बिल बनाकर रहता है ! यह दिन भर तो बिल में छिपा रहता और केवल रात्रि को अँधेरे में चुपके से आहार की खोज में बाहर निकलता है । इसका आकार साधारण मुर्गी के बराबर होता होगा, परन्तु जो अण्डे यह देता है वे प्रायः वजन में करीब पौंड-पौंड भर के और आकार में १२ सेंटीमीटर लंबे तथा ८ सेंटीमीटर चौड़े होते हैं ! इस पक्षी की शक्ल बड़ी अजीब-सी होती है ! उसकी चोंच बेहद लंबी, पतली और तनिक झुकी हुई-सी होती है । उसी के सिरे पर इसके दो झिरीनुमा नथुने बने होते हैं, जिनकी मदद से यह अँधेरे में भी सूँघकर अपने आहार के लिए केंचुए आदि का पता पा लेता है ! इसकी कुबड़े-जैसी आकृति इस प्रकार की होती है कि उसे देखकर बूढ़े मनुष्यों की याद आने लगती है ! यह विचित्र पक्षी अपने पंख-समूह के ह्रास के कारण ही उड़ने से सर्वथा लाचार हो गया है । वह आहार की खोज में पैरों को जोरों से जमीन पर पटकता है । इससे कीड़े और केंचुए यह सोचकर बाहर निकल आते हैं कि शायद धरती पर ऊपर बरसात हो रही है ! लड़ते समय भी किवी अपने मजबूत पैरों से काम लेते हैं ! कैसोवारी और ह्री की तरह इन पक्षियों में भी अण्डों को सेने का सारा भार नर पक्षी उठाता है ।

दक्षिणी ध्रुव-प्रदेश का विचित्रवेशधारी जलपक्षी 'पेंगुइन' । यह गोताखोर पक्षी उड़ने से सर्वथा लाचार है ।

दक्षिणी ध्रुवक्षेत्र का अद्भुत जलपक्षी—पेंगुइन

एक और अनूठा पक्षी, जोकि उपर्युक्त शुतुर्मुर्ग आदि के वर्ग का न होकर भी, उन्हीं के साथ-साथ बखाने जाने योग्य है, दक्षिणी ध्रुवप्रदेश के आसपास पाया जानेवाला 'पेंगुइन' नामक सुप्रसिद्ध जीव है । यह एक गोताखोर जलपक्षी है, परन्तु पक्षी होते हुए भी पूर्वोल्लिखित बड़े पखेरुओं की तरह यह उड़ने से सर्वथा लाचार है ! इसकी शक्ल-सूरत, वेशभूषा, खड़े

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
रहने और चलने की मुद्रा एवं भावभङ्गी तथा बर्त्ताव-सम्बन्धी बहुतेरी बातों को देखकर, दर्शकों को एकदम मनुष्य का भ्रम होने लगता है ! ऐसा जान पड़ता है, मानो सफेद रंग के एक लंबे सीधे चोगे के ऊपर, जिसका कि सामना एकदम खुला हुआ है, निलौंहे-सलेटी या श्यामल नील वर्ण का स्त्रियों का-सा मखमली कोट पहने साक्षात् कोई मानव-तनधारी अपनी बाहें आजू-बाजू लटकाये गम्भीर भाव से सामने खड़ा हो ! इस शोभा को और अधिक बढ़ाने के प्रयोजन से कुदरत ने नीचे के श्वेतवर्णीय चोगे के गले पर के अंश को चटक सुनहले केसरिया रंग की एक झाईं दे दी है। यह पीलापन, कनपटी के ऊपर तक दो अनूठी पट्टियों के रूप में आजू-बाजू फैलकर, उसके निलौंहे-श्यामवर्णीय मस्तक पर इस प्रकार की छटा दरसाये रहता है कि उसे देखकर बर्फीले प्रदेशों में पहने जानेवाले कंटोप का भ्रम होने लगता है !

यहाँ हम तुम्हें यह बात बता दें कि पक्षी-वर्ग में सम्मिलित होकर भी इस प्राणी के न तो पंख ही पखेरुओं जैसे हैं, न पैर ही। उसके वे डैने जैसे जो अनोखे अङ्ग आजू-बाजू कोट की बाँहों जैसे लटके दिखाई पड़ते हैं, वे हैं दरअसल तैरने में मदद देनेवाले उसके सुफने, जो कभी उसके पंख रहे होंगे ! इन सुफनों से यह प्राणी वैसे ही काम लेता है, जैसे कि नाविक नाव खेनेवाले डाँड़ों से लिया करता है ! पानी से बाहर निकलकर जब पैंगुइन स्थल-भाग पर आता है, तो उड़ने से लाचार होने के कारण अपने पैरों पर सीधा टटार खड़ा रहकर एकदम मनुष्यों की तरह चलते देख पड़ता है। इन अद्भुत जीवधारियों के झुंड हजारों की संख्या में मानो सभा करते हुए-से दक्षिणी ध्रुवक्षेत्र के समुद्रतटों पर एकत्रित देख पड़ते हैं !

पैंगुइनों की कोई सत्रह जातियाँ पाई जाती हैं। उनमें सबसे बड़े डीलडौल के पैंगुइन 'सम्राट् पैंगुइन' और सबसे छोटी जाति के 'नीले पैंगुइन' के नाम से पुकारे जाते हैं। प्रथम जाति का कद मीटर भर से भी अधिक और वजन लगभग ४० किलो होता है। ये गोताखोर मुख्यतः मछली, घोंघे, आदि पर अपना गुजर-बसर चलाते हैं। अपने अंडों को ये तटवर्त्ती जमीन में एक गढ़ा-सा बनाकर रखते हैं। ध्रुव-प्रदेश की घोर शीत के कारण इन अंडों को गरमाये रखने के लिए मादा उन्हें अपने पैरों के पीछे दबाकर पेट के हिस्से से ढाँपे रहती है। जब ये प्राणी तट पर जमा होते हैं, तो प्रायः महीने-महीने भर तक बिना कुछ खाये-पिये उपवास किये हुए वहीं डटे रहते हैं। इससे इनके बदन की चर्बी काफी झड़ जाती है। परंतु समुद्र में पहुँचकर खा-पीकर वे पुनः तगड़े हो जाते हैं। पैदल चलने में तो ये इतने कुशल होते हैं कि सैकड़ों मीटर की ऊँचाई तक तटवर्त्ती कगारों और हिम-पर्वतों पर वे चढ़ते ही चले जाते हैं ! अफ्रीका के समीपवर्त्ती 'डासेन' नामक द्वीप में पैंगुइनों का एक महान् उपनिवेश स्थापित है। कहते हैं, इस द्वीप पर कुछ वर्गकिलोमीटर क्षेत्र में कोई नब्बे लाख पैंगुइन बसते होंगे ! ये प्राणी किसी से डरना तो जानते ही नहीं ! आप उनके पास तक बेखटके चले जाइये ! अपनी इसी निर्भीकता की आदत के कारण ये प्रायः दूसरों के शिकार हो जाते हैं !

कुछ भीमकाय पक्षी, जो अब नहीं मिलते

न्यूजीलैंड में लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व उड़ने से लाचार पक्षियों की एक बिरादरी विद्यमान थी, जिसकी प्राप्त ठठरियों से पता चलता है कि ये पखेरू कद में तीन मीटर तक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

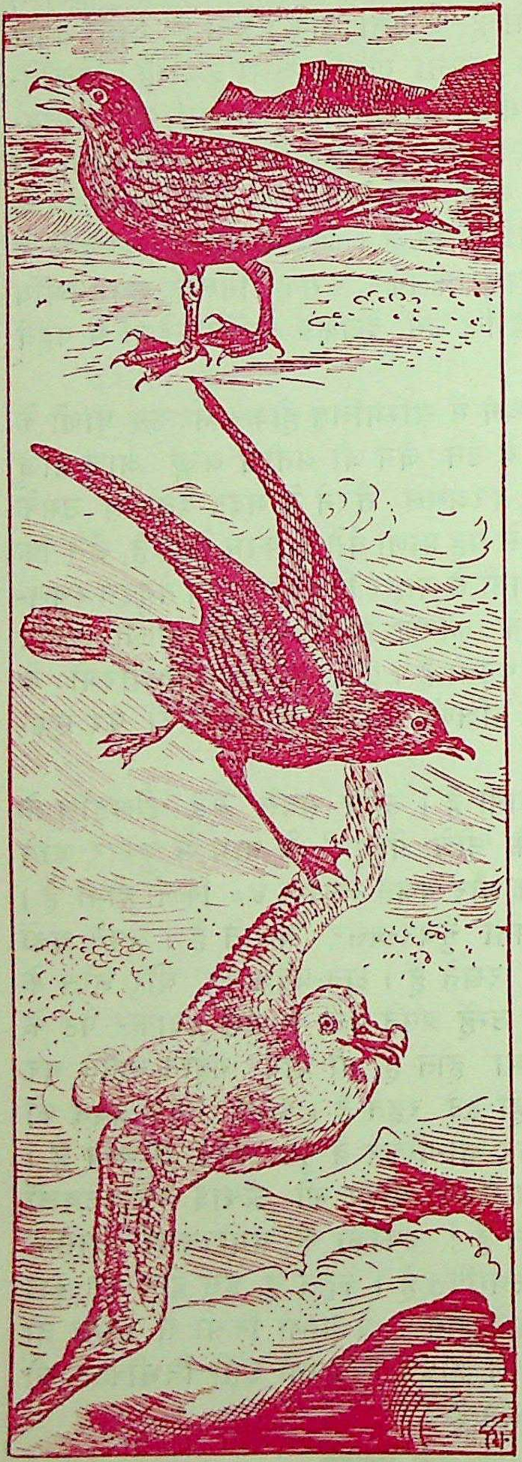

लंबी उड़ानें भरने में समर्थ तैराक समुद्री पक्षियों के प्रख्यात नमूने (क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर) 'गल', 'तूफानी पेट्रेल' और 'अल्बेट्रास'।

ऊँचे होते थे ! इन्हें 'मोआ' के नाम से पुकारा जाता था । इन दैत्याकार पक्षिराजों का वंश पृथ्वी से एकदम मिटा देने का सारा दोष वहाँ के मनुष्यों पर है, जो इन्हें मार-मारकर खा गये ! इसी प्रकार का एक दैत्याकार पक्षी मैडेगास्कर द्वीप में भी कभी मिलता था, जो पुरानी पोथियों में 'रॉक' या 'गजपक्षी' के नाम से पुकारा गया है। यह भी तीन-चार सौ वर्ष हुए मनुष्य द्वारा इस लोक से उठा दिया गया ! इस महाकाय पक्षी के पैरों पर की हड्डियों का ऊपरी घेरा ही कोई आधे मीटर तक का पाया गया है और उसके अंडे तो (जो कि मिले हैं) कोई तीस सेंटीमीटर लंबे और लगभग उतने ही चौड़े होते थे ! इन अंडों के खोखले आवरणों को वहाँ के लोग पानी भरने के घड़ों के रूप में प्रयुक्त करते थे ! उनमें करीब दो गैलन पानी आ सकता था ! अन्य एक प्रसिद्ध पक्षी, जिसका भी केवल नाम ही अब शेष रह गया है, 'डोडो' था, जो अत्यत भोंदू प्राणी था।

समुद्री पक्षी––अल्बेट्रास, गल और कोर्मोरेण्ट

इस वर्ग के पक्षियों में सबसे प्रसिद्ध 'गल', 'अल्बेट्रास', 'कुररी', 'पेट्रेल', 'फुलमार', 'शेअर-वॉटर', 'जेगर', 'स्कूआ', 'पेलिकन', 'गैनेट', 'कोर्मोरेण्ट', आदि हैं। प्रशान्त महासागर के लायसन द्वीप पर 'अल्बेट्रास' लाखों की तादाद में बसा हुआ है। यह पक्षी काफी बड़ा होता है और इसके पंखों का फैलाव चार मीटर की असाधारण चौड़ाई तक का पाया जाता है ! ये पंख बहुत लंबे और सँकड़े आकार के होते हैं । इस पक्षी की तारीफ तो इस बात में है कि अपने पंखों को फड़फड़ाये या हिलाये बिना काफी फासले तक यह उड़ता ही चला जाता है ! कहा जाता है कि अल्बेट्रास दिन-रात उड़ता हुआ समुद्र के वक्षःस्थल पर तैरते हुए जहाजों के साथ-साथ उनका लगातार पीछा करते हुए चलता रहता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'गल' भी एक विश्वविख्यात समुद्री पक्षी है, जो कि उत्तरी गोलार्द्ध के सभी क्षेत्रों में कसरत से पाया जाता है। इस जाति की 'हेरिंग गल' नामक चिड़िया तो उड़न-कला की मानो उस्ताद जैसी होती है! वह क्या आगे और क्या पीछे, क्या दाएँ-बाएँ, क्या ऊपर से नीचे की ओर और क्या नीचे से ऊपर की ओर, सभी दिशाओं में समान निपुणता से उड़ते पाई जाती है! उसके ये उड़न-करतब देखते ही बनते हैं! इन पक्षियों की चोंच कतिपय मुड़ी हुई-सी होती है और उनकी मुँहफाड़ काफी बड़ी होती है। 'कुररी' कुशल मछलीमार चिड़िया है। यद्यपि उसकी गणना तैराक पक्षियों में की जाती है, परन्तु वास्तव में उसका अधिकांश समय हवा में उड़ते ही बीतता है। इसी से उसे 'समुद्री अबाबील' की उपाधि दी गई है। इस पक्षी की एक ध्रुव-प्रदेशीय जाति इस बात के लिए विख्यात है कि वह अपना अंडा देने का ग्रीष्मकालीन समय आने पर उत्तरी ध्रुव के समीप से हजारों किलोमीटर की स्थानान्तर-यात्रा करके सुदूरतम दक्षिणी ध्रुव-क्षेत्र में जा पहुँचता है।

इन समुद्री तैराक पक्षियों में 'कोर्मोरेण्ट' इस मानी में सबसे अधिक विलक्षण है कि वह न केवल एक कुशल उड़ाकू और तैराक है, प्रत्युत सबसे जबर्दस्त गोताखोर भी है। वह मछलियों का पीछा करते हुए, प्रायः तैंतीस मीटर से भी अधिक गहराई तक समुद्र के भीतर गोता लगाते पाया गया है! अपनी इसी योग्यता के कारण यह पक्षी प्रायः पुराने जमाने ही से मछलियों का शिकार करने के लिए मनुष्य द्वारा सफलतापूर्वक पाला जाता रहा है।

पेलिकन और तूफानी पेट्रेल

'अल्बेट्रास', 'गल', 'कुररी' और 'कोर्मोरेण्ट' आदि समुद्री तैराक पक्षियों ही की श्रेणी में वह अति प्रसिद्ध जीव 'पेलिकन' भी संमिलित है, जिसे उसकी लंबी और मोटी चोंच, हंस की-सी मुद्रा और गरदन तथा चोंच के निचले हिस्से में निर्मित थैली की-सी लटकती हुई अनोखी रचना के कारण सहज ही समस्त पक्षियों की मंडली में अलग से पहचाना जा सकता है। आकार में यह पक्षी चोंच से ठेठ दुम तक पौने दो मीटर से भी अधिक लंबा पाया जाता है और उसके पंख का फैलाव तो प्रायः तीन मीटर तक नापा गया है! अपने सशक्त पंखों की बदौलत तेज से तेज आँधी में भी वह प्रायः ऊँचाई तक आसमान में ऊपर उठकर गजब का कमाल कर दिखाता है! आहार की खोज में वह प्रायः अपने निवासस्थान से सौ किलोमीटर तक की दूरी का चक्कर काट आता है। इस पक्षी की नौ उपजातियाँ पाई जाती हैं। नरपक्षी की चोंच पर सींगनुमा पदार्थ की एक कलगी-सी निकल आया करती है। यह कलगी प्रणय-ऋतु की समाप्ति पर गिर जाया करती है। पेलिकन की चोंच के नीचे बनी हुई थैली उसके बच्चों के लिए खाद्य-सामग्री के संग्रहालय का काम देती है। जिस समय इस पक्षी के शावक, अपने माता-पिता की उस खुली हुई बृहदाकार चोंच की कंदरा में अपनी नन्हीं-नन्हीं चोंचें डालकर बुरी तरह चिल्लाते हुए, उसमें संचित मछलियों के झोल पर झपटते हैं, उस समय का दृश्य सचमुच ही हँसा देनेवाला होता है! यह बड़ा पक्षी अकेला कभी भी नहीं पाया जाता। वह झुंडों ही में रहता है। सागर-तट या नदी-तट पर छोटी-छोटी टहनियाँ आदि बिछाकर अपने अनोखे घोंसलों की वह बस्ती-सी स्थापित करता है। उसमें उसके झुंड के झुंड एक ही स्थान

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh

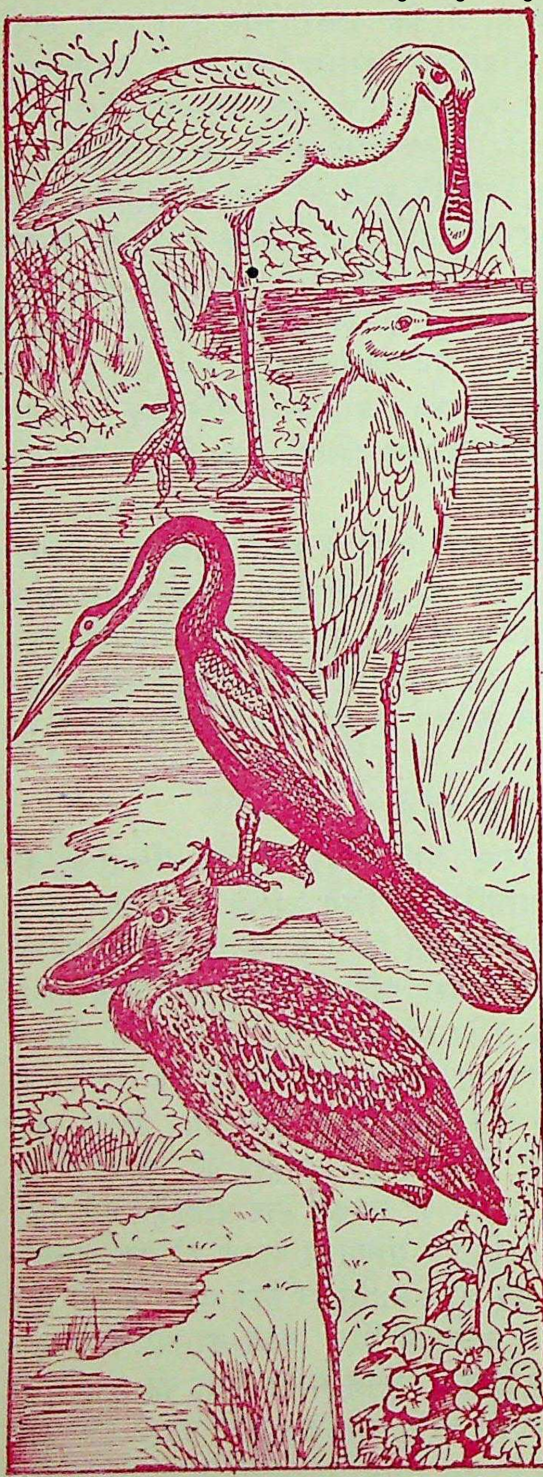

जलाशयों और दलदली क्षेत्रों में पाये जानेवाले हमारे देश के कुछ सुपरिचित जलपक्षी–(क्रमश ऊपर से नीचे की ओर) दाबिल; बगुला; बानबर; और लगलग ।

पर अंडे देते और संतान-पालन करते देखे जाते हैं ।

अन्य एक उल्लेखनीय समुद्री पक्षी, जिसका कि चित्र पृष्ठ ८२ की तस्वीर में द्वितीय पंक्ति में दिग्दर्शित है, 'तूफानी पेट्रेल' के नाम से मशहूर है । यह आकार में तो अबाबील के बराबर की एक छोटी-सी चिड़िया होती है । परन्तु घोर आँधी-तूफान के समय तथा शान्त वातावरण में भी, यह नन्हीं-सी चिड़िया तट से मीलों दूर सागर की अगाध जलराशि के साथ अठखेलियाँ करने तथा लहरों पर दौड़ने का अजीब-सा खेल दिखाती है ! वह अपना आहार इसी तरह समुद्र पर भागते हुए जुटा लिया करती है !

बानबर

इसी सिलसिले में अपने देश के 'बानबर' नामक उस सुपरिचित गोताखोर का भी नाम गिना देना हम उचित समझते हैं, जिसे कि अपनी बेहद लंबी गरदन और चोंच का कतिपय अंश पानी से बाहर निकालकर तैरते देखकर सहज ही दर्शकों के मन में जलसर्प की भ्रान्ति होने लगती है। ये जलपक्षी प्रायः किसी तटवर्त्ती स्थान पर बसेरा लिये बैठे रहते हैं और तनिक-सी आहट पाते ही तीर की तरह सरसराकर या तो नीचे पानी में डुबकी लगा देते हैं और निगाह से एकदम गायब हो जाते हैं, या वहीं बाज की तरह चक्कर लगाया करते हैं । ये अति कुशल तैराक होते हैं और गोता लगाना तो इनका स्वाभाविक गुण-धर्म है । ये, अपने शिकार को पानी के भीतर तैरते हुए ही पकड़ते हैं । जिस समय ये अपनी साँप की-सी लचकीली लंबी ग्रीवा का कुछ अंश पानी से बाहर झलकाते हुए तैरते हैं, उस समय कोई यह अंदाज नहीं लगा सकता कि कोई पक्षी तैर रहा है ! बस, यही जान पड़ता है कि वह कोई साँप है ! इन्हीं का एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नजदीकी नातेदार 'रणपोत-पक्षी' के नाम से पुकारा जानेवाला वह बृहदाकार समुद्री पखेरू है, जो कि अपने बेहद लंबे पंख, दो हिस्सों में विभाजित आदर्श दुम और अत्यंत छोटे-से पैरों की बदौलत बिना थके हुए दिन भर महासागरों के ऊपर मँडराया करता है ! यह पक्षी समुद्र की सतह पर उड़ते-उड़ते ही मछलियाँ आदि पकड़ लिया करता है और प्रायः दूसरे पक्षियों के शिकार को भी छुड़ाकर हड़प कर जाता है !

तालाबों, नदी-तटों और दलदली क्षेत्रों के पक्षी—'हंस' और 'हंसावर'

इसमें संदेह नहीं कि जलपक्षियों के विकास में प्रकृति ने, परिस्थिति और वातावरण की विभिन्नताओं के अनुरूप विशिष्ट प्रकार की आवश्यकताओं का लिहाज रखते हुए तरह-तरह के अनुकूल नमूने तैयार करने में, सचमुच कमाल कर दिखाया है ! जलपक्षियों की इस प्रदर्शनी में प्रकृति की सबसे आकर्षक और भव्य कलाकृति का पद संभवतः 'हंस' ही को दिया जा सकता है। इस प्रसिद्ध जलपक्षी का श्वेत वर्ण प्रायः सफेदी का आदर्श माना जाता है, यद्यपि उसकी एक जाति (जो कि ऑस्ट्रेलिया में पाई जाती है) चटकीले काले रंग की भी होती है ! सफेद और काले हंसों के अलावा इस पक्षी की एक जाति ऐसी भी पाई जाती है, जिसमें केवल गरदन ही काली होती है, शेष सारा शरीर शुद्ध श्वेत वर्ण का होता है ! लगभग डेढ़ मीटर लंबा होते हुए भी यह जलपक्षी जबर्दस्त उड़ाकू होता है ! कहते हैं, उसके उड़ने की गति डेढ़ सौ किलोमीटर प्रति घंटे के वेग तक पहुँच जाती है ! अपने इस असाधारण उड़न-सामर्थ्य के बल पर ही हंस, उत्तरी शीत-प्रदेशों में वसंतकाल व्यतीत कर, जाड़ा आने पर भूमध्यसागर के उष्ण क्षेत्रों एवं भारतवर्ष तक आ पहुँचता है ! यह एक अति तीखी तुरही की-सी आवाज करता है।

यह जलपक्षी महज एक तैराक पक्षी ही है, गोताखोर नहीं ! तैरते समय यह अपनी गरदन को एक खास अदा के साथ राजसी ढंग से मोड़कर एवं सीना तानकर, अपने परों की धवल राशि को कुछ फुला-सा लेता है तथा पंख को ऊपर उठा-सा लेता है। इससे यह बड़ा ही प्रभावशाली जान पड़ता है। हंस एक दीर्घजीवी प्राणी है। कहते हैं, उसकी उम्र हाथी से भी अधिक (अर्थात् डेढ़ सौ वर्ष तक की) होती है ! वह बड़ा ही ईर्ष्यालु और भावुक प्रेमी होता है। प्रायः नरपक्षी अपनी पत्नी एवं संतान की रक्षा के हेतु निर्भीक होकर शत्रु से कड़ा लोहा लेता है, चाहे वह शत्रु कितना ही बड़ा और खतरनाक क्यों न हों ! संतान-पालन के संबंध में हंस एक आदर्श अभिभावक माना जाता है।

भव्यता और सौन्दर्य के लिहाज से, जलपक्षियों में हंस के बाद सम्मान का द्वितीय पद 'हंसावर' या 'फ्लेमिंगो' नामक पखेरू को दिया जा सकता है। यह पक्षी प्रायः टहनियों की-सी अपनी पतली लंबी टाँगों में से एक पर खड़ा होकर, अदा के साथ मुड़ी रहनेवाली सुहावनी गरदन सहित अपनी चटक लाल-गुलाबी पंख-राशि को बगुले की तरह साधते हुए, छिछले जल में समाधिस्थ-सा देख पड़ता है। तब जान पड़ता है मानो जल में कमलदंड पर हूबहू कोई बड़ा-सा अद्भुत कुमुद या सरोज पुष्प खिला हुआ हो ! इस लँबटंगू की चोंच बहुत भारी, तीक्ष्ण और मुड़ी हुई होती है। वह सिरे पर तो काली और मध्य में नारंगी रंग की होती है। इन पक्षियों की सबसे विचित्र विशेषता इनके उन अनोखे ढंग के ढूहनुमा मिट्टी के घोंसलों के निर्माण में पाई जाती है, जोकि दलदलों के समीपवर्त्ती कछार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में स्थित इनकी बस्तियों में हजारों की तादाद में एक ही जगह पर बने हुए मिलते हैं। इन टेकरीनुमा चबूतरों पर एक गड्ढा-सा करके उसमें ये अपने अंडे रखते हैं। ऐसे हर चबूतरे पर एक-एक हंसावर अपनी एक टाँग को मोड़कर खड़ा देख पड़ता है !

लगलग, बगुले, सारस, आदि

परन्तु जलाशयों के पक्षियों की सभी बिरादरियाँ सौन्दर्य की कसौटी पर ऊँची नहीं उतरतीं ! उनमें से कई बड़ी भौंडी, बदशकल एवं बेतुके आकार-प्रकार की हैं ! उदाहरणार्थ, लगलग-वर्ग के 'एडजूटंट' एवं 'खुली चोंचवाले स्टार्क'; बगुला-वर्ग के 'जूते की-सी चोंच-वाले' एवं 'किश्ती की शक्ल की चोंचवाले बगुले' और बुज्जा-वर्ग के गिद्ध की-सी आकृति के बहुतेरे कुरूप लम्बचंचुधारी प्राणी अपनी सूरत-शक्ल के नाते हमें बहुत रुचिकर नहीं जान पड़ने के ! इनमें 'एडजूटंट' नामक लगलग की वह गंदी और भौंडी, किन्तु बेहद ताकतवर एवं बृहदाकार, डरावनी चोंच महज इसलिए विकसित हुई है कि गिद्ध आदि मुर्दाखोरों की तरह यह पक्षी भी जानवरों के शवों के सड़े-गले मांस को खाकर अपना गुजारा करने का आदी है ! इसी तरह जूते की-सी शक्ल की अत्यन्त चौड़ी, चपटी और भौंडी चोंचवाले मिस्र देश के मसखरे जैसी आकृति के बगुले की चोंच नील नदी में पाई जानेवाली एक मछली के अत्यन्त कड़े सिन्नों या छिलकों को तोड़ने-चबाने का काम करते-करते ही शायद इस आकार में बदल गई है ! यही हाल चम्मच की-सी चोंचवाले 'दाबिल' नामक बुज्जों, 'सारस' की जाति के तीखी लम्बी चोंचवाले अन्य अनेक पक्षियों तथा बत्तखों और मुर्गाबियों की बिरादरी के 'सुरखाब', 'सीखपर', 'सवन', 'नकटा', 'चैती', 'तिदारी'

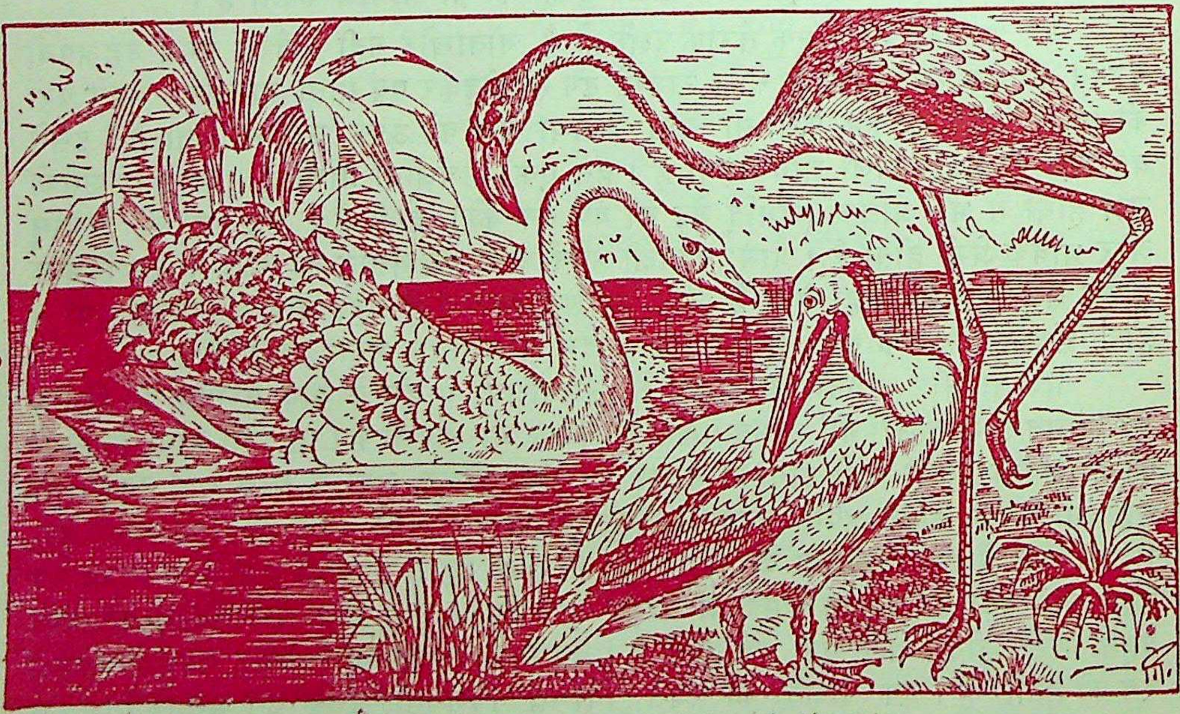

तीन प्रख्यात जलपक्षी —(क्रमशः बाईं से दाहिनी ओर को) 'हंस', 'पेलिकन' और 'हंसावर'।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

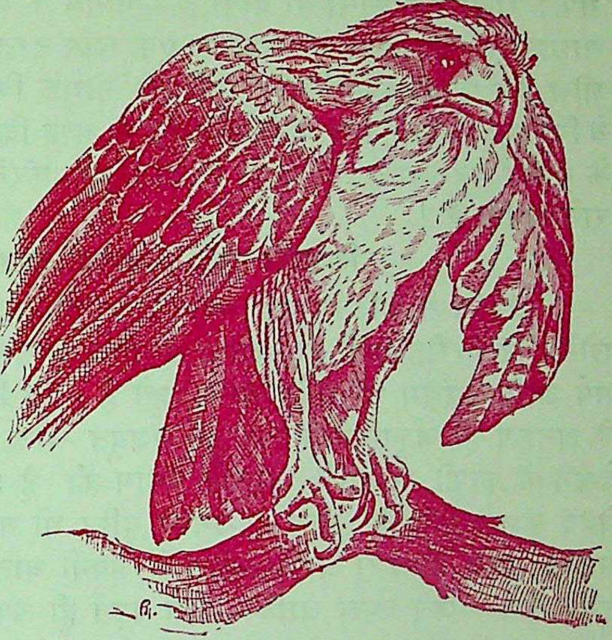

शिकारी पक्षियों का राजा—'गरुड़' या सुनहला उकाब :

आदि भाँति-भाँति के खूबसूरत या भौंडे जल-कुक्कुटों का भी है। इन सबमें 'सारस'को हमारे देश के सबसे बड़े पक्षी का पद प्राप्त है! अपनी अत्यधिक लंबी टाँगोंवाले सुन्दर सलेटी रंग का यह प्रसिद्ध पक्षी कद में पौने दो मीटर तक ऊँचा होता है। इसकी गुलाबी-श्वेत गरदन तथा चोंच काफी लंबी एवं सुहावनी होती है। इसकी बोली बड़ी कर्कश होती है। ये पक्षी प्रायः नर-मादा दोनों साथ-साथ ही दिखाई देते हैं। इनका दाम्पत्य-जीवन अपनी सुदृढ़ प्रेमनिष्ठा के लिए मशहूर है। कहते हैं, इन पक्षियों में मृत्यु द्वारा पति-पत्नी में विछोह हो जाने पर उनमें से बचा हुआ पक्षी जीवन भर फिर जोड़ा नहीं बाँधता! बल्कि, सुनते तो यह हैं कि इस वियोग-दशा में बचा हुआ सारस खाना-पीना छोड़ घुल-घुलकर अपने प्राण तक दे दिया करता है!

कौड़िल्ला, खंजन, टिटिहरी आदि

जलपक्षियों के इस विवरण के साथ ही 'कौड़िल्ला', 'खंजन', टिटिहरी' आदि कतिपय उन चिड़ियों का भी उल्लेख अप्रासंगिक न होगा, जो कि जलाशयों के किनारे बसकर मछलियों आदि से अपना गुजर-बसर चलाते पाई जाती हैं। 'कौड़िल्ला' या 'किलकिला' भला हमारे यहाँ किसके लिए अनजान होगा? मिश्रित नील-हरित-कत्थई रंग की सुन्दर पोशाक धारण किए हुए, बेहद लंबी और नुकीली चोंचवाले इस पक्षी को प्रायः हम अपने नदी-तालावों के तटवर्ती किसी वृक्ष की डाली पर ध्यान लगाये बैठे देख सकते हैं! कभी-कभी पानी के ऊपर आसमान में एक ही जगह पर अपने पंख फड़फड़ाते हुए भी तुमने उसे देखा होगा! वह है जलाशयों के किनारे पर बसनेवाला एक सुप्रसिद्ध मछुवा, जो कि ज्योंही अपनी घात की जगह पर से पानी में मछली की टोह पाता है, त्योंही अपने शरीर को एकदम शिथिल करके इस तरह जल पर टपक पड़ता है जैसे कोई पत्थर गिरा हो! क्षण भर ही में डुबकी लगाकर, चोंच में शिकार लिए, वह पुनः बाहर निकलते तथा अपने स्थान तक वापस उड़ते देखा जाता है! उसका निशाना प्रायः अचूक होता है। जब चोंच में मछली को लिए हुए वह उड़ता है, तो विजय-गर्व से नारा लगाता हुआ 'किल्-किल्' जैसी एक आवाज करता है। इसी से वह 'किलकिला' कहलाता है!

'खंजन' जलाशयों के निकट रहकर वहाँ मिलनेवाले कीड़ों को खाकर गुजारा करनेवाली अति चपल और सुहावनी एक छोटी-सी मौसमी चिड़िया है। यह हमारे देश में केवल बरसात के बाद शरदकाल में उत्तरी शीतप्रदेशों की ओर से आती है और ग्रीष्मकाल से पहले ही उन्हीं प्रदेशों को वापस लौट जाती है। इसके बदन का रंग—जो कि मिश्रित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh देखा जाता है !

सफेद राखी एवं काला-सा होता है––मौसम के साथ-साथ निरंतर बदलते

साधारणतः जलाशयों के आसपास एक खास तरह की आवाज लगाती हुई इधर-उधर गतिशील देख पड़ती 'अटी' और 'टिटिहरी' नामक चिड़ियों से भी हम प्रायः परिचित रहते हैं। ये चिड़ियाँ तटवर्ती बालू के किसी गड्ढे में अण्डे दिया करती और जब कोई व्यक्ति उस स्थान के समीप पहुँचता है, तो जोरों से कोलाहल करने लगती हैं तथा सिर पर लगातार मँडराने लगती हैं !

शिकारी पक्षी––उकाब, बाज, शिकरा, उल्लू आदि

प्रकृति ने कतिपय बड़े भयावने हिंसक नभचर भी उपजाए हैं। उनसे न केवल अनेकों छोटे-छोटे निरीह पक्षी ही, बल्कि खरगोश, गिलहरी आदि बहुतेरे लघुकाय स्तनपोषी और सर्प आदि उरंगम भी सदैव त्रस्त रहते हैं। इन शिकारी पक्षियों को कुदरत ने उनकी वृत्ति के अनुरूप ही अँकुए जैसी मुड़ी हुई मजबूत चोंच, तीखे नाखूनों से युक्त कराल पंजे और देखने में काफी रोबीली आकृति प्रदान की है। ये ताकतवर पक्षी झपट्टा मारने में बेहद कुशल होते हैं, साथ ही उनकी दृष्टि भी बड़ी पैनी होती है। इनमें से कई––जैसे उकाब, बाज, शिकरा आदि––दिन में अपनी घात लगाये आसमान में मँडराते रहते हैं। दूसरे कुछ––जैसे उल्लू आदि––रात पड़ते ही अपना हिंसा-कार्य आरम्भ कर देते हैं !

अपनी दीर्घ आयु, तीक्ष्ण दृष्टि एवं सिंह की-सी निर्भीकता, भव्यता एवं राजसी प्रवृत्ति के नाते 'गरुड़' या 'सुनहला उकाब' इस वर्ग के पक्षियों का सम्राट् कहा जा सकता है। यह पक्षी मुख्यतः उत्तरी अमेरिका, उत्तरी एशिया और योरप के कतिपय पर्वतीय क्षेत्रों ही में निवास करता है। इसकी कुछ छोटी जातियाँ हमारे अपने देश में भी मिलती हैं। यह पखेरू अद्वितीय शक्तिशाली होता है। वह कभी-कभी भेड़-बकरियों जैसे बड़े जानवरों तक को अपने फौलादी पंजों की लपेट में लेकर उन्हें समूचा ही अपने घोंसले तक उठा ले जाने की सामर्थ्य रखता है ! इसके घोंसले ऊँचे वृक्षों या पर्वतपृष्ठों पर बने होते हैं। उकाब की कई और बिरादरियाँ भी हैं, जिनमें अमेरिका के 'बाल्ड ईगल', 'हार्पी ईगल' तथा फिलीपाइन द्वीपों के 'वानरभक्षी उकाब' के नाम विशेषतया गिनाने योग्य हैं। इनमें सफेद सिरवाला उकाब देखने में सबसे भव्य और प्रतापी जान पड़ता है।

उकाब के बाद, शिकारी हिंसक पक्षियों के विशाल समूह की अन्य प्रसिद्ध चिड़ियाँ 'बाज', 'शिकरा', 'चील', 'बहरी', 'टीसा', 'गिद्ध', 'उल्लू' आदि हैं। इनसे हम काफी परिचित हैं। 'बाज' एक मँजा हुआ शिकारी पक्षी है। उसी के छोटे रूप 'शिकरा', 'बहरी' और 'तुरुमती' हैं, जिन्हें लोग शौकिया तौर पर शिकार के लिए पाला करते हैं। इन पक्षियों के अतिरिक्त 'चील' भी हमारा एक सुपरिचित पखेरू है, जो प्रायः शहरों में ऊपर आसमान में मँडराया करता और झपट्टा मारकर लोगों के हाथों से कभी-कभी खाने की चीजें छीन ले जाता है ! इसी का एक रिश्तेदार 'टीसा' है, जो स्वयं शिकार करके भरण-भरण-पोषण करने के बजाय दूसरों द्वारा मारे गये शिकार को हड़पने का अभ्यस्त है।

हिंसाजीवी पक्षियों के इस विवरण में उस कुरूप और भौंडे (किन्तु सबसे अधिक उपयोगी जीव) 'गिद्ध' का भी नाम गिनाना आवश्यक है, जो कि आदिकाल ही से बस्तियों और जंगलों में मरे हुए पशुओं के शवों को खाकर, सफाई रखने की दृष्टि से बहुमूल्य सेवा करता चला आ रहा है। इसीलिए उसे 'जंतु-संसार के मेहतर' की उपाधि दी गई है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस बड़े-से कुरूप पक्षी के सभी अङ्ग विशेष रूप से अपनी वृत्ति के अनुरूप ही निर्मित हुए प्रतीत होते हैं ! प्रायः उसके झुंड के झुंड आसमान में चील की तरह मँडराते देख पड़ते हैं और ज्योंही उन्हें कहीं कोई मुर्दा दिखाई दिया नहीं कि उनकी पूरी जमात उसके आसपास एकत्र हो फौरन् अपना व्यवसाय आरम्भ कर देती है ।

शिकारी पक्षियों के इस विवरण में निलौंह-सलेटी रंग की एक दिलचस्प चिड़िया का भी परिचय देना अप्रासंगिक न होगा, जो कि 'मुंशी-पक्षी' (सेक्रेटरी बर्ड) के अनोखे नाम से पुकारी जाती है ! यह चिड़िया दक्षिणी अफ्रीका में मिलती है और इसकी एक विशेषता यह है कि इसे साँपों को खाने का विशेष शौक है । इसके पैर बगुले या सारस जैसे बेहद लंबे होते हैं और उनमें घुटनों तक फुरफुरे पर छाये रहते हैं, जिससे जान पड़ता है मानो वह कोई जाँघिया पहने हुए हो ! इसके सिर पर कुछ लंबे पर उठे रहते हैं, जिन्हें यह पक्षी उत्तेजित होने पर उठा-सा लेता है । उस समय वे ठीक ऐसे जान पड़ते हैं जैसे मुंशीजी के कान में लगी हुई कलम हो । इसी से इसको अपना यह अनूठा नाम मिला है !

आखिर में, 'उल्लू' और उसकी जाति के अन्य निशाचर शिकारी पक्षियों का भी उल्लेख करना यहाँ आवश्यक है । एकदम सामने की ओर घूर-घूरकर देखने-वाली मनुष्यों की-सी विचित्र आँखोंवाले ये शिकारी पक्षी बड़े ही चौकन्ने और चालाक तथा खतरनाक होते हैं । जब ये उड़ते हैं, तो इनके डैनों से वैसी आवाज नहीं निकलती जैसी कि पक्षियों के पंख से आम तौर पर सुनाई पड़ती है——यहाँ तक कि यदि ये दो हाथ की दूरी से होकर भी उड़ते हुए निकल जाएँ, तो भी प्रायः किसी को इनकी आहट

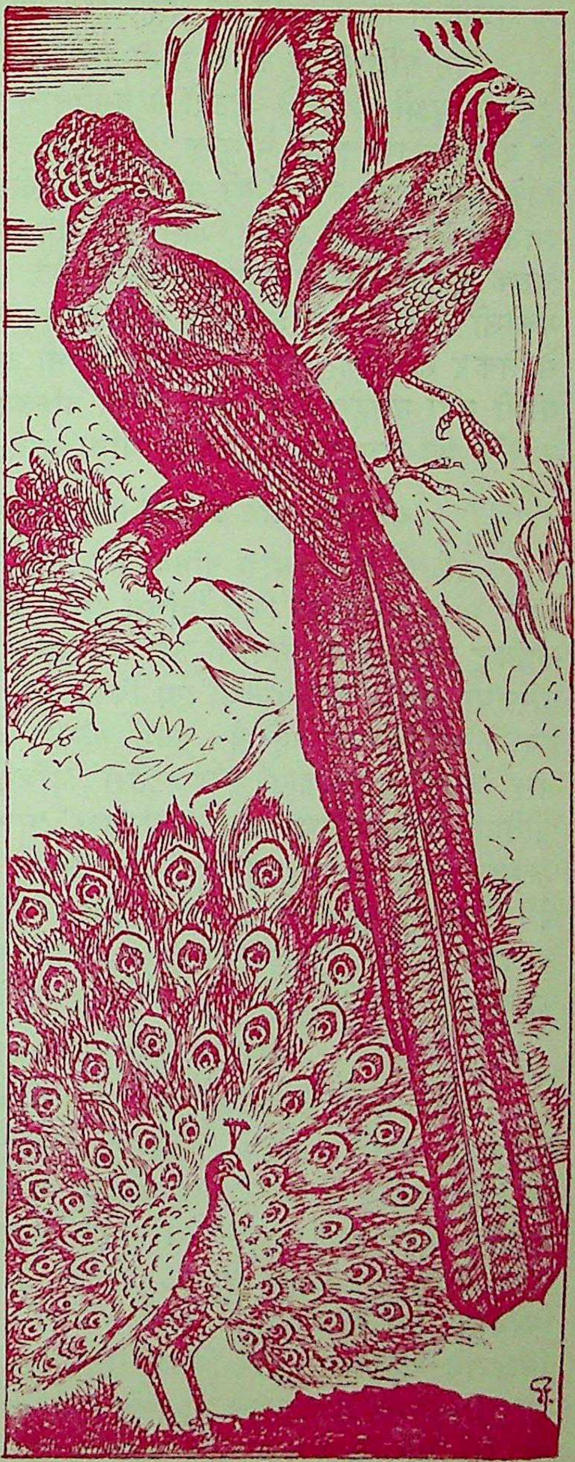

'मयूर-वर्ग' के कुछ सुन्दर पक्षी——(नीचे) मोर; (ऊपर) 'स्वर्ग का पक्षी' तथा कैलिफोनिया का रंग-बिरंगा बटेर ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहीं मिल पाती ! यह व्यवस्था कुदरत ने इन पक्षियों में शायद इसीलिए की है कि रात के सन्नाटे में बिना किसी को आहट दिये सफलतापूर्वक ये शिकार कर सकें !

इन पक्षियों की अनेक छोटी-बड़ी बिरादरियाँ हैं, जिनमें सबसे मशहूर वीरान खँडहरों या वृक्षों के पुराने कोटरों में बसनेवाले बड़े 'घुग्घू', अपने सिर के ऊपर उठे हुए परों के दो विलक्षण गुच्छों से युक्त 'चोटीवाले उलूक' (ग्रेट हार्नड् आउल) तथा जमीन पर रहनेवाले 'बिलवासी उलूक' की जातियाँ हैं। छोटी बिरादरी के उल्लू 'खूसट' या 'चुगद' (स्क्रीच आउल) के नाम से पुकारे जाते हैं। इन सबके रंग भूरे कबचितरे से लेकर सफेद और चटक सुनहले-पीले तक तरह-तरह के होते हैं। चोंच सबकी कटिया की तरह टेढ़ी और नुकीली होती है। ये निशाचर प्रायः पालतू और जंगली चिड़ियों, गिलहरियों, चूहों आदि से लेकर खरगोश जैसे बड़े जीवों को भी अपनी लपेट में लेने से नहीं चूकते ! उल्लू की बोली बड़ी मनहूस होती है। इसका बस्तियों में रहना प्रायः अच्छा नहीं समझा जाता, क्योंकि यह ऊजड़पन का प्रतीक माना जाता है !

बस्तियों, बाग-बगीचों और जङ्गलों में रहनेवाली प्रसिद्ध चिड़ियाँ

पक्षियों की विशाल दुनिया का एक बहुत बड़ा भाग हजारों प्रकार की छोटी और बड़ी, भाँति-भाँति की चित्र-विचित्र रंगीन वेशभूषावाली और सैकड़ों प्रकार की मीठी या कर्णकटु बोलियाँ बोलनेवाली उन अनोखी और साधारण चिड़ियों से भरा पड़ा है, जो कि बस्तियों, खेतों, बाग-बगीचों एवं निकटवर्त्ती जंगलों की निवासिनी होते हुए चिरकाल से हमारी पड़ौसिन-सी रही हैं। इनमें 'गौरेया' और 'अबाबील', 'कोयल' और 'पपीहा', 'चंडूल' और 'बुलबुल', 'कठफोड़' और 'ठठेरा', 'दर्जिन' और 'बया', 'तोता' और 'मैना', 'पीलक' और 'पीतेना', 'लाल मुनिया' और 'शकरखोर', 'मच्छमरनी' और 'नीलकंठ', 'हुदहुद' और 'महोख', 'कबूतर' और 'तीतर', 'फाख्ता' और 'बटेर', 'मोर' और 'लवा' तथा 'कौआ' और 'दँहगल' जैसे नित-प्रति ही अपने आसपास उड़ते, फुदकते रहनेवाली चिड़ियों से हम चिरपरिचित हैं। इनकी विविध बिरादरियों का कोई क्या लेखा-जोखा प्रस्तुत करे ? इस प्रकार की चिड़ियों की कम से कम छः हजार से भी अधिक जातियाँ एवं पंद्रह हजार उपजातियाँ हैं !

मयूर-वर्ग और तीतर-बटेर-वर्ग के भड़कीले पक्षी

इनमें सबसे अधिक दर्शनीय और तड़क-भड़कदार निस्संदेह उस बृहत् वर्ग के पक्षी हैं, जिसमें 'मोर', 'तीतर', 'बटेर', 'लवा', 'हारिल', 'कबूतर', 'फाख्ता', 'भटतीतर' एवं भाँति-भाँति के पालतू तथा जङ्गली 'मुर्गे-मुर्गी' सम्मिलित हैं। बड़े आकार के ये तड़कीले-भड़कीले पक्षी सुन्दर आकृतिवाली रंग-बिरंगी या सादी पंखराशि से युक्त अनेक जातियों और बिरादरियों में बँटे हुए हैं। सौन्दर्य की दृष्टि से, इस वर्ग के पक्षियों में सर्वोपरि स्थान, निर्विवाद रूप से, एक ओर अपनी अनोखी पंखराशि में इन्द्रधनुष की-सी सप्तरङ्गी शोभा निखराये रहनेवाले हमारे चिरपरिचित 'भारतीय मोर' को दिया जा सकता है ! दूसरी ओर किसी हद तक उससे भी अधिक मनोरम 'स्वर्ग के पक्षी' के नाम से विख्यात पक्षी को भी हम वही गौरव प्रदान कर सकते हैं। इस पक्षी की दुम की पंखराशि अद्भुत रंग-बिरंगी छटा छहराये रहती है ! यह पक्षी पूर्वीय द्वीपपुंजों में पाया जाता है। इसके परों का मूल्य अपने वजन के सोने के मूल्य से भी पचीस-तीस गुना अधिक आँका जाता है !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी दुम पर की हरित-पीत-नीलवर्णीय मखमली पंखराशि को ऊपर उठाकर (जिस पर कि अर्द्धनिमीलित नयनों की-सी असंख्य अर्द्ध-चन्द्राकार आकृतियाँ बनी रहती हैं), भौंडी मोरनी के सन्मुख नृत्य करते हुए 'मोर' की मनोहारी शोभा तुमने अवश्य ही कभी देखी होगी ! अतः इस पक्षी के विशेष परिचय की आवश्यकता नहीं है। परन्तु उसके महान् प्रतिस्पर्द्धी 'स्वर्ग के पक्षी' के बारे में कुछ बताना बहुत जरूरी है। इस लुभावने पक्षी की वेशभूषा परों से नहीं, बल्कि जरी-जैसे सोने-चाँदी के महीन तारों, अथवा यों कहिए कि रोशनी की झिलमिलाती हुई किरणों से बनी हुई-सी प्रतीत होती है ! इसके सिर तथा ग्रीवा के क्षेत्र में फुरफुरे बालों के-से हरित-पीतवर्णीय रेशमी परों की एक महीन झालरनुमा अयाल-सी बनी होती है ! उधर दुम की जगह फैली रहती है हरे, लाल, बैंजनी और सुनहले पीले जरी के-से तारों की झिलमिल-सी अद्‌भुत अनोखी लंबी चँवर, जिसका रूप इन पक्षियों की अलग-अलग बिरादरियों में अलग-अलग प्रकार का होता है ! यह अलौकिक वेशभूषा केवल नर-पक्षी में ही होती है, मादा में नहीं ! कहते हैं, जब वह गर्व के साथ अपनी इस पंखमाला को दरसाता हुआ, वृक्षों की सघन डालियों पर थिरक-थिरककर, प्रणयिनी के आगे नाचता है, तो यही ज्ञात होता है, जैसे कि स्वर्ग से साक्षात् कोई अप्सरा चिड़िया का रूप धरकर पृथ्वी पर उतर आई हो ! इस सुन्दर पक्षी की अनेकों चित्र विचित्र जातियाँ न्यूगिनी और उसके समीपवर्त्ती द्वीपों में मिलती हैं। ये आकार में बहुत बड़े नहीं होते। इनमें से कई तो मुश्किल से बीस-बाईस सेंटीमीटर लंबाई के ही होते हैं ! यह बात उल्लेखनीय है कि तड़क-भड़कदार वेशभूषावाले अन्य अनेकों पक्षियों की भाँति 'मोर' और 'स्वर्ग के पक्षी' दोनों को प्रकृति ने मधुर स्वर का वरदान नहीं दिया है !

पक्षी-जगत् के कुछ प्रसिद्ध नमूने—(क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर) कौड़िल्ला; कठफोड़; काकातुआ; टूकन; नाइटिंगेल (एक प्रसिद्ध गानेवाली चिड़िया)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्हीं का एक नजदीकी रिश्तेदार 'बागबान पक्षी' के नाम से पुकारा जाता है। ये अनोखे पक्षी कई प्रकार की काईनुमा वनस्पतियों को इकट्ठा करके उनसे एक तरह की वाटिका-स्थित कुटिया-सी बनाते हैं। उक्त कुटिया के आसपास काइयों द्वारा सुसज्जित हरियाली की कई कालीननुमा पट्टियाँ-सी वे बिछाते हैं! इन हरे कालीनों के बीच-बीच की क्यारियों में बड़े ही चटकीले-भड़कीले पुष्प और फल तथा कीड़े-भुनगे आदि सजाकर रक्खे जाते हैं! तारीफ की बात तो यह है कि जब सजावट की यह सामग्री मुरझाने लगती है, तो उसे हटाकर तुरन्त ही उसकी जगह पर ताजा सामग्री लाकर पूर्ति कर दी जाती है!

तीतर-बटेर एवं मुर्गियों की जाति के बहुतेरे पक्षी भी अपनी भड़कीली चितकबरी पंखराशि के बल पर जंतुवर्ग की किसी भी सौन्दर्य-प्रतियोगिता में भाग लेने का नैसर्गिक दावा कर सकते हैं। तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि अपनी लाल-पीली पंखराशि को फुलाकर अकड़ के साथ चलनेवाले हमारे सुपरिचित पालतू मुर्गे का एक बन्धु ऐसा भी है, जिसकी कि दुम लगभग दो मीटर लम्बी होती है! इसी तरह अपनी दाँव-पेंच की लड़ाई द्वारा लखनऊ की नवाबी के दिनों की याद को तरोताजा बनाये रहनेवाले तीतर-बटेरों की भी अनेकों चित्र-विचित्र बिरादरियाँ संसार में फैली हुई हैं! ये पक्षी वृक्षों के बजाय धरती पर ही रहना पसन्द करते हैं और उड़ने के बजाय वे अधिकतर चलने या दौड़ने के ही अभ्यस्त हैं। पर शिकार के पक्षियों में सबसे अधिक प्यारे, भोले-भाले और लुभावने तो हैं 'कबूतर', जिनकी कि भिन्न-भिन्न रंगों और आकृतियोंवाली अनेक सुहावनी जातियों में से कई उड़ने में अत्यधिक निपुण हैं। इसीलिए पुरानी प्रथा के अनुसार एक से दूसरे स्थान को संदेश भेजने में आज भी उनका प्रयोग किया जाता है! इनकी यह उपयोगिता इस बात के कारण है कि सैकड़ों मील की दूरी से छोड़े जाने पर भी ये पक्षी अपने निवास-स्थान को वापस लौट आने से कभी नहीं चूकते! कबूतरों के ही नजदीकी रिश्तेदार 'फाख्ता' हैं। इनकी भी अनेक सुन्दर किस्में मिलती हैं। इसी वर्ग की अन्य चिड़ियाँ 'लवा', 'भट-तीतर', 'हारिल' आदि हैं। ये या तो तीतर-बटेर की या कबूतरों की नातेदार हैं। इनमें 'भटतीतर' की लंबी चितकबरी दुम बड़ी ही सुन्दर होती है!

इसी सिलसिले में 'होत्जिन' नामक एक विचित्र चिड़िया का भी उल्लेख अप्रासंगिक न होगा। यह दक्षिणी अमेरिका में पाई जाती है। यह पक्षी बचपन की अवस्था में अपने डैनों पर की पंजेनुमा रचनाओं की सहायता से छिपकिली की तरह रेंगकर वृक्षों की डालियों पर विचरता है! यह उड़ने में अधिक समर्थ नहीं होता, परन्तु पानी में कूदकर गोता लगाने व तैरने में काफी पटु होता है! इन्हीं असामान्य खूबियों के कारण जन्तु-वैज्ञानिकों के लिए वह एक महान् कुतूहल और आश्चर्य की वस्तु बना हुआ है! इसके सिर पर एक कलँगी-सी होती है और बदन का रंग गहरा हरा होता है, जिस पर सफेद धारियाँ पड़ी रहती हैं। दुनिया में अपने ढंग का यह एक ही पक्षी है!

शुक-वर्ग के पक्षी

उपर्युक्त 'मयूर-वंशी' एवं 'तीतर-बटेर-वंशी' तड़कीली-भड़कीली चिड़ियों के उपरान्त, हमारा सबसे अधिक ध्यान खींचनेवाले पक्षी 'शुक-वर्ग' के हरे, नीले, पीले तथा लाल रंगों की कलापूर्ण छबि छहराये रहनेवाले पखेरू हैं। इनकी 'टुइयाँ', 'हरा तोता',

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'पहाड़ी सुग्गा' आदि कुछ मामूली देसी जातियों से हम सदा से परिचित रहे हैं। ये पक्षी हमारे यहाँ घर-घर पाले जाते हैं! तोते मनुष्य की बोली की नकल उतारने की अद्भुत क्षमता रखते हैं। ऐसी बोलियाँ पिंजड़े में पाले जानेवाले तोतों को रटा-रटाकर सिखाई जाती हैं। इसी बुनियाद पर पक्षियों में ये प्राणी अधिक बुद्धिमान भी समझे जाते हैं! ये सब अधिकतर फलाहारी ही होते हैं। इनकी एक खास विशेषता कटिया की तरह मुड़ी हुई वह चोंच है, जो विशेष रूप से फलों को कुतर-कुतरकर खाने के लिए ही बनी हुई प्रतीत होती है। इस वर्ग का सबसे बड़ा और दर्शनीय पक्षी 'काकातुआ' नामक वह बृहदाकार शुक है, जिसकी 'सफेद' एवं 'लाल' नामक दो प्रमुख जातियाँ मिलती हैं। काकातुआ के सिर पर एक बड़ी ही सुन्दर कलगी होती है। चिड़ियाखानों में पिंजड़े के भीतर यह पक्षी झूलों पर झूल-झूलकर प्रायः अपनी कलाबाजी दिखाया करता है। इसकी लाल-वर्ण की जाति में बीच-बीच में नीले, पीले एवं हरे रंग के छुटपुट परों की अद्वितीय शोभा निखरी रहती है।

कठफोड़ और धनेश

शुक-वर्ग के ही पड़ौसी 'कठफोड-वर्ग' के वे विचित्र चोंचधारी हैं, जिनमें से एक से सब कोई परिचित हैं। यह पक्षी चोंच द्वारा पेड़ों की लकड़ी पर आघात कर-करके उसे छेद देने की असाधारण योग्यता रखता है। पक्षी-जगत् के इस बढ़ई का एक प्रसिद्ध नजदीकी रिश्तेदार भारी-भरकम चोंचवाला बृहदाकार पक्षी 'हार्नबिल' या 'धनेश' है। यह भौंडा पक्षी अपनी चोंच की एक ही चोट से लकड़ी में आधे इंच तक गहरा छेद कर लेता है! एक विचित्र मसखरे-सा जान पड़नेवाला यह बद-शकल पक्षी अण्डा देते समय मादा को किसी वृक्ष के कोटर या खोखले स्थान में बिठा देता

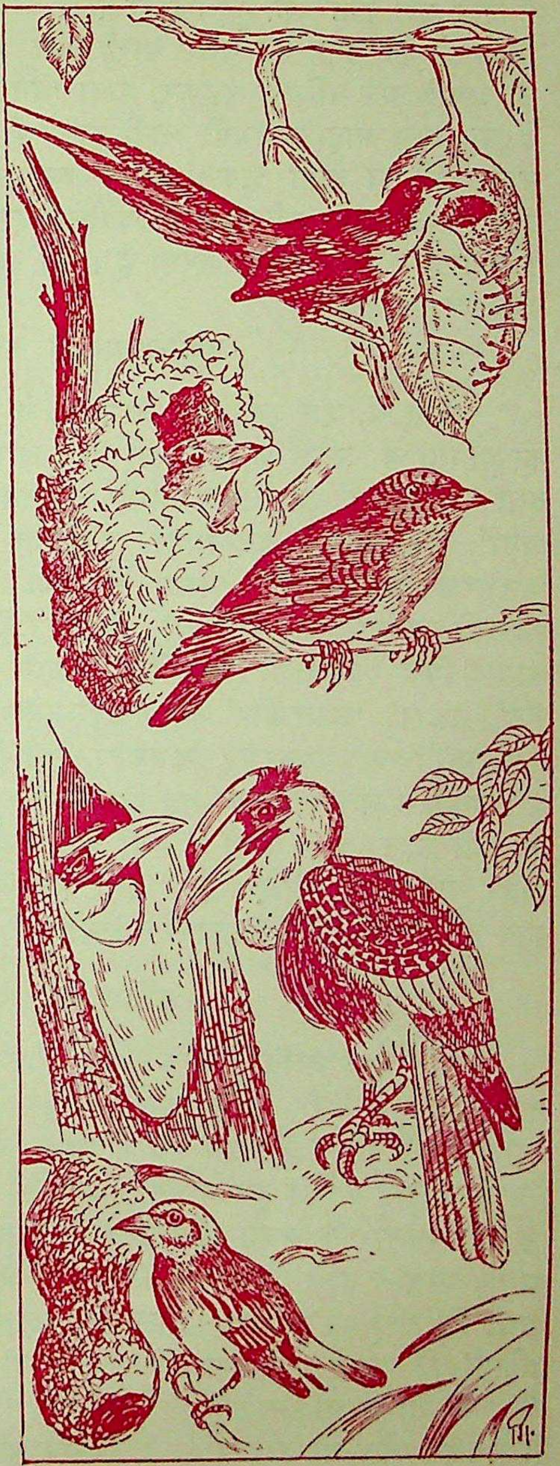

पक्षियों की निर्माण-कला—(क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर, उनके द्वारा निर्मित घोंसलों सहित) दरजिन; अबाबील; हार्नबिल; और बया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
है और उस कोटर का मुंह मिट्टी द्वारा बन्द कर देता है ! केवल मादा की चोंच भर बाहर निकालने की जगह वह उसमें बाकी छोड़ देता है। इस कैदखाने जैसे घोंसले में मातृत्व की अवधि भर बन्दिनी रहकर, मादा 'धनेश' अपनी बाहर निकली हुई चोंच द्वारा नरपक्षी से आवश्यक आहार-सामग्री पाती रहती है ! धनेश का ही प्रतिस्पर्द्धी जैसा अमेरिका के सघन वनों का वासी 'टूकन' नामक वह बृहत्चंचुधारी है, जो कि अपनी भारी-भरकम, चौड़ी-चपटी, मुड़ी हुई चोंच की बदौलत एक ही जगह पर बैठे-बैठे चारों ओर की शाखाओं के फलों को बटोर लिया करता है। इस पक्षी की तस्वीर इस पुस्तक के रंगीन आवरण-पृष्ठ पर प्रदर्शित है।

पक्षी-जगत् के अन्य सुपरिचित नमूने

अन्त में, जब हम अपने आसपास के कहीं अधिक परिचित और निकटस्थ पक्षियों की दुनिया में प्रवेश करते हैं, तो एक ओर हमें 'कोयल', 'पपीहा', 'चडूल', 'बुलबुल' तथा 'नाइटिंगेल' जैसी मीठी-मीठी बोलियाँ बोलनेवाली, तो दूसरी ओर 'दर्जिन' और 'बया' जैसी घोंसले बनानेवाली कारीगर चिड़ियों से भी भेंट होती है। इधर 'गौरैया', 'थरथरकँपनी', 'दँहगल', 'मछमरनी' तथा 'जङ्गली मैना' जैसी हमारे आसपास नितप्रति फुदकती रहनेवाली चिड़ियाँ मिलती हैं, तो उधर हमारे बाग-बगीचों को सदैव आबाद किये रहनेवाली 'अबाबील', 'लाल मुनिया', 'पुदना', 'पतेना', 'पीलक', 'नील-कंठ', 'ठठेरा', 'शकरखोर' जैसे सैकड़ों-हजारों प्रकार के देशी और विदेशी पक्षियों का भी मेला लगा दिखाई पड़ता है। इन सबका संपूर्ण विवरण देने के लिए यहाँ पर्याप्त स्थान ही नहीं है। इन्हीं में जंतु-जगत् का वह हिंसक और कूटनीतिज्ञ सर्वभक्षी 'कौआ' भी शरीक है, जो कि क्या शहरों और गाँवों में तथा क्या बाग-बगीचों और जङ्गलों में, हर कहीं हर घड़ी हमारे यहाँ मौजूद मिलता है ! इसी का एक नजदीकी जङ्गली रिश्तेदार 'भुजंगा' नामक काग है, जो चील जैसे शिकारी पक्षियों पर भी वार करने से नहीं चूका करता !

'हमिंग बर्ड' और 'लायर बर्ड'

छः हजार जातियों और पन्द्रह हजार उपजातियों में बिखरे हुए पक्षियों के इस महासमुदाय में ऊपर उल्लिखित चिड़ियों के अतिरिक्त और भी अनेकों देशी-विदेशी चिड़ियाँ सम्मिलित हैं। इन सब में शोभा की दृष्टि से, दो जाति की चिड़ियों का विशेष रूप से उल्लेख करना हम चाहते हैं—एक तो 'हमिंग बर्ड' या 'भनभनानेवाली चिड़ियाँ', जो कि पक्षी-संसार के सबसे छोटे जीव हैं; दूसरे, 'लायर बर्ड' नामक पक्षी, जो कि 'लायर' नामक प्राचीन बाजे की शक्ल की अपनी अति सुन्दर दुम के लिए प्रख्यात हैं। भनभनाने-वाली चिड़ियों का आकार मात्र पाँच-छः सेंटीमीटर का ही होता है ! इन रंग-बिरंगे पक्षियों को 'उड़ते हुए पुष्पों' की उपाधि दी जा सकती है ! उनके परों से झिलमिलाते हुए रत्नों की-सी आभा झलकती है। इन नन्हें पक्षियों के पंखों के फड़फड़ाने की गति एक मिनट में लगभग पाँच सौ बार होती है, जिसके फलस्वरूप उनसे भनभन-सी मधुर गुंजार निकला करती है। ये प्राणी फूलों का मधुपान करके अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। 'लायर बर्ड' केवल ऑस्ट्रेलिया में मिलता है। मोर तथा स्वर्ग के पक्षी की तरह इस पक्षी का भी केवल नर ही सुन्दर दुम से अलंकृत होता है, मादा नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जंतु-जगत् में, विकासक्रमानुसार, एक विशाल समुदाय उन थलचर, जलचर एवं जल-स्थलचर प्राणियों का है, जो कि पेट के बल रेंगकर या घसिट-घसिटकर चलने के कारण 'उरंगम' (रेप्टाइल) कहलाते हैं। इस वर्ग के जानवरों का खयाल आते ही, स्वभावतः, दो प्रकार के भाव हमारे मन में उठते हैं--एक तो घृणा का भाव; दूसरा खतरे या भय का भाव। भला, सरक-सरककर चलनेवाला, बिना रोएँ का, सिन्नेदार खाल-वाला कोई भी जीव क्यों न किसी को घिनौना और डरावना जान पड़ेगा ! निश्चय ही इस वर्ग के कई जीव (जैसे मगर और विषैले सर्प) घातक होते हैं। परन्तु बहुतेरे ऐसे भी हैं, जो खतरनाक नहीं हैं। उरंगमों की कुल मिलाकर लगभग ४००० जातियाँ-उपजातियाँ हैं। इनमें उन महाकाय विलुप्त प्राणियों का भी समावेश है, जो कि आज से दस-पन्द्रह करोड़ वर्ष पूर्व पृथ्वी पर अपना एकछत्र साम्राज्य स्थापित किये हुए थे !

उरंगम-वर्ग के प्राणियों की विशेषताएँ

उरंगमों की एक विशेषता यह है कि वे सब 'ठंढे रक्तवाले' प्राणी हैं, अर्थात् इनके खून में गरमी की मात्रा उस दर्जे तक की नहीं पाई जाती, जिस दर्जे तक कि वह 'गरम रक्तवाले' जीवधारियों में मिलती है। दूसरी एक विशेषता इनकी यह है कि इन सबकी खाल सिन्नेदार (एक प्रकार के शल्कों से निर्मित) होती है--उस पर रोएँ या बाल नहीं होते। इनके शरीर में साँस लेने के लिए बाकायदा फेफड़ों की व्यवस्था होती है। इस वर्ग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के सभी प्राणी अंडज हैं और उनमें से अधिकतर केवल उष्णतर प्रदेशों ही में पाये जाते हैं। जाड़े की मौसम में ये प्राणी सुस्त पड़ जाते हैं और वर्षाकाल तथा गरमी की ऋतु में उनमें अधिक तेजी आ जाती है। इनमें से कई (जैसे कछुए) मंदगामी होते हैं, परन्तु अनेकों (जैसे सर्प, छिपकिलियाँ आदि) बहुत तेज गति से चलते पाये जाते हैं। कई असाधारणतया दीर्घजीवी भी होते हैं (जैसे कि कुछ जाति के सर्प, मगर और स्थलचर कछुए)। निस्संदेह इनमें से कुछ विषैले भी हैं, परन्तु उनकी संख्या बहुत ही कम है। तरह-तरह के हानिप्रद कीड़ों को खत्म करने में मदद देकर इस वर्ग के प्राणी नुकसान के बजाय लाभ ही अधिक पहुँचाते हैं। इनके चार मुख्य वर्ग निर्धारित किये गये हैं। प्रथम, छिपकिलियों और गोह आदि का वर्ग है; दूसरा, मगर और घड़ियाल का; तीसरा, भाँति-भाँति के कछुओं का; और चौथा सब प्रकार के साँपों का। आओ, सबसे पहले सर्प-समूह के उरंगमों का ही परिचय प्राप्त करें, जो कि बिरादरियों की संख्या के लिहाज से इनमें सबसे बड़ा वर्ग है।

सर्प-समूह की विभिन्न बिरादरियाँ

ज्योंही किसी रेंगनेवाले प्राणी का ध्यान हम करते हैं, हमारी कल्पना में सबसे पहले सर्प की तस्वीर आ खड़ी होती है! इसका कारण यह है कि हम उससे सदैव भयभीत रहते हैं। अकेले भारतवर्ष में ही प्रति वर्ष लगभग बीस हजार आदमी सर्पदंश से अपने प्राण गँवाते हैं! परन्तु इस वर्ग के सभी जीवों के प्रति हमारा भय एकदम निराधार और निरर्थक-सा ही है; कारण सभी साँप जहरीले या घातक नहीं होते! भौगोलिक दृष्टि से विषधर सर्प ज्यादातर एशिया, अफ्रीका और योरप ही में व्याप्त हैं। नई दुनिया की ज्यादातर सर्प-जातियाँ विषहीन हैं!

वैज्ञानिकों ने सर्प-समूह के समस्त प्राणियों को नौ विशाल गणों या समूहों में वर्गीकृत कर दिया है, जिनकी कि पुनः अनेक छोटी-छोटी बिरादरियाँ एवं जातियाँ-उपजातियाँ हैं। ये नौ महासमूह वैज्ञानिकों की बोली में क्रमशः 'टाइफेलोपिडी', 'ग्लाकोनिडी', 'इलीसिडी', 'यूरोपेलटिडी', 'जीनोपेलटिडी', 'एम्बलीकिफेलिडी', 'बोइडी', 'वाइपेरिडी' और 'कोलुब्रिडी' के नाम से पुकारे गये हैं। इनमें प्रथम समूह की अठारह, दूसरे और तीसरे की दो-दो, चौथे की चवालीस, पाँचवें की एक, छठे की पाँच, सातवें की चार, आठवें की उन्नीस और नवें की दो सौ इकतीस बिरादरियाँ मिलती हैं। तुम्हें यह जानकर अचरज होगा कि इन नौ महासमूहों की तीन सौ छब्बीस जातियों में से केवल अन्तिम दो समूहों की कोई अड़तीस बिरादरियों के सर्प ही विषैले और घातक पाये जाते हैं। शेष सब नाम को भी जहरीले नहीं होते! हाँ, बोइडी-समूह के कतिपय बड़े डीलडौलवाले अजगर-वर्ग के सर्प इस मानी में काफी खतरनाक होते हैं कि वे भेड़-बकरी और हिरन जैसे पशुओं तक को अपने मृत्युपाश में जकड़कर उनकी हड्डी-पसलियों का कचूमर निकाल देते तथा उन्हें जीते-जी समूचा ही निगलकर उदरस्थ कर जाते हैं! यह भी एक उल्लेखनीय बात है कि विषधर सर्पों के सबसे बड़े समूह 'कोलुब्रिडी' की भी सभी जातियाँ विषैली और घातक नहीं होतीं! इस विशाल समूह की कुल २३१ बिरादरियों में से केवल उन्नीस जाति के ही साँप घातक और जहरीले होते हैं। हाँ, वाइपेरिडी नामक आठवें समूह की उन्नीसों जातियाँ सब-की-सब घोर विषैली अथवा खतरनाक हैं!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सर्प की शरीर-रचना

सर्प एक अजीब ढंग से अपने शरीर को मोड़ता, बल देता और छोटी-छोटी कुंडलियों में उसे तोड़ता-मरोड़ता हुआ-सा घसिटता हुआ आगे को सरकता है। इसकी यह घसीट बल देकर धरती पर फेंकी जानेवाली किसी जंजीर या रस्सी की मरोड़दार सरकन जैसी होती है! इस काम में उसके शरीर पर बने हुए छिलके-नुमा पतले-पतले सिन्नों से, साथ ही विशिष्ट प्रकार की उसकी अस्थि-रचना से काफी मदद मिलती है। साँप के बदन में दो सौ या ढाई सौ पसलियाँ होती हैं। ये उसके बदन को जंजीर जैसा बनाने में सहायक होती हैं।

साँप का सिर--जिसकी कि परिधि में उसका मुख, नेत्र तथा नथुने बने हुए होते हैं--लचीली मांस-पेशियों एवं उनसे जुड़ी हुई हड्डियों द्वारा रचा गया होता है। अतः जब उसका मुँह खुलता है, तो उसकी समाई बेहद बढ़ाई जा सकती है। इसी खूबी की बदौलत यह प्राणी प्रायः अपने से अधिक मोटी वस्तुओं को भी निगल लेता है! यद्यपि साँप के मुँह में दाँत होते हैं, परन्तु वह आहार को समूचा ही निगलता है, उसे चबाता नहीं! वस्तुतः सर्प के दाँत केवल शिकार को पकड़ने के लिए होते हैं, चबाने के लिए नहीं। उनकी रचना भीतर की ओर कुछ मुड़ी हुई-सी ऐसे निराले प्रकार की होती है कि एक बार उनके अँकुए में शिकार के फँस जाने पर उसका छुटकारा असंभव हो जाता है। केवल दाँत ही नहीं, सर्प के जबड़े भी किसी चीज को पकड़ लेने पर इस तरह की हरकत करते हैं कि पकड़ी हुई वस्तु भीतर ही जा पाती है, वह बाहर नहीं निकल सकती! इसी कारण, इन प्राणियों को असावधानी में पकड़ ली गई अप्रिय या प्रतिकूल वस्तु को भी निगलने को विवश होना पड़ता है। इससे कभी-कभी तो इन्हें अपनी जान तक से हाथ धोना पड़ता है!

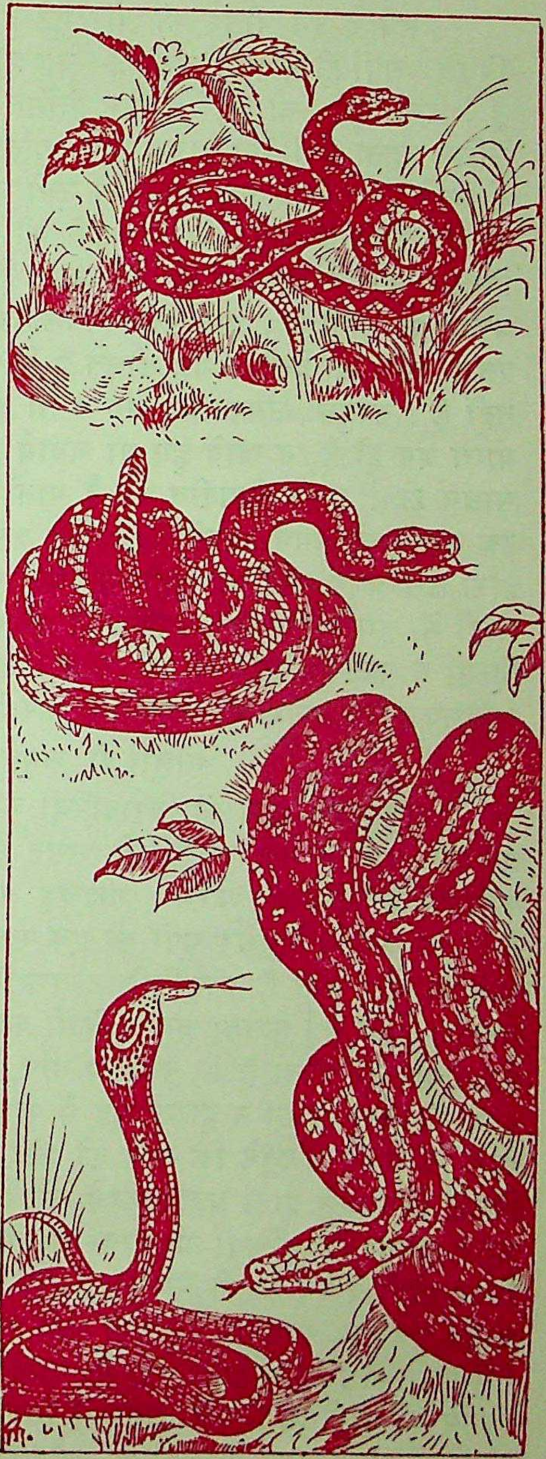

सर्पों के कुछ प्रसिद्ध नमूने—(क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर) 'दबोइया'; 'झनझनिया साँप'; 'अजगर'; और 'गेंहुअन काला नाग या कोबरा'। इनमें अजगर को छोड़कर शेष तीनों सर्प घोर विषधर हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सर्प के इन भीतर की ओर मुड़े हुए नुकीले दाँतों में एक और खूबी---जो कि केवल विषधर सर्पों ही में पाई जाती है---यह होती है कि कभी-कभी वे भीतर से पोले भी रहते हैं ! इन दाँतों की जड़ों के पास निर्मित एक प्रकार की थैलीनुमा ग्रंथियों में हलाहल विष संचित रहता है ! यह घातक विष दाँतों की पोली नली के रास्ते टपककर शत्रु के बदन में उनके द्वारा किये गये घावों को उसी प्रकार सिंचित कर देता है, जिस तरह कि डॉक्टर की सुई रोगी के शरीर में पिचकारी की दवा प्रविष्ट करा देती है ! यह व्यवस्था केवल विषधर सर्पों के दाँतों में ही पाई जाती है । दाँतों की तरह, साँप की जिह्वा भी विशिष्ट प्रकार की होती है । प्रायः लोग लपलपाती हुई एवं दो भागों में विभक्त साँप की लंबी पतली जीभ को देखकर यह सोचते हैं कि उसके एक नहीं बल्कि दो जीभें हैं ! पर यह बात नहीं है । वस्तुतः, उसका यह अंग न तो हमारी जिह्वा की तरह स्वाद लेने में मदद देने-वाला अंग ही है, न खाये हुए या चबाये हुए कौर को गले से नीचे उतारने में योग देनेवाला साधन ही ! इसके विपरीत वह है मानो आधुनिक 'राडार' नामक विद्युत्-यंत्र की तरह इस प्राणी को अपने सामने पड़नेवाली वस्तु का भान कराने एवं इस प्रकार के वस्तु-बोध द्वारा उसे अपने मार्ग का सही-सही ज्ञान कराने में मदद देनेवाला एक अनूठा अंग ! दूसरे शब्दों में, हम इसे उसकी स्पर्शेन्द्रिय की संज्ञा प्रदान कर सकते हैं । चिमटे की तरह दो हिस्सों में फटी हुई साँप की यह लम्बी पतली जीभ ओठों के बीच के एक छिद्र में से बाहर निकलकर उस समय भी लपलपाया करती है, जबकि उसका मुँह सर्वथा बन्द रहता है !

'कोलुब्रिडी' समूह के भयंकर विषधर साँप

प्राणघातक सर्पों की बिरादरियों का सबसे अधिक भयावना जमघट सर्प-वंश के सबसे बड़े और अन्तिम गण 'कोलुब्रिडी' समूह में पाया जाता है । इसी में हमारे देश के 'गेहुँअन फनियर' या 'कोबरा', 'करैत', 'शंखचूड़' आदि भयंकर जहरीले नागराजों के वंश सम्मिलित हैं ! इस वर्ग के विषधर सर्पों की एक मुख्य विशेषता यह होती है कि इन सबमें विषदन्त आगे की ओर होते हैं तथा विशिष्ट प्रणालियों द्वारा विष-ग्रंथियों से उनका एकदम सीधा सम्बन्ध होता है । फलतः जब वे किसी को काटते हैं, तो तुरन्त ही घाव में प्राणहारी विष का संचार हो जाता है ! कतिपय साँप ऐसे भी पाये जाते हैं, जिनमें विषदन्त जबड़े में आगे की ओर स्थित न होकर मुँह में पीछे की ओर होते हैं । ऐसे सर्प उतने भयावने नहीं माने जा सकते, जितने कि आगे की ओर के विषदन्तवाले साँप ! कारण, उन्हें अपने उन पिछले विषदन्तों द्वारा प्रहार करने की वैसी अनुकूलताएँ नहीं रहतीं । बहुतेरे सर्पों में दर-असल सच्ची विषग्रंथियों की व्यवस्था होने पर भी वे मुँह में इतनी अधिक पीछे की ओर स्थित होती हैं एवं उनकी प्रणालियाँ ऐसे झूठे विषदन्तों की जड़ों के पास खुलती हैं कि उनके काटने पर विष घाव पर पहुँच ही नहीं पाता, वह सर्प के मुँह में ही बचा रह जाता है । ऐसे सर्पों की विष-व्यवस्था, जो कि अग्रदन्तधारी विषधर साँपों की व्यवस्था से घटिया किस्म की होती है, निगले जानेवाले शिकार के सर्प के मुँह में पहुँचने पर उसे केवल शिथिल बना देने में ही मदद दे पाती है; और किसी काम में नहीं आती ।

'कोबरा' या 'नागराज'

'कोलुब्रिडी' समूह के विषधर सर्पों में सबसे भयंकर 'कोबरा' जाति के साँप हैं, जिनमें भारतीय 'गेहुँअन सर्प' या 'नागराज', 'मिस्री फनियर साँप', 'काली गरदनवाला विषैला

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साँप' तथा 'किंग कोबरा' या 'हैमाड्रायड' नामक महानाग या शेषनाग प्रमुख हैं। इन सब साँपों की एक विशेषता यह होती है कि अपनी गरदन की लम्बी पसलियों को बाहर की ओर तानकर ये अपने शीर्षभाग को एक चौड़े फन की शक्ल में फैलाने का अद्‌भुत सामर्थ्य रखते हैं! यह है वस्तुतः इनका एक प्रकार का चेतावनी देने का तरीका। कोबरा जाति के सर्प के फन पर गौ के खुर, आँख या ऐनक की जोड़ी की आकृति का-सा एक चिन्ह बना रहता है। प्रायः उसके फन के नीचे की ओर भी ऐसे ही दो-एक सफेद-से निशान बने रहते हैं! इस खतरनाक साँप की दस जातियाँ पाई जाती हैं। इनमें से अधिकतर भारतवर्ष में मिलती हैं और शेष मलय प्रदेश, दक्षिणी चीन, फिलीपाइन्स द्वीप एवं अफ्रीका तक विस्तृत हैं। भारतीय कोबरा की लम्बाई प्रायः दो मीटर तक की होती है। यह 'गेहुँअन' इसलिए कहलाता है कि इसके रंग में गेहुँएपन या खैरेपन की-सी कुछ झाईं रहती है। मिजाज में यह सर्प बहुत ही वाहियात होता है! जरा-सा भी छेड़ देने पर यह फन तानकर फुफकारने लगता है। बिगड़ उठने पर तो कभी-कभी यह दौड़कर शत्रु का पीछा करने से भी नहीं चूकता! यह फन-सहित शरीर का काफी हिस्सा ऊँचा उठाकर एक झटके के साथ वार करता है। जब इसे सुई-जैसे अपने कराल विषदन्तों को गड़ा देने में कामयाबी मिल जाती है, तो शीघ्र ही उन दाँतों को घाव की जगह से वह अलग नहीं कर देता, बल्कि उन्हें देर तक गड़ाये रहता है, ताकि हलाहल विष की पूरी घातक मात्रा शिकार के बदन में बखूबी जज्ब हो जाय! ये सर्प अधिकतर चूहा, मेंढक आदि को खाकर अपना गुजारा करते पाये जाते हैं और प्रायः किसी पुरानी बाँबी या खाली बिल में घुसकर जीवन व्यतीत करते हैं।

उपर्युक्त साधारण कोबरावंशी नागों से कहीं अधिक भयावना और तेजस्वी 'किंग कोबरा' या 'हैमाड्रायड' नामक महानाग होता है। उसकी

छिपकिली-वर्ग के कुछ अद्‌भुत प्रतिनिधि (क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर) नई दुनिया की 'इगुआना' नामक छिपकिली; झालरदार अनोखा गिरगिट; वर्तमान युग की सबसे बड़ी गोह 'कमोडो ड्रेगन'।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लम्बाई मामूली तौर पर तीन-चार मीटर तक होती है। यह सर्प अधिकतर साँपों को ही खाकर अपना पेट भरता है ! न केवल विषहीन सर्पों को ही, प्रत्युत 'कोबरा' और 'करैत' जैसे कराल विषधर नागराजों को भी वह शौक से चट कर जाता है ! उन्हें वह समूचा ही निगल जाता है ! यह विकराल सर्प, जिसे हमारे देश में 'शंखचूड़', 'शेषनाग' आदि भव्य नामों से पुकारा जाता है, केवल असम और हिमालय की तराई के सघन वनों एवं मध्यप्रदेश तथा दक्षिणी भारत के एकान्त जङ्गलों ही में पाया जाता है। यह वृक्षों पर भी चढ़ जाता है और तैरकर नदियों को पार कर लेता है। इसके कुछ नमूने पाँच मीटर तक लंबे भी मिले हैं !

अन्य विषैले सर्प--करैत, कॉपरहैड, मांबा, वाइपर आदि

अन्य उल्लेखनीय विषधर सर्प एक ओर तो भारतवर्ष के कोलुब्रिडी-समूह के 'करैत' वंश के डेढ़ मीटर लम्बे वे लघुकाय सर्प हैं, जिनका विष नाग के विष से भी चार-पाँच गुना अधिक तीव्र बताया जाता है ! दूसरे हैं नई दुनिया के मूँगे के-से चटकीले लाल-पीले रंग के 'कोरल' वंश के बड़े ही अद्‌भुत एवं चित्ताकर्षक वे सर्प, जो आकार में एक मीटर से कम होने पर भी बेहद लम्बे विषदन्तों से युक्त होते हैं। कतिपय भयावने एवं प्राणघातक विषैले सर्प ऑस्ट्रेलिया और अफ्रीका में भी मिलते हैं। इनमें से एक है प्रति दंश में बीस आदमियों को समाप्त कर देने जितना विष-संचार कर देनेवाला तीन मीटर लम्बा ऑस्ट्रेलियन भूरा सर्प 'टाइपन' ! उसी के भाई-बन्धु ताम्रवर्णीय 'कॉपरहैड सर्प' तथा 'मांबा' और एक घातक वृक्षवासी सर्प है। दीर्घाकार अफ्रीकी सर्पों में विशेष रूप से उल्लेखनीय एक भयावना सर्प ऐसा भी पाया गया है, जो विष को अपनी फुफकार के साथ बौछार के रूप में शत्रु पर उड़ाता है। यह विष यदि किसी की आँख में पड़ जाय, तो वह व्यक्ति तुरन्त ही अन्धा हो सकता है !

परन्तु प्रसिद्धि एवं जहर के घातक प्रभाव के लिहाज से 'कोबरा' और 'करैत' के बाद सबसे मशहूर विषधर वाइपेरिडी-समूह का 'वाइपर' या 'एडर' है, जो एशिया, योरप और अफ्रीका की पुरानी दुनिया में सर्वत्र पाया जाता है। इंगलैण्ड का तो यही एकमात्र जहरीला साँप है। इसे हमारे देश में 'दबोइया' के नाम से पुकारा जाता है। इस सर्प का बदन भूरे सलेटी या ललौंह-श्याम से लेकर निपट काले वर्ण तक भाँति-भाँति के मिश्रित वर्णों का पाया जाता है और उसमें एक प्रकार का छींट का-सा सुन्दर डिजाइन बना रहता है। भारतीय दबोइया लगभग डेढ़ मीटर तक लम्बा होता है और उसके पिलौंहे-भूरे बदन पर ललौंह, काले-सफेद या कबचितरे धब्बों की तीन पंक्तियों का एक विशिष्ट डिजाइन सुशोभित रहता है। इस जहरीले सर्प में ऊपरी जबड़े की रचना इस प्रकार की होती है कि जब उसका मुँह बन्द रहता है, तो विषदन्त दबकर एकदम तालू से जा चिपकते हैं। इनकी कई जातियाँ हैं, जिनमें से एक है 'मिस्री वाइपर'। उसकी विशेषता यह है कि उसके सिर पर के सिन्नों के विकास के फलस्वरूप दो अनोखी सींगनुमा रचनाएँ उभरी रहती हैं। वाइपेरिडी समूह ही के अन्तर्गत 'झनझनिया साँप' की भी गणना की जाती है, जो कि अपनी दुम से एक प्रकार की चेतावनी की झनझनाती हुई आवाज निकालने के लिए मशहूर है ! इस ध्वनि को यह सर्प अपनी दुम के सिरे पर विकसित एक प्रकार के सिन्नों या छिलकों की श्रृंखला को खड़खड़ाकर पैदा करता है। यह सर्प भी जबर्दस्त विषैला होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विशालकाय अजगर--'बोआ कन्स्ट्रीक्टर'

सर्पों की उपर्युक्त विषैली जातियों के अतिरिक्त उनकी अन्य खतरनाक जातियाँ 'बोइडी-समूह' के उन बृहदाकार अजगरों के रूप में मिलती हैं, जो जहरीले तो नहीं होते, परन्तु शिकार को समूचा ही निगल जाने तथा अपने पाश में जकड़कर उसकी हड्डी-पसलियों को गाजर-मूली की तरह तोड़ देने का असाधारण सामर्थ्य रखते हैं ! इन दैत्यों की एक जाति 'बोआ कन्स्ट्रीक्टर' कहलाती है, जो अमेरिका के विषुवत् सघन जंगलों में पाई जाती है । पीले-भूरे रंग के ये चितकबरे अजगर पाँच-छः मीटर तक लम्बे होते हैं और वे वृक्षों पर रहना पसन्द करते हैं । अन्य एक अमरीकी अजगर 'एनाकोण्डा' कहलाता है । इसकी लम्बाई तेरह मीटर तक की बताई जाती है ! यह जलाशयों में--विशेषकर अमेजन नदी के दलदली क्षेत्रों में---अपना मुँह पानी से बाहर निकाले पड़ा रहता है ! ये विशाल सर्प अण्डे देने के बजाय उन्हें शरीर ही में सेकर, प्रसव की रीति से, जीवित बच्चे पैदा करते हैं । पुरानी दुनिया का सबसे बड़ा अजगर बर्मा, इंडो-चीन, मलय-प्रदेश और फिलिपाइन्स में पाया जाता है। उसकी लम्बाई ग्यारह मीटर और वजन डेढ़ क्विटल से भी ज्यादा होता है ! अजगरों की कुछ जातियाँ भारतवर्ष, अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया में भी मिलती हैं । ये सब बड़े ही सुन्दर चितकबरे डिजाइनवाले उरंगम होते हैं !

उड़नेवाले सर्प

ऊपर उल्लिखित खतरनाक सर्पों के अतिरिक्त, पानी में पाये जानेवाले, वृक्षवासी, काँच के-से बदनवाले, आदि अनेक विषहीन निरापद सर्प भी मिलते हैं; परन्तु विस्तार-भय से

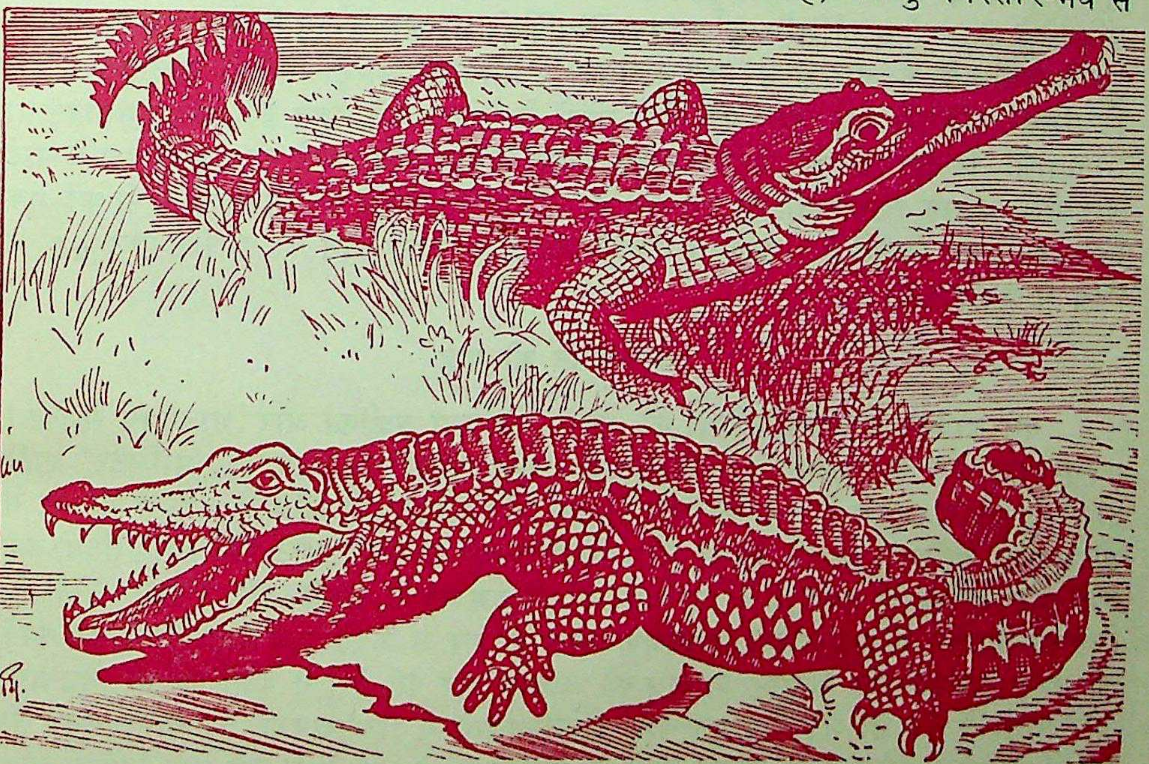

वर्तमान युग के सबसे बड़े और डरावने जलस्थलचर उरंगम 'मगर' की दो जातियाँ--(ऊपर) लंबी थूथनवाला 'नाक' नामक घड़ियाल; (नीचे) चौड़े मुँहवाला साधारण मगर ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनका विवरण देने से हम यहाँ लाचार हैं। हाँ, कुतूहल के लिए इस वर्ग के उन अनोखे प्राणियों की जानकारी करा देना हम आवश्यक समझते हैं, जिनके बारे में यह प्रसिद्ध है कि वे आसमान में उड़ सकते हैं। ये तथाकथित 'उड़नेवाले सर्प' वास्तव में न तो पंख से युक्त होते हैं, न चमगादड़ जैसी बढ़ी हुई झिल्लियाँ ही उनमें होती हैं, जिनकी मदद से वे हवा में उड़ सकें। इनकी खूबी केवल यही होती है कि इनके बदन एकदम फीते जैसे चपटे होते हैं। बस, उक्त फीतेनुमा बदन की बदौलत ही वे मानो हवा में पैरते हुए-से वृक्षों की एक डाली से दूसरी डाली पर अथवा जमीन पर आ उतरते हैं। इसी से ये उड़ते हुए-से जान पड़ते हैं।

छिपकिलियाँ और गिरगिट

साँपों के उपरान्त उरंगम-वर्ग के प्राणियों में हमारे सबसे अधिक जाने-पहचाने हुए छिपकिली और गिरगिट आदि वे अनेक छोटे-बड़े जीव हैं, जो अपने घिनौने स्वरूप तथा छोटे-छोटे पैरों के बल रेंगकर चलने के कारण बेहद अरुचिकर जान पड़ते हैं। छिपकिली की दुम कट जाने के उपरान्त भी पुनः उग आती है और गिरगिट बरसात की मौसम में अपने बदन का रंग बदलते पाया जाता है! दुनिया में छिपकिली-वर्ग की दो हजार बिरादरियाँ हैं। उनमें से कई ऐसे राक्षसी स्वरूप की हैं कि बीते हुए युगों के डरावने उरंगमों की याद आ जाती है। उदाहरणार्थ, न्यूजीलैण्ड में 'तुआरा' नामक एक छिपकिली ऐसी मिलती है, जिसके दो के बजाय तीन आँखें होती हैं! उधर अमरीकी विषुवत् वन्यप्रदेशों की हरित-भूरे वर्ण की दो मीटर लम्बी 'इगुआना' और अपनी पीठ से दुम तक एक अनोखी कंटक-पंक्ति-सी उगाए हुए 'बैसिलिस्क' नामक छिपकिली भी कम डरावनी नहीं होतीं। उधर पुराने जमाने के कवचधारी उरंगमों की याद दिलानेवाली ऑस्ट्रेलिया की 'मलोक' नामक छिपकिली (जिसके सारे बदन पर तीखे सींगों के-से शूल उगे रहते हैं) और चमगादड़ या उड़नेवाली गिलहरियों जैसे डैनों से युक्त मलय प्रदेश तथा हमारे ही अपने देश में पाई जानेवाली उड़ाकू छिपकिली भी इस वर्ग के उल्लेखनीय नमूने हैं। गिरगिटों के भी कई एक दिलचस्प नमूने मिलते हैं। इनमें से एक अनोखे झालरदार नमूने की तस्वीर पृष्ठ ६६ के चित्र में प्रदर्शित है।

भाँति-भाँति की गोह

बड़े आकार की छिपकिलियों की अनेक जातियाँ अफ्रीका और भारतवर्ष से लेकर मलय-प्रदेश और ऑस्ट्रेलिया तक विस्तृत हैं। इन्हें 'गोह', 'बिसखपरा', 'मॉनिटर' आदि नामों से पुकारा जाता है। ये सब घोर हिंसक और मांसाहारी जीव हैं। इनके आहार में छोटी-छोटी चिड़ियों, अण्डों, मेंढकों और छिपकिलियों से लेकर छोटे-छोटे स्तनपोषियों तक सभी कुछ शरीक हो सकते हैं। इन उरंगमों की दुम काफी लम्बी और मजबूत होती है, जिसका उपयोग ये एक सक्रिय आक्रामक शस्त्र के रूप में करते पाये जाते हैं। वे उसे कोड़े की तरह फटकारकर शिकार या शत्रु को घायल कर देते हैं। ये वृक्षों पर भी चढ़ जाते और पानी में तैर भी लेते हैं। इन बड़ी छिपकिलियों में 'बिसखपरा' का नाम सुनते ही हमारे देहातों में लोग प्रायः घबड़ा उठते हैं, कारण हमारे यहाँ सभी उसे घोर विषैला और प्राणघातक मानते हैं। इसमें संदेह नहीं कि यह जंतु मनुष्य एवं अन्य पशुओं को काट लेता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है, परन्तु जंतु-वैज्ञानिकों का कथन है कि उसका दंश जहरीला नहीं होता ! वस्तुतः दाँतों से सम्बद्ध विष-ग्रंथियों जैसी कोई भी व्यवस्था इस प्राणी के मुँह में नहीं है। जो भी हो, मटमैले श्यामल वर्ण का यह सरीसृप अपनी चिमटे की तरह फटी हुई लपलपाती हुई सर्प की-सी जिह्वा के कारण बड़ा ही भयोत्पादक जान पड़ता है।

गोह छिपकिली-वर्ग का सबसे बड़ा प्राणी है, जिसके कतिपय नमूने पाँच मीटर तक की लम्बाई के भी पाये गये हैं। ये उरंगम अपनी शक्ल-सूरत और चर्या आदि से हमें करोड़ों वर्ष पूर्व के उन प्राचीनकाल के दैत्याकार रेंगनेवाले प्राणियों की याद दिलाते हैं, जिनका कि विवरण पिछले एक अध्याय में दिया जा चुका है। गोहों की खाल छिपकिलियों या गिरगिट की-सी उभरे हुए सिन्नोंवाली न होकर खास तरह के छोटे-छोटे जमे हुए सिन्नों की-सी खुरखुरी होती है। इनके पंजों की पकड़ बहुत मजबूत होती है। इसीलिए प्राचीनकाल में किलों की दीवारों पर चढ़ने के लिए हमारे देश में इनका उपयोग किया जाता था ! इसके लिए खास तौर से गोहों को पालकर शिक्षा दी जाती थी ! कहते हैं, एक बड़ी-सी गोह की दुम में रस्सी बाँधकर चुपके से किले की दीवार के तले पर उसे छोड़ दिया जाता था। वह सरसराती हुई ऊपर जाती थी और दीवार के सिरे पर के किसी कँगूरे पर अपने पंजे मजबूती से गढ़ाकर वहीं चिपक जाती थी ! बस, फिर क्या था—लोग लटकती हुई रस्सी को पकड़कर दीवार पर चढ़ जाते ओर चुपके से किले में प्रविष्ट हो जाते थे !

वर्तमान काल में संसार की सबसे बड़ी गोह पूर्वीय द्वीप-समूह के कमोडो, रिंजा आदि द्वीपों में मिलती है। वह 'कमोडो ड्रेगन' के नाम से प्रख्यात है। उसकी लम्बाई तीन-चार मीटर तक और वजन एक क्विटल से भी अधिक होता है। ये भयावने प्राणी सुअर का

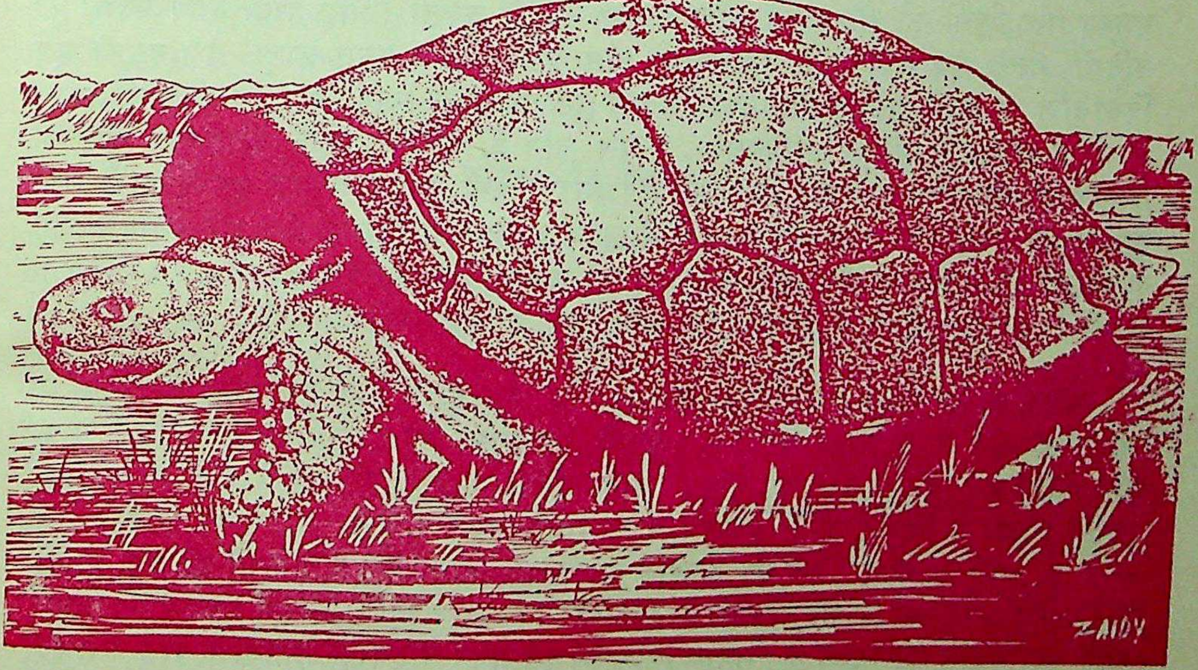

गेलेपेगास द्वीप में पाया जानेवाला महाकाय थलचर कच्छप, जो तीन-चार सौ वर्ष तक की उम्र पानेवाला दीर्घजीवी प्राणी है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिकार करके जीवन-निर्वाह करते हैं। इनकी जिह्वा साँप की तरह दो शाखाओंवाली होती है। इनके पंजों के नाखून काफी बड़े और अंकुश जैसे होते हैं। अपने पैरों पर बदन को ऊँचा करके जब यह डरावना प्राणी गरदन उठाकर घसिटते हुए चलता है, तो भय से देखनेवालों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं!

विषैली छिपकिलियाँ

वास्तविक रूप में विषैली छिपकिलियाँ इस समय तक वैज्ञानिकों को केवल दो ही ज्ञात हैं। ये दोनों नई दुनिया में पाई जाती हैं––एक तो मैक्सिको एवं मध्य अमेरिका के क्षेत्र में तथा दूसरी संयुक्त राज्य (अमेरिका) के अरिजोना प्रदेश में! अरिजोनावाली छिपकिली 'गिला मॉन्स्टर' के नाम से प्रख्यात है। चटकीले संदुरिया, काले एवं भूरे धब्बों से युक्त, दंदानेदार खालवाले लगभग पौन मीटर लम्बे, इन घिनौने उरंगमों के दाँतों के साथ सर्प की-सी विष-ग्रंथियाँ होती हैं। इनके बदन के लाल-काले चकत्ते मानो दूसरे जीवों को इन खतरनाक प्राणियों से सदैव सतर्क रहने की चेतावनी देते रहते हैं। कहते हैं, जब ये छिपकिलियाँ काटती हैं, तो कुछ जाति के सर्पों की तरह अपने दाँत गड़ाने के बाद तुरन्त ही उलट जाती हैं, ताकि इनका विष दाँतों की प्रणालियों में से होकर शिकार के घाव को बखूबी सींच सके! इनके दंश से मनुष्यों की मृत्यु के अनेक उदाहरण मिलते हैं।

भयंकर जलस्थलचर---'मगर' या 'घड़ियाल'

उरंगमों में 'मगर' वैसा ही भयावना है, जैसा कि स्तनपोषियों में बाघ आदि हिंसक शिकारी जानवर हैं। यह बृहदाकार जलस्थलचर आकार और डीलडौल में तमाम रेंगनेवाले प्राणियों को मात करता है। अपनी उदर-पूर्ति के लिए यह जंतु बड़े पशुओं से लेकर मनुष्य तक किसी को भी अपनी लपेट में लेने से नहीं चूकता! यह प्रायः उष्ण प्रदेशों की नदियों, झीलों एवं नदियों के मुहानों के पास के समुद्रों में पाया जाता है। इसकी क्रूर हिंसावृत्ति में सबसे अधिक सहायता देनेवाले एक तो उसके ऊपरी और निचले दोनों जबड़ों में काफी संख्या में मौजूद पंक्तिबद्ध कराल दाँत हैं, जो कि उसके दीर्घाकार मुख को शिकंजे की-सी योग्यता प्रदान किये हुए हैं! दूसरे, अपनी बेहद ताकतवर एवं खुरखुरी लंबी दुम से भी उसे शिकार को धर पटकने में अद्भुत सहायता मिलती है। इस भयावने जंतु के जबड़ों की जकड़ में फँस जाने के बाद हाथी जैसे शक्तिशाली पशु की भी कुशल नहीं रहा करती! हमारे पुराणों में वर्णित 'गज और ग्राह का युद्ध' प्रसिद्ध ही है!

मगर की दो मुख्य जातियाँ हैं–एक तो चौड़े जबड़ेवाली, जिसे हम प्रायः 'घड़ियाल' या 'मगर' के नाम से पहचाना करते हैं। दूसरी, थूथननुमा बहुत लम्बे मुँहवाली, जिसे 'नाक' कहा जाता है! हमारे यहाँ की गङ्गा जैसी नदियों में इस जंतु की ये दोनों ही जातियाँ पर्याप्त संख्या में मिलती हैं! आकार में भारतीय मगर पाँच-छः मीटर तक और अफ्रीकी मगर छः साढ़े छः मीटर तक की लम्बाई का पाया जाता है। घड़ियालों की एक बृहदाकार जाति अमेरिका में भी मिलती है, जिसकी वर्तमान लम्बाई लगभग चार मीटर बताई जाती है। परन्तु डीलडौल के लिहाज से सबसे बड़े मगर नदियों के मुहानों के पास के समुद्री क्षेत्रों में मिलते हैं! ये दस-ग्यारह मीटर से भी अधिक लम्बे बताये गये हैं, यद्यपि विज्ञान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्वारा यह बात प्रमाणित नहीं है ! इन प्राणियों की कई एक बिरादरियाँ काफी छोटे आकार की भी मिलती हैं——जैसी कि दक्षिणी अमेरिका की नदियों में पाई जानेवाली एक जाति की लम्बाई एक मीटर से ज्यादा नहीं होती ! कुल मिलाकर इस भयावने जंतु की कोई सत्ताईस उपजातियाँ हैं । उनमें 'मगर' और 'नाक' के अतिरिक्त अमरीकी 'कैमान' जाति के घड़ियाल प्रमुख हैं ।

'नाक' अपने विचित्र प्रकार के थूथननुमा मुख के कारण मछलियों पर ही गुजर-बसर करता है, क्योंकि उसके जबड़े उन्हीं के शिकार के लिए विशेष रूप से उपयुक्त होते हैं । इसके विपरीत 'घड़ियाल' एक सर्वभक्षी हिंसक प्राणी है । वह मछलियों से लेकर तटवर्त्ती पशु-पक्षियों तक सभी को अपनी आहार-सामग्री मानता है । ये प्राणी बिना साँस लिए पाँच-छः घण्टे तक जल के भीतर रह सकते हैं । जब उन्हें साँस लेने की जरूरत होती है, तब भी अपना पूरा शरीर वे पानी से बाहर नहीं निकालते——केवल अपने नथुनों एवं खास प्रकार की ऊपर उभरी हुई आँखों को ही पानी से बाहर निकालकर वे तैरते रहते हैं । इस अवस्था में उनकी मौजूदगी का पता न पाकर प्रायः पानी पीने के लिए आये हुए किनारे पर के पशु अथवा जल की सतह पर उतरनेवाले पक्षी आदि जीव धोखे में पड़ जाते हैं और उनके शिकार बन जाते हैं । प्रायः शिकार को अपने काबू में आया हुआ देखकर, यह राक्षसी जीव अपनी भयावनी खुरखुरी दुम को ऐसा फटकारता है कि उसकी लपेट में आकर बड़े से बड़ा पशु भी लड़खड़ा जाता है और उसकी ओर खिंच जाता है । बस, एक बार जहाँ शिकार पानी में गिरा नहीं कि मगर की बन पड़ती है ! वह अपने जबड़ों की कैंची में शिकार के किसी अङ्ग को पकड़कर उसे धर दबोचता है । मगर जबर्दस्त तैराक होता है । कभी-कभी पानी से बाहर निकलकर वह किनारे की दलदली जगहों में सुस्ताया भी करता है । समस्त उरंगमों की भाँति, मगर भी अण्डे देकर बच्चे पैदा करता है । ये अण्डे तट पर कहीं छिपाकर रक्खे जाते हैं । इनके बच्चे अपने दाँत द्वारा अण्डे की दीवार तोड़कर बाहर निकलते हैं और पैदा होते ही तुरन्त पानी में प्रवेश करके तैरने लगते हैं !

भाँति-भाँति के कछुए

उरंगमों का चौथा और अन्तिम वर्ग 'कच्छप', 'कूर्म', 'कमठ', 'कछुआ' आदि नामों से पुकारे जानेवाले अनोखे कवचधारी प्राणियों का है । इनकी मुख्य पहचान और विशेषता यह है कि इनका शरीर पीठ पर एक तरह की कड़ी परतों द्वारा रचित दुर्भेद्य ढालनुमा खप्पर से ढका रहता है । इन रेंगनेवाले कवचधारियों की कोई पौने तीन सौ जातियाँ इन दिनों मिलती हैं । उनमें से कई तो केवल समुद्रों ही में रहनेवाली हैं और कई मीठे पानी के जलाशयों में ही पाई जाती हैं । कुछ जातियाँ थलचर अथवा जलस्थलचर भी हैं । समुद्री कच्छपों में सबसे विशाल 'चर्म-कूर्म' (लैदरी टर्टल) है, जिसके कई नमूने लगभग ढाई मीटर से भी अधिक लम्बे और सात क्विंटल तक वजनी पाये गये हैं ! यह महाकाय प्राणी 'चर्म-कूर्म' इसलिए कहलाता है कि इसका खप्पर सींग के-से पदार्थ से बना होने के बजाय एक तरह की बेहद चीमड़, कड़ी और दुर्भेद्य चमड़े-जैसी खाल से मढ़ा होता है । डाँड़नुमा चौड़े सुफनों जैसे अपने हाथ-पैरों से यह कूर्म इस तरह सफाई से तैरता है कि उसे देखकर आसमान में उड़ते हुए उकाब की याद हो आती है ! यह केवल अण्डे देने को ही तट पर आता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है, इसका बाकी सारा समय जल ही में बीतता है। इसका रंग गहरा कत्थई होता है, जिस पर पीले धब्बे पड़े होते हैं। अन्य एक समुद्री कच्छप, जो मनुष्य द्वारा खाया जाता है, अपनी चर्बी के हरे रंग के कारण 'हरा कूर्म' कहलाता है। इसका आकार एक मीटर के लगभग और वजन लगभग डेढ़ क्विटल होता है। इसका खप्पर हरित-भूरे रंग का होता है, जिस पर पीतवर्णीय धब्बे बने रहते हैं। हरा कूर्म एक बार में सैकड़ों अण्डे देता है। इन्हें यह सूरज की गरमी द्वारा सेये जाने को तटवर्त्ती बालू में एक गड्ढे में छोड़ देता है। ये कच्छप समुद्र पर तैरते-तैरते सो भी जाते हैं! उस समय ये आसानी से पकड़ लिए जाते हैं। अन्य एक प्रसिद्ध समुद्री कच्छप 'बाजचोंचा कूर्म' है, जिसके पक्षियों की-सी चोंचनुमा थूथन तथा हाथ-पैरों में दो-दो नख होते हैं। इसके खप्पर का रंग बहुत सुन्दर होता है।

बृहदाकार दीर्घजीवी कछुए

परन्तु कच्छप-वर्ग के अद्भुत उरंगमों में सबसे अधिक दिलचस्प धरती पर रहनेवाले थलचर कमठों की कुछ जातियाँ हैं, जिनमें से कुछ असाधारण दीर्घजीवी पाई गई हैं। कहते हैं, दक्षिणी अमेरिका से आठ सौ किलोमीटर दूर गेलेपेगास द्वीपों में पाई जानेवाली एक जाति के दैत्याकार कच्छप––जिनके कवच का आकार सवा मीटर तक का होता है और वजन ढाई क्विटल तक का पाया जाता है––करीब-करीब १५०-२५० से ४००-५०० वर्ष तक की दीर्घायुवाले पाये गये हैं! हिन्द महासागर के सिचिलीज और अल्दाबेरा द्वीपों में भी एक बहुत बड़ा थलचर कच्छप मिलता है, जिसका खप्पर हाथी की पीठ की तरह ऊपर उभरा रहता है। इसी से यह 'हाथी-कमठ' कहलाता है। थलचर कमठों की एक बृहद्काय जाति अफ्रीका के भूभाग पर भी मिलती है। ये प्राणी मंदगामी होने पर भी काफी बुद्धिमान् होते हैं। जंतुशालाओं में पाले जाने पर ये अपने रखवाले को पहचानने लगते हैं और उसके हाथों से आहार ग्रहण करते हैं। ये कीड़े-मकोड़े, घोंघे, फल, अनाज, वनस्पतियाँ आदि खाकर अपना गुजारा करते हैं।

इन भीमकाय थलचर कच्छपों की एक जाति हमारे देश में भी हिमालय की शिवालिक नामक निचली पर्वतश्रेणी के इलाके में पाई जाती है। इसे 'एटलस टार्टाइज' का नाम जंतुवैज्ञानिकों ने दिया है। आकार में लगभग दो मीटर लम्बा यह महाकच्छप दो सौ से तीन सौ वर्ष तक की आयु प्राप्त करते पाया गया है। अन्य थलचर कछुओं में दक्षिणी चीन, थाईलैण्ड एवं बर्मा में प्राप्त असाधारणतया बड़े सिर और सपाट चपटे खप्परवाले कमठ तथा ब्राजिल के सूँड जैसी नासिकावाले खुरदरी गरदन के अनोखे कछुए भी उल्लेखनीय हैं। ब्राजिल के एक कमठ की गरदन साँप जैसी लंबी होती है, जिसे वह बड़े अजीब ढंग से खींचकर अपने खप्पर में एक बाजू को समेट लिया करता है।

यद्यपि कछुए अपनी मंद चाल के लिए प्रख्यात हैं, तथापि कभी-कभी वे मंद गति से चलते हुए बड़े धैर्यपूर्वक कोसों का फासला तय करते हुए भी पाये गए हैं। महान् वैज्ञानिक डार्विन ने गेलेपेगास द्वीप के भीमकाय कच्छपों को अपनी प्यास बुझाने के लिए पानी की खोज में चट्टानों पर रेंगते हुए कई किलोमीटर दूर आते-जाते देखा था! उनकी चलने की गति प्रति दस मिनट में बीस मीटर के लगभग थी और इस तरह चलकर वे दिन भर में लगभग छः-सात किलोमीटर का फासला तय कर लेते थे!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'रत्नाकर' के नाम से पुकारा जानेवाला सागर अपने गर्भ में वस्तुतः हीरा, माणिक्य या नीलम जैसे जवाहरातों की राशि संचित किये हुए है या नहीं, इसका तो पता कोई नहीं बता सकता ! परन्तु यदि उसके अंचल में बसे हुए चित्र-विचित्र जीवों की बात कही जाय, तब तो निश्चय ही हम दावा कर सकते हैं कि कीमती जवाहरातों को भी लजा देनेवाले ऐसे अद्‌भुत-अनोखे नगीने जलमण्डल में भरे पड़े हैं कि उनके बल पर 'जलनिधि' निस्संकोच 'रत्ननिधि' कहकर पुकारा जा सकता है ! आओ, उन्हीं में से कुछ का परिचय यहाँ पाएँ !

चित्र-विचित्र आकृतियों की सजीव मणियाँ

अगले पृष्ठ के चित्र में प्रदर्शित कलापूर्ण आकृतियों की मनोहर छबि पर ध्यान दो ! ये हैं एक प्रकार के अति सूक्ष्म सरलतम आदि जीवों की ठठरियाँ ! वैज्ञानिकों की भाषा में ये जीव 'रेडियोलैरिया' एवं 'फोरेमिनीफेरा' के नाम से पुकारे जाते हैं ! ये ठठरियाँ वस्तुतः अपने यथार्थ आकार से कई गुना बढ़ाकर दिग्दर्शित की गई हैं ! कैसी-कैसी अनुपम झाँकियाँ इन सूक्ष्म प्राणियों के अद्‌भुत कलेवरों में देखने को मिलती हैं ! कोई असाधारण कारीगरी के साथ तराशे गये हीरा, पन्ना, माणिक्य या नीलम जैसे रत्नों की शक्ल के हैं। कोई जगमगाते हुए सितारों या नक्षत्रों की अद्‌भुत छटा दरसाये हुए हैं ! किसी में सूर्य की रश्मि-माला की-सी असंख्य बारीक-बारीक किरणें फूटती जान पड़ती हैं ! कोई राजप्रासादों की छतों पर से लटकते हुए कलापूर्ण झाड़-फानूसों की याद जगाने लगते हैं !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन अद्‌भुत आकृतियों के सूक्ष्म कलेवरों की रचना करके, करोड़ों वर्षों से जलमंडल के तले पर उनका अंबार रचते चले आ रहे अनूठे कलाकार आखिर हैं कौन ? वे हैं जंतु-संसार की विकास-श्रेणी के सबसे निचले स्तर के अत्यन्त सरल एवं क्षुद्र आदि जीव, जो कि 'प्रोटोजोआ' नामक प्राथमिक प्राणि-वर्ग के अन्तर्गत शरीक किये जाते हैं ! इन प्राणियों ने सागरजल में मिश्रित 'सिलिकन' तत्व को सोख-सोखकर, उसकी सामग्री द्वारा ये अनोखे कलेवर निर्मित किये हैं ! उनकी ठठरियों से महासागर की फर्श पर के कोई तीस-बत्तीस लाख वर्ग-किलोमीटर लंबे-चौड़े क्षेत्र पर चट्टानों की-सी एक मोटी पर्त-सी बिछ गई है ! भला, ये सूक्ष्म जीव कितने कोटि वर्षों तक कितनी संख्या में जुटे होंगे, तब कहीं जाकर यह पर्त जमा हुई होगी !

पेड़-पौधों एवं फल-फूल जैसे अद्‌भुत जीव

ऊपर उल्लिखित रत्नों एवं मणियों के अलावा, सागर और भी ऐसी अनेकों विचित्र करामातों को अपने अंचल में बसाये हुए है, जिनका हाल सुनकर बुद्धि चकराने लगती है ! उदाहरणार्थ, पृष्ठ १०६ और ११२ पर चित्रित वनस्पतियों की-सी अद्‌भुत आकृतियों पर गौर करो ! क्या तुम्हें एक आकृति हूबहू किसी पौधे या वृक्ष की-सी एवं दूसरी किसी सूखे पत्ते की ठठरी-सी नहीं जान पड़ती ? किन्तु क्या तुम्हें इस बात पर विश्वास होगा कि ये चित्र वनस्पति की दुनिया से कोई वास्ता नहीं रखते ! ये हैं समुद्र के गर्भालय में विद्यमान दो अनूठे जीव-रूपों की आकृतियाँ ! ये हैं शत-प्रति-शत जानवर, यद्यपि इन्होंने अपना भेस वनस्पति-सा बना रक्खा है ! तुम्हें यह जानकर हैरानी होगी कि जलमण्डल के महान् अजायबघर में पेड़-पौधों और पुष्पों-फलों का स्वाँग रचकर उनकी हूबहू नकल उतारनेवाले

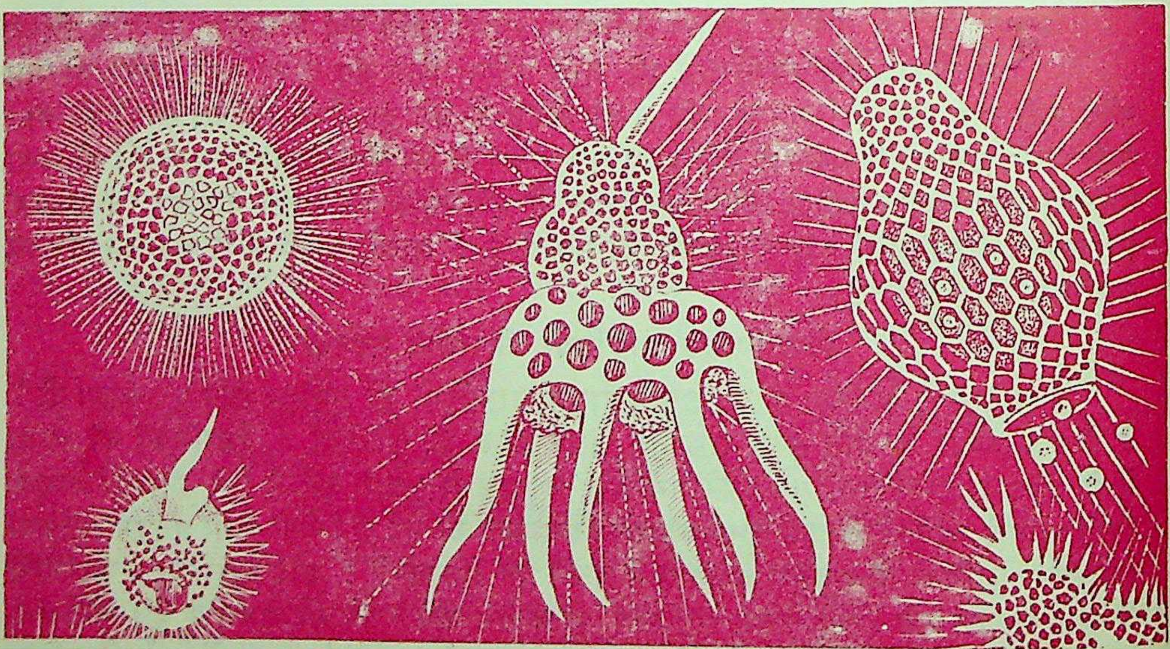

रत्नों, सितारों या झाड़-फानूसों के आकार की ये रचनाएँ 'रेडियोलैरिया' आदि सरलतम सूक्ष्म जलजीवों की महासागर के अंचल में पाई जानेवाली परित्यक्त ठठरियाँ हैं ! यह इनके असली आकार से सौ गुना परिवर्द्धित चित्र है !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

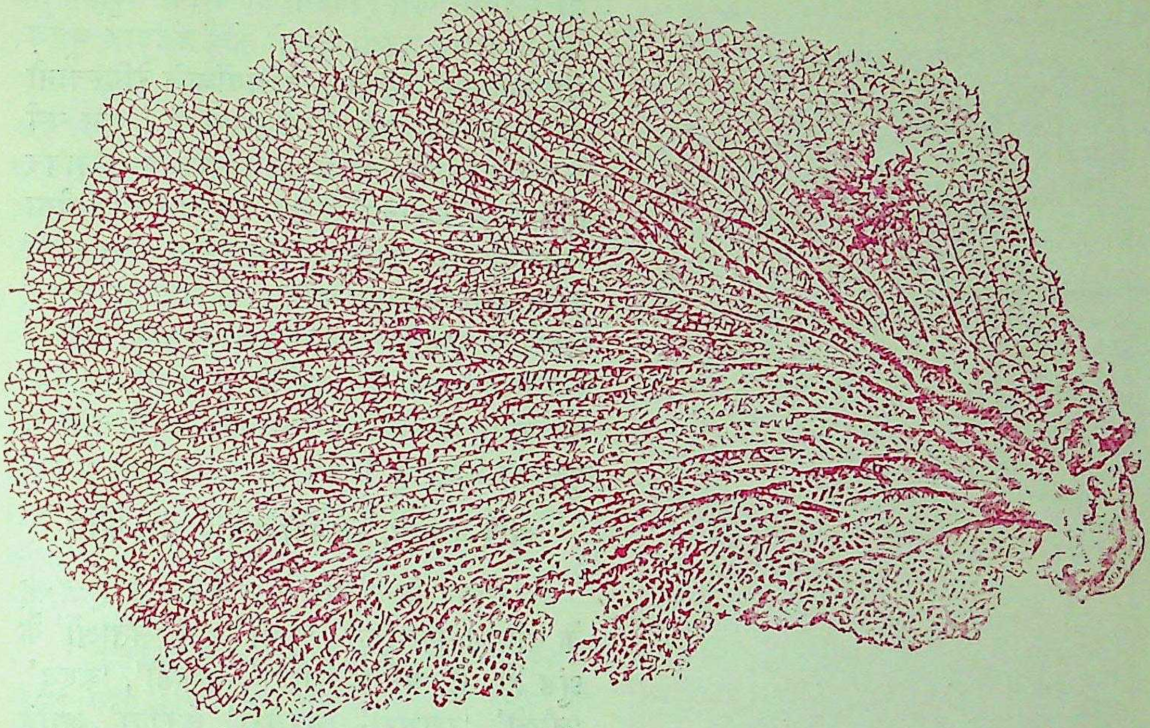

किसी पेड़ की बड़ी-सी पत्ती के सूखे कंकाल जैसी जान पड़नेवाली यह तस्वीर वस्तुतः 'मूंगा-वर्ग' के समुद्री जल-जंतुओं की अनेक जातियों में से एक की अनूठी ठठरी है ! जीवित अवस्था में इनकी शाखा-प्रशाखाओं पर एक प्रकार के जैव पदार्थ का आवरण चढ़ा रहता है, जो मांस जैसा होता है ।

इस तरह के वनस्पतिरूप जीवधारियों की एक पूरी नुमाइश-सी लगी है ! या यों कहिये कि समुद्रतल पर इनके लम्बे-चौड़े वन-से फैले हैं एवं वहाँ उनकी अनेकों सुरम्य सुन्दर वाटिकाएँ उगी हुई हैं ! आइए, उनमें से कुछ का परिचय प्राप्त करें।

भाँति-भाँति के स्पंज

उपर्युक्त बहुरूपियों की अनेकों जमातें या बिरादरियाँ हैं। इनमें से कई बृहत् टोलियों ही में रहते हैं । इनमें जो अपेक्षाकृत निम्न कोटि के हैं, अर्थात् जीव-विकासक्रम की दृष्टि से जिनकी आन्तरिक रचनाएँ सरलतर हैं, वे 'पोरिफेरा' (अर्थात् बहुछिद्री बहुकोशीय प्राणि-वर्ग) कहकर पुकारे जाते हैं । हमारे स्नानागारों में प्रयुक्त 'स्पंज' नामक जल सोखनेवाला प्रसिद्ध पदार्थ इस वर्ग के जीवधारियों का एक उल्लेखनीय प्रतिनिधि है---वह इन्हीं का निर्जीव कलेवर अथवा शरीरावशेष है !

इन सरल प्राणियों का प्रधान लक्षण यह है कि इनके शरीर में ऐसे अगणित छिद्र या रिक्त कोष्ठ-से बने होते हैं, जिनके द्वारा ये जल को पर्याप्त मात्रा में सोखकर उसे अपने भीतर धारण किये रहते हैं । इनकी दो-ढाई हजार जातियाँ पाई जाती हैं। पहले लोग इन्हें एक प्रकार के वनस्पति ही मानते रहे ! परन्तु अब इनके जैव रूप की बाबत पूरी तसल्ली की जा चुकी है । ये हरे, पीले, भूरे, नारंगी, लाल, बैंजनी, काले और सफेद आदि सभी रंगों के मिलते हैं । उनमें से कुछ यदि प्यालों और फूलदानों की शक्ल के होते हैं, तो कुछ सुराही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

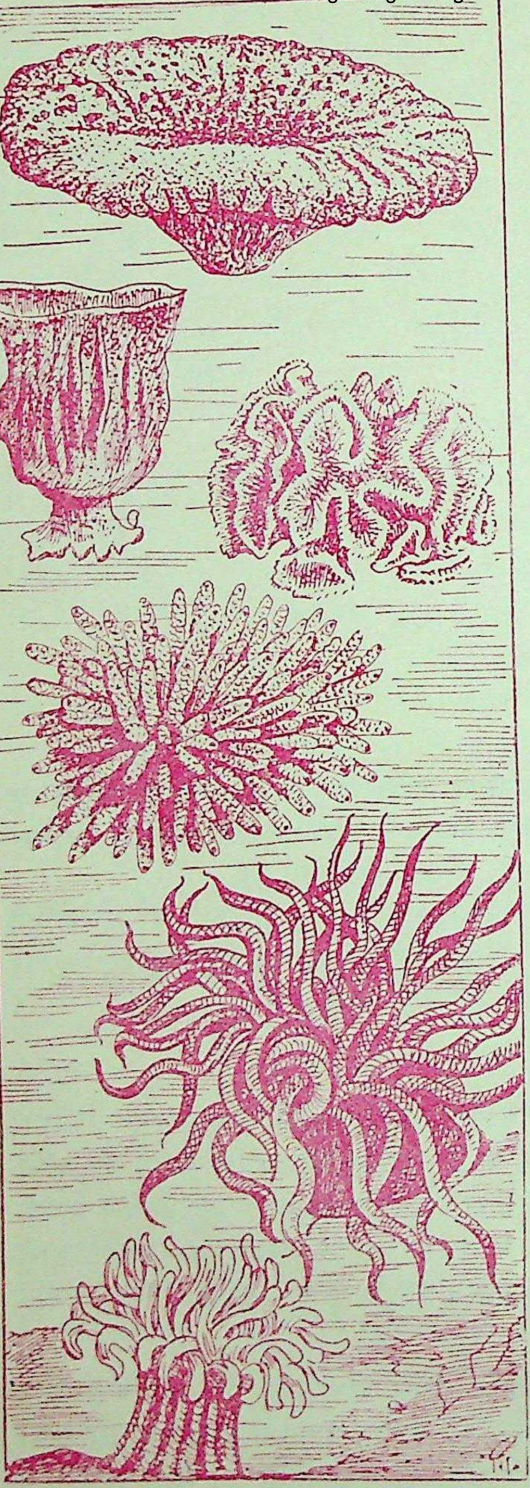

(क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर)— 'स्पंज', 'मूंगा' और 'एनीमोन' नामक समुद्री जलजीवों के दो-दो नमूने ! इन वनस्पति जैसी शक्लों को देखकर कौन यह सोच पाएगा कि ये वस्तुतः जानवर हैं !

या मर्तबान जैसे ! किसी को देखकर खुम्मियों की याद जग उठती है, तो कोई डंडेदार थूहड़ या नागफनी जैसे बिना पत्तियोंवाले रेगिस्तानी पौधों का भ्रम पैदा करने लगते हैं ! इस वर्ग के एक अनूठे जीव की शोभा का मुकाबला शायद ही अन्य कोई जीवधारी कर पाएगा ! काँच जैसा चमकदार यह अद्भुत स्पंज महीन श्वेत धागों द्वारा बुनी गई एक प्रकार की बड़ी ही सुन्दर जाली से सुशोभित खोलनुमा लंबी टोकरियों का रूप लिए रहता है ! इसीलिए यह 'वीनस देवी की फूलों की डलिया' के कवित्वपूर्ण नाम से पुकारा जाता है !

खीरे-ककड़ी, रसभरी-करौंदे जैसे जीव

सागर के अंचल में न केवल तरह-तरह के पुष्पित-पल्लवित 'वृक्षों' एवं 'लताओं' के झुंड ही हैं, बल्कि 'खीरा', 'ककड़ी', 'कद्दू', 'लौकी', 'रसभरी', 'झरबेरी', करौंदा' आदि फलों एवं तरकारियों की शक्लें अपनाये हुए जंतु-जगत् के कतिपय सबसे अनूठे बहुरूपियों से भेंट-मुलाकात करने का भी सुयोग हमें यहाँ मिलता है। ये सब प्राणी बाहरी दिखावे में उपर्युक्त फल-तरकारियों से इतने अधिक मिलते जान पड़ते हैं कि लोगों ने उनके यही नाम रख दिये हैं—अर्थात् 'समुद्री खीरा-ककड़ी', 'समुद्री रसभरी' आदि ! परन्तु अपनी शक्ल-सूरत द्वारा वनस्पतियों का धोखा पैदा करनेवाले ये प्राणी शतशः जानवर ही हैं ! यह इनकी चर्या से तत्काल प्रकट हो जाता है। इन्हें लोग बड़े चाव से खाते भी हैं।

'एनीमोन'——पुष्परूपी अनोखे जानवर

अब 'समुद्री फूलों' के नाम से प्रख्यात बहुरूपिए जीवों को लो, जो हूबहू पंखुड़ीदार सुहावने पुष्पों-जैसे जान पड़ते हैं ! ये अनूठे जलजीव सागरतल पर छाए हुए भाँति-भाँति के वनस्पतिरूप जीवधारियों की झाड़ियों में चिपके रहते हैं। ज्योंही कोई झींगा-मछली या

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समुद्री कीट उनकी पंखुड़ियों के समीप पहुँचा नहीं कि तत्काल ही एक अजीब हरकत उनमें होने लगती है ! उनकी पंखुड़ियाँ बाहर की ओर फैल-कर विस्तृत होने लगती हैं, जिससे कि पुष्प का मुख खुल जाता है ! तदुपरान्त वे इस प्रकार की गति करने लगती हैं, मानो किसी वस्तु को ग्रहण करके अपना मुख बन्द करने जा रही हों। कुछ ही क्षणों में हम देखते हैं कि वह कीट या झींगा एकाएक न जाने कहाँ गायब हो गया, साथ ही उस पुष्परूपी दैत्य का मुख भी एकाएक चट से बन्द हो गया ! कहने की आवश्यकता नहीं कि शिकार शिकारी के हाथ लग चुका था और अब उस पुष्परूपी राक्षस के उदर में महज उसे पचाने-सम्बन्धी कार्रवाइयाँ भीतर ही भीतर चालू हो रही थीं !

इन प्राणियों में गेंदा और गुलदावदी, सूर्य-मुखी और कोकाबेली, सभी प्रकार के पुष्पों के भिन्न-भिन्न रंगों एवं आकारों की अनुपम छटा छाई रहती है ! कुछ की पंखुड़ियाँ लंबी पत्तियों जैसी छितराई हुई मिलती हैं, तो कुछ के पुष्प-व्यूह बँधी हुई-सी शक्ल में व्यवस्थित पाये जाते हैं। इन जीवों के शरीर में लबालब समुद्रजल भरा रहता है ! विशेषकर उनकी पंखुड़ियाँ सर्वथा जलपूरित रहती हैं ! इसी से वे तनी-तनी-सी रहती हैं। वे भीतर से खोखली होती हैं और उनके सिरे पर एक छिद्र-सा होता है। इस रास्ते जब चाहे तब यह जीव पिचकारी की तरह फुहार छोड़कर अपनी जलराशि कम कर लेता है !

मजेदार बात यह है कि अपने आहार को उदरस्थ कर लेने के कुछ घण्टे बाद ये जीव पुनः अपना मुँह खोलकर शिकार का बेकार बचा हुआ अंश बाहर निकाल फेंकते हैं ! इसी तरह यदि कुतूहल के हेतु, मांस-मछली के टुकड़े के बजाय किसी अखाद्य वस्तु को इनके मुँह के समीप ले जाया जाय, तो पहले तो ये स्वभाववश बड़ी उत्सुकतापूर्वक अपनी पंखुड़ियाँ फैलाकर उसे पकड़ने का प्रयास करेंगे, परन्तु दो-एक बार की

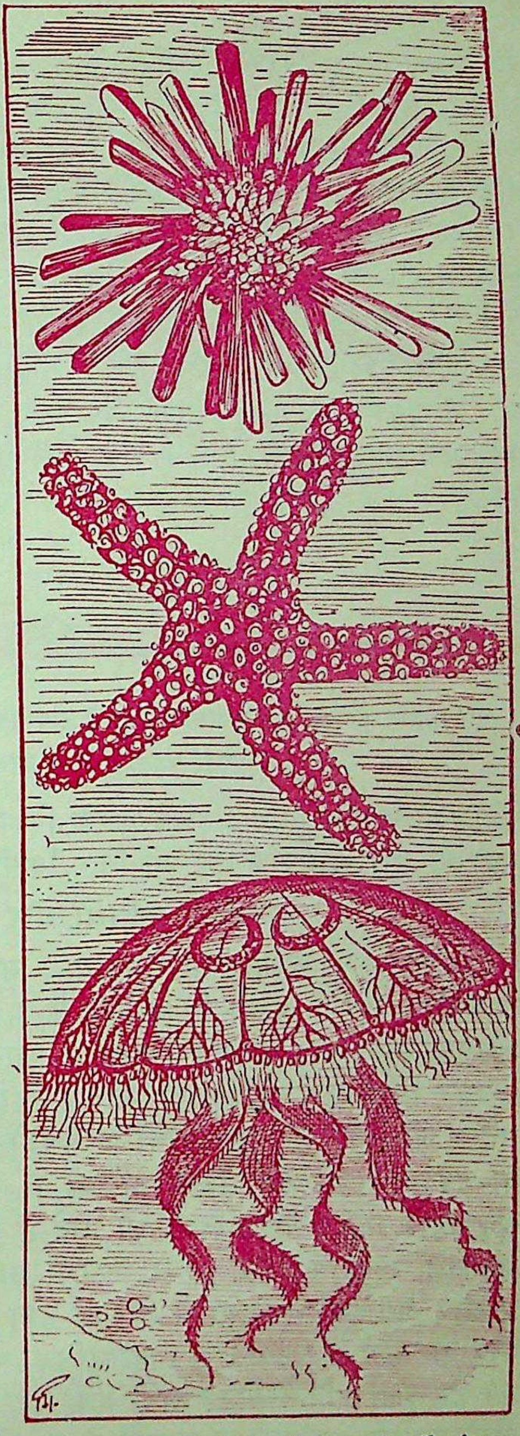

(क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर)—'सी-अर्चिन' नामक कंटकचर्मी; 'सितारा-मछली'; और 'लस-मछली' की छतरीनुमा मनोहर आकृति। ये सभी जीव छूने पर डंक मारनेवाले होते हैं !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

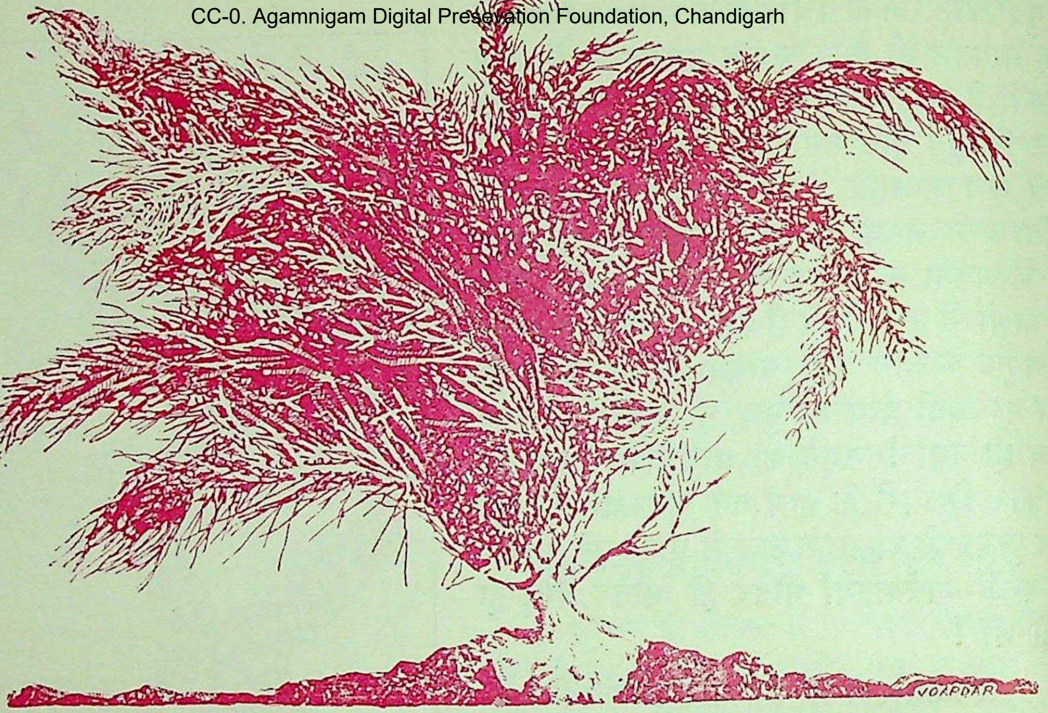

इस आकृति को कहीं तुम वनस्पति-जगत् से संबंधित न समझ बैठना, यद्यपि यह हूबहू फर्न की जाति के वृक्ष जैसी दिखाई पड़ती है। यह दरअसल मूँगा-वर्ग का एक जलजीव है।

कोशिशों के बाद, यह अनुभव करके कि यह अखाद्य वस्तु उनके अपने किसी भी काम की नहीं, वे उसे समीप पाकर भी फिर किसी प्रकार की हरकत नहीं करते !

पौधों, लताओं और वृक्षों जैसे बहुरूपिए प्राणी

जलजीवों के मायावी संप्रदाय के सबसे प्रसिद्ध जीवधारी 'प्रवाल' या 'मूँगा-वर्ग' के वे भाँति-भाँति के प्राणी हैं, जो जल में से चूने जैसा एक पदार्थ लेकर अपने पत्थर जैसे कड़े कलेवरों की रचना करते हैं। वृक्षों की शाखा-प्रशाखाओं की भाँति निरंतर बढ़ते हुए इनके कलेवर किसी एक व्यक्तिगत जीवधारी के नहीं, प्रत्युत समष्टि रूप से पूरी बिरादरी के शरीर जैसे होते हैं। इन जीवों के सैकड़ों-हजारों भेद पाये जाते हैं। उनमें कोई नागफनी या डंडेदार थूहड़ जैसे बिना पत्तियों के, कोई दंदानेदार या कंटकित, तो कोई फर्न जैसे सदाबहार महीन पत्तियोंवाले भी होते हैं ! इनके रंग मटमैले भूरे रंग से लेकर चटकीले-भड़कीले लाल, सेंदुरिया, पीले, नारंगी आदि सभी प्रकार के होते हैं ! इनकी ठठरियों का अम्बार लगते-लगते समुद्र में विस्तृत टापू तक बन गये हैं, जो कि 'प्रवाल-द्वीप' या 'मूँगे के टापू' के नाम से प्रख्यात हैं। ऑस्ट्रेलिया के तट के समानान्तर ऐसी प्रवाल-द्वीप-शृंखलाओं की डेढ़ हजार किलोमीटर लंबी एक लड़ी पाई जाती है। प्रायः तुमने गोंड, भील या संथाल जैसी आदिम जातियों के मनुष्यों के गले में लाल-लाल मनकों की मालाएँ सुसज्जित देखी होंगी ! वे इन्हीं मूँगों की चटकीले रंग की ठठरियों से तराशकर बनाई जाती हैं ! इन विचित्र जलजीवों के दो अद्भुत नमूने पृष्ठ ११० के चित्र में प्रदर्शित हैं। उन्हें देखकर कौन सोचेगा कि ये वनस्पति नहीं, बल्कि प्राणी हैं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लस-मछली, सितारा-मछली आदि

क्षुद्र कोटि के विचित्रवेशधारी जलचरों के अन्य उल्लेखनीय उदाहरण 'लस-मछली' एवं 'सितारा-मछली' जैसे वे जीव हैं, जिनसे प्रायः सभी समुद्रतटवासी भली-भाँति परिचित रहते हैं। लस-मछलियों को 'जेली-फिश' भी कहते हैं। ये बहुत ही नरम और पारदर्शक होती हैं। समुद्र की ऊपरी सतह पर प्रायः अपनी छतरीनुमा झालरदार सुन्दर आकृतियों को तानकर तैरते हुए इनके बदन से यदि हमारा कोई अङ्ग छू जाय, तो उससे काफी जलन-सी होने लगती है। यह इसलिए होता है कि इन प्राणियों में एक तरह के डंक मारनेवाले बारीक सूत-से होते हैं, जो कि इनके रक्षा के हथियार हैं! इनका शरीर एक तरह के नरम एवं लसलसे पदार्थ द्वारा निर्मित होता है, जिसके कारण ये दबाते ही चिपक-सी जाती हैं!

'सितारा-मछली' 'एकिनोडर्मा' नामक उस कंटकचर्मी वर्ग की सदस्य है, जिसमें पूर्वोल्लिखित खीरे-ककड़ी, कद्दू-लौकी आदि की शक्ल के अनोखे बहुरूपिए जलजीव भी सम्मिलित हैं। इस वर्ग के कुछ जीव 'सी-अर्चिन' के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। ये कंटकचर्मी प्रायः समुद्रतल की पंकराशि या चट्टानों की दरारों में छिपे रहते हैं। इनमें से कुछ लाल, हरे, बैंजनी और नीले रंगों की मनोरम रोशनी फेंकते हुए सागरजल में चमचमाते रहते हैं! बिल्लौरी काँच के गोले जैसे बदनवाले ये जीव देखने में बड़े ही सुहावने लगते हैं!

मत्स्य-वर्ग के जलजीव

जलजीवों में सबसे अधिक मशहूर, साथ ही मनुष्य के लिए सबसे ज्यादा उपयोगी मत्स्य-वर्ग के जीव हैं! इन पृष्ठवंशियों का विकास केवल जल में जीवनयापन करने के हेतु ही हुआ है। अपने शरीर की श्वास-प्रश्वास-सम्बन्धी अद्‌भुत व्यवस्था की बदौलत ये जीव लगातार पानी के भीतर रहते हुए जीवन-प्रदायिनी ऑक्सिजन की पूर्ति कर लेते हैं! ये फेफड़ों द्वारा साँस लेनेवाले प्राणियों से सर्वथा भिन्न कोटि के जीव हैं। कारण, ये हवा में से नहीं, बल्कि स्वतः जल में से ही ऑक्सिजन-मिश्रित वायु को खींचकर अपना काम चलाते हैं! इसके लिए इनके बदन में 'गलफड़े' नामक विशिष्ट झिरीनुमा रचनाएँ होती हैं। इनकी दूसरी प्रधान विशेषता है इनके शरीर में डैनों, सुफनों एवं दुम पर की पंखे जैसी या पतवारनुमा कुछ रचनाएँ! इन रचनाओं की बदौलत ये सरलतापूर्वक मनचाही दिशा में अपने लचीले शरीर को घुमाते, मोड़ते या पलटते हुए जल

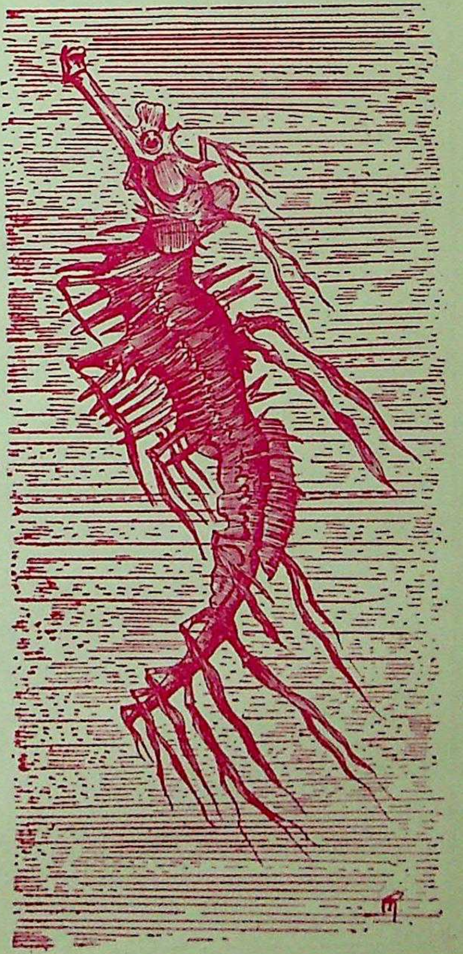

'समुद्री घोड़े' के नाम से प्रख्यात यह विचित्रवेषधारी मछली आकार में पंद्रह-सोलह सेंटीमीटर की होती है। परिचय पृ० ११८ पर पढ़िए।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

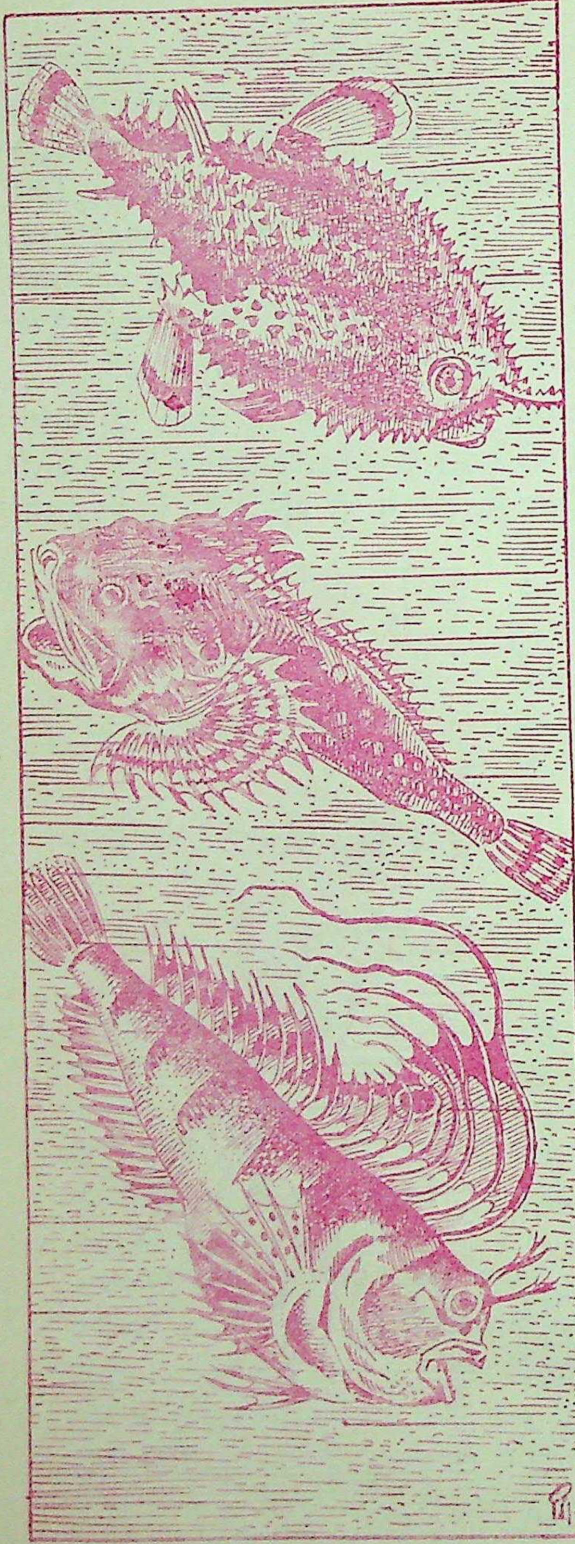

अद्‌भुत वेशधारी मछलियों के कुछ नमूने—अजीब शक्ल की ये मछलियाँ समुद्र की गहराई में ही मिलती हैं।

में बखूबी तैरते रह सकते हैं। इनकी तैरने की अदा या योग्यता की बराबरी अन्य कोई भी प्राणी नहीं कर सकते! फिर नौकाओं या पनडुब्बियों जैसी मनुष्यकृत रचनाओं से इनकी तुलना करना तो महाकलाकार प्रकृति का अपमान करने जैसा होगा!

परीलोक जैसा अद्‌भुत सौन्दर्य

मत्स्य-वर्ग के प्राणियों का सौन्दर्य वर्णनातीत है। उनके चमकीले सिन्नेदार बदन मानो चाँदी-सोने अथवा मोती, सीपी, लहसुनिया जैसे पदार्थों द्वारा निर्मित प्रतीत होते हैं! उन पर निखरे हुए इन्द्रधनुष के वर्णों की शोभा तो अवर्णनीय हुआ करती है! अपने उस रुपहले-सुनहले बदन की चमकीली पृष्ठभूमि में उनकी आँखें मणियों की तरह टँकी हुई जान पड़ती हैं और डैनों आदि के रूप में प्रसारित भाँति-भाँति के वर्णों की पताकाओं-सी झिलमिल रचनाएँ संसार के सुन्दर से सुन्दर पुष्पों की मखमली या रेशमी पंखुड़ियों को भी मात करती प्रतीत होती हैं! अपनी इस रंग-बिरंगी छटा से इन प्राणियों ने सागर के रहस्यमय अंतराल को मानो परीलोक में परिणत कर दिया है! परन्तु इन चित्र-विचित्र वेशधारियों के रंग-बिरंगे पहनावे की चमक-दमक से चौंधियाकर तुम कहीं इस भुलावे में न पड़ जाना कि इस वर्ग के सभी जीव निरापद होंगे। कारण, इनमें से कई अपने रक्षार्थ अथवा आक्रमण के हेतु भाँति-भाँति के भयावने साधनों से लैस हैं!

वर्गीकरण के लिहाज से, वैज्ञानिकों द्वारा जलजीवों का यह बृहत् समुदाय चार प्रमुख समूहों में विभाजित कर दिया गया है—१. 'ईल' जैसी बिना सिन्नों और जबड़े-रहित मुखवाली सर्पिल आकृति की आदिम मछलियाँ; २. 'शार्क' और 'रे' जाति की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अति भयावनी बृहदाकार हिंसक मछलियाँ; ३. वास्तविक मछलियाँ; और ४. फेफड़े-वाली मछलियाँ। इनमें द्वितीय समूह के सभी प्राणी खतरनाक और भयावने हैं। इनके अतिरिक्त मछलियों के तीसरे वर्ग में भी, जिसमें कि कुल मिलाकर कोई पन्द्रह हजार उपजातियों की मछलियाँ सम्मिलित हैं, कइयों को अपने बचाव या आक्रमण के हेतु आवश्यक अस्त्र-शस्त्र प्राप्त हैं। अतः मनुष्य या अन्य जीवधारियों के लिए खतरनाक साबित होनेवाले जीवों की संख्या इस वर्ग में भी कम नहीं है।

शार्क-वर्ग की खूँखवार मछलियाँ

शार्क-वर्ग की सभी मछलियों को मत्स्य-संसार में वही डरावना स्थान प्राप्त है, जो कि थलचर जीवों में सिंह, बाघ, आदि हिंसक शिकारी जानवरों का है। शार्क एक तीक्ष्णदंती लंबी मछली होती है। उसके बदन पर वास्तविक मछलियों जैसे सिन्ने या छिलके नहीं होते। उसका सारा ढाँचा यथार्थतः हड्डियों के बजाय 'कार्टिलेज' नामक उपास्थियों से निर्मित होता है। उसके मुख में चाकुओं जैसे तीक्ष्ण धारवाले सैकड़ों कराल दाँतों की पंक्तियाँ-सी सजी रहती हैं। इन्हीं की बदौलत यह राक्षसी जीव अपने शिकार के प्रायः चिथड़े-चिथड़े उड़ा देता है!

शार्कों की छोटी-बड़ी अनेक जातियाँ मिलती हैं। इनमें विशालकाय 'श्वेतवर्णीय मनुष्यभक्षी शार्क', 'नीली शार्क', 'हथौड़े या घन के-से सिरवाली शार्क', 'कुक्कुर-शार्क', 'गज-शार्क' आदि अधिक प्रसिद्ध हैं। 'मानव-भक्षी सफेद शार्क' तेरह मीटर तक लम्बी पाई जाती है। इसकी एक जाति, जो कि अब नहीं मिलती, शायद तीस-बत्तीस मीटर तक लंबी होती थी और उसके तीखे दाँत

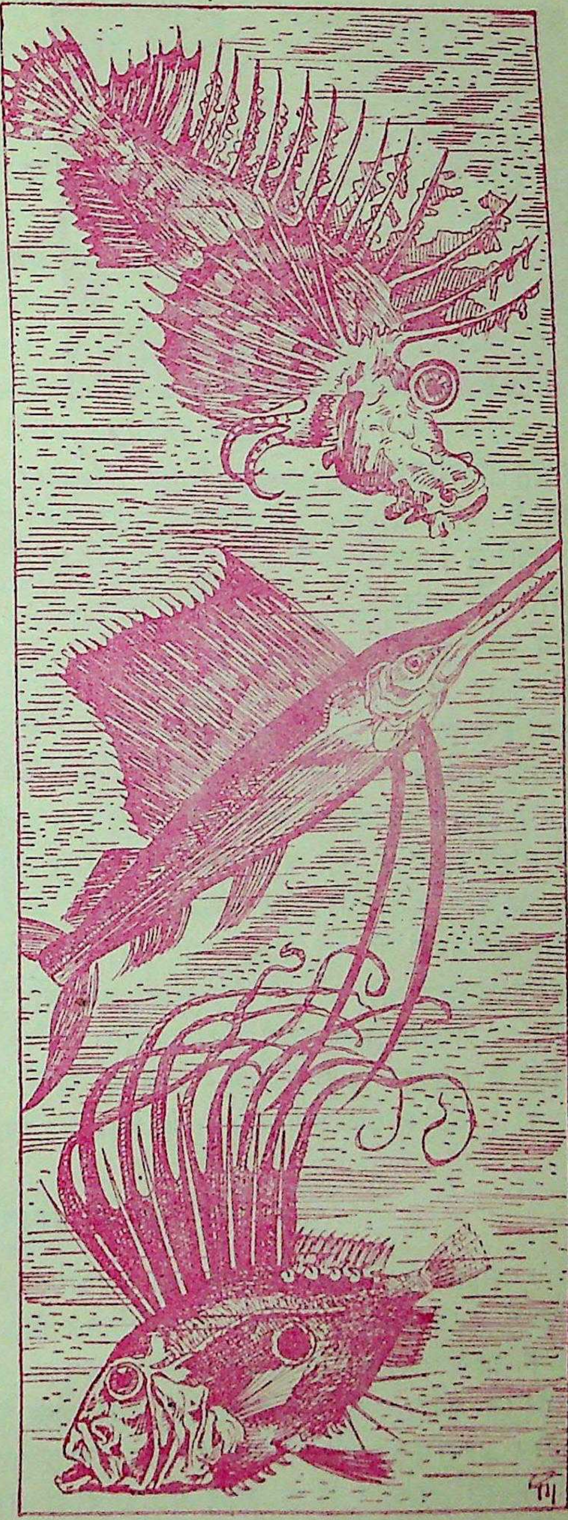

अद्भुत वेशधारी मछलियों के अन्य कुछ नमूने - इनमें बीच की 'तलवार-मछली' है, जो बड़ी खतरनाक होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(बाईं ओर) उड़नेवाली मछली की पानी से बाहर आकर उड़ते समय की निकट की झाँकी; (नीचे) इन्हें इस तरह बाहर निकलते देखकर प्रायः कई समुद्री पक्षी एवं मत्स्य इनका शिकार करने लगते हैं।

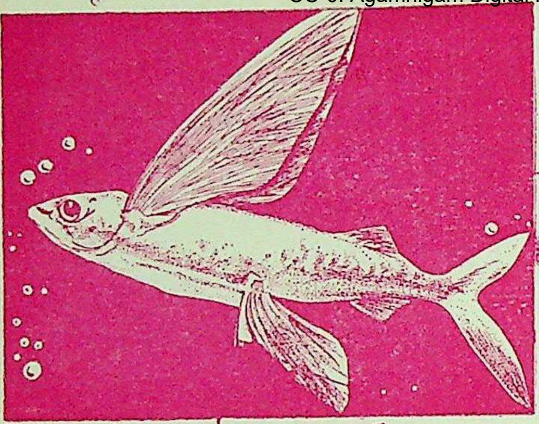

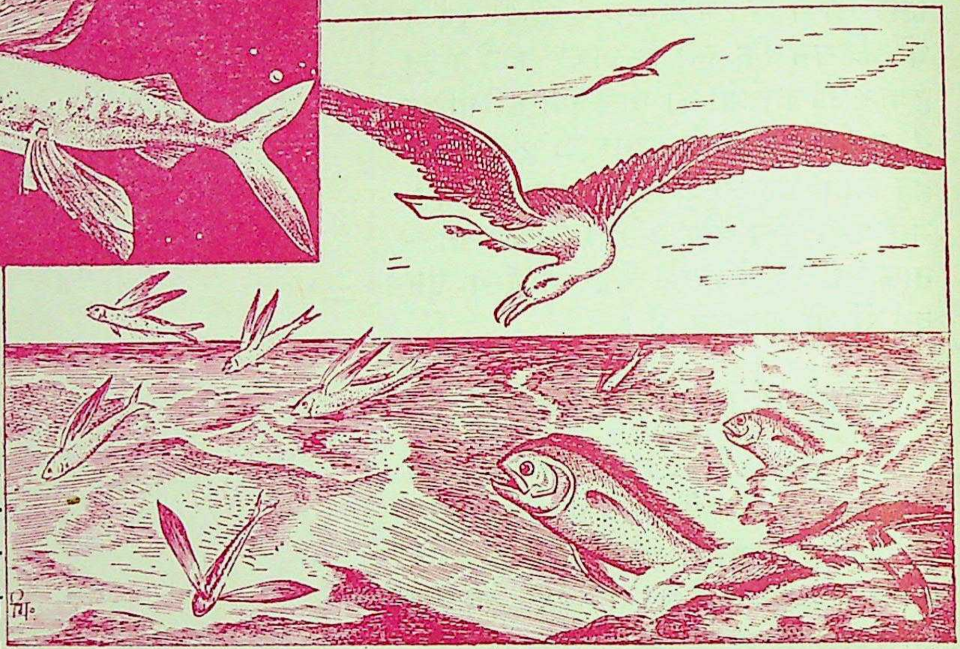

पन्द्रह सेंटीमीटर तक के आकार के होते थे ! इस जाति की दानवीय शार्क आज अधिकतर उष्ण क्षेत्रों के समुद्रों में ही पाई जाती हैं। वे मनुष्यों पर भी घातक आक्रमण करते हुए कभी बाज नहीं आतीं। 'गज-शार्क' आकार में तो सफेद शार्क से भी बड़ी होती है, परन्तु वह बेहद काहिल होती है। हाँ, 'नीली शार्क' एक अत्यन्त भयावनी और खूँख्वार हिंसक मछली है, जो कि 'तिमि' या 'व्हेल' जसे भीमकाय जलजीवों की भी बोटी-बोटी उड़ा दिया करती है ! ऐसी ही महाभयावनी होती है 'कुक्कुर-शार्क' भी, जो आकार में तो एक मीटर से भी कम लंबी होती है, परन्तु सागर की सामान्य मछलियों के लिए वह साक्षात् कालरूप ही है ! वह उनका बेतरह संहार करती रहती है। उधर 'हथौड़े के-से सिरवाली शार्क' भी अपनी हिंसावृत्ति में किसी से पीछे नहीं रहती ! उसके घन की आकृति के सिर का क्या आशय है, समझ में नहीं आता !

'रे' वर्ग की दानवीय मछलियाँ

शार्कों की तरह 'रे' समूह की बृहदाकार मछलियाँ भी खतरनाक जलजंतुओं के समुदाय में सबसे आगे की पंक्ति में प्रतिष्ठित हैं। इन दैत्यों की एक खास विशेषता यह है कि इनके बदन मछलियों जैसे लंबे होने के बजाय कच्छपों जैसे चौड़े और चपटे बन गये हैं ! ये वस्तुतः चमगादड़ों के-से इनके डैनों के विस्तार के परिणाम मात्र हैं। इनमें से कुछ जातियों के शरीर अत्यधिक भारी-भरकम हैं ! उदाहरणार्थ, 'डेविल फिश' के नाम से पुकारी जानेवाली 'रे मछली' आकार में छः-सात मीटर चौड़ी और वजन में लगभग बीस क्विंटल तक की पाई गई है ! अपने भारी बदन से इन जीवों को अनेक लाभ हैं। ये महज अपने बदन के फैलाव और वजन की बदौलत ही शिकार को दबोचकर उसका कचूमर निकाल देते हैं !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'रे मत्स्य' की दुम उरगमों की-सी पतली और लंबी होती है। इसे ये दैत्य चाबुक की तरह फटकारकर शत्रु पर वार करते हैं। कुछ जातियों में इस दुम पर बड़ा ही तीखा लंबा शूल बना रहता है, जो मौका पड़ने पर बेहूदा घाव पैदा कर सकता है। एक जाति की 'रे' छूने पर जोरों का बिजली का धक्का भी मारती है! इसे 'टार्पेडो' या 'विद्युत्-रे' के नाम से पुकारा जाता है। दूसरी एक मशहूर 'रे' लगभग साढ़े चार मीटर लंबे अपने बदन में थूथन के आगे निकला हुआ, हूबहू लकड़ी चीरने के आरे की दोहरी दाँतदार शक्ल का, लगभग डेढ़ मीटर लम्बा एक अति भयंकर आक्रामक शस्त्र धारण किये रहती है। इसी से यह 'आरा-मछली' (सॉ-फिश) के नाम से पुकारी जाती है। अपने इस भयावने शस्त्र द्वारा यह मछली जब निर्दयतापूर्वक किसी पर वार करती है, तो खून-खच्चर मच जाता है! अन्य एक भयावनी मछली (जो कि वास्तविक मछलियों की जाति की होती है) 'तलवार-मछली' के नाम से प्रख्यात है। वह अपनी थूथन पर तीखे खंजर जैसा एक लंबा आक्रमणकारी शस्त्र उगाये रहती है! इसका यह हथियार इतना मजबूत होता है कि वह उसे जहाजों की दीवार की लकड़ी में आधे मीटर की गहराई तक घुसेड़ देती है!

रोशनी फेंकनेवाली और उड़नेवाली मछलियाँ

मत्स्य-वर्ग के इन दानवों से विदा होकर जब हम 'वास्तविक मछलियों' के विशाल वर्ग में प्रवेश करते हैं, तो उसमें हमें कोई पन्द्रह हजार उपजातियाँ मिलती हैं! इस वर्ग की कई मछलियाँ आदिकाल ही से मनुष्य की आहार-सामग्री रही हैं। परन्तु इनमें कुछ ऐसी विचित्र-वेशधारी एवं भयावने शस्त्रों से सुसज्जित मछलियाँ भी हैं, जिन्हें देखकर हमारे मन में भय उत्पन्न होने लगता है! इन अनोखी मछलियों में सबसे आश्चर्यजनक लगभग एक किलोमीटर या उससे भी अधिक गहराई पर पाए जानेवाले तरह-तरह की आकृतियों के वे जलजीव हैं, जो अपने शरीर से लाल, हरी और सफेद रंग की रोशनी फेंककर जलमण्डल की अन्धकारपूर्ण पाताली दुनिया को विद्युत्-लैंपों की तरह जगमगाया करते हैं! ये प्राणी अपनी इन बत्तियों को कभी-कभी मछली पकड़ने के काँटे जैसे कँटियानुमा अङ्गों में लटकाये रहते हैं, जिसका अभिप्राय यह है कि छोटे-छोटे जीव रोशनी से ललचाकर आसानी से उनके शिकार बन जाएँ! इसी से इस जाति की एक प्रख्यात मछली 'एंग्लर' (मछुआ) कहलाती है! तीखे दाँतों की कराल पंक्तियों से युक्त इस दानवमुखी मछली को

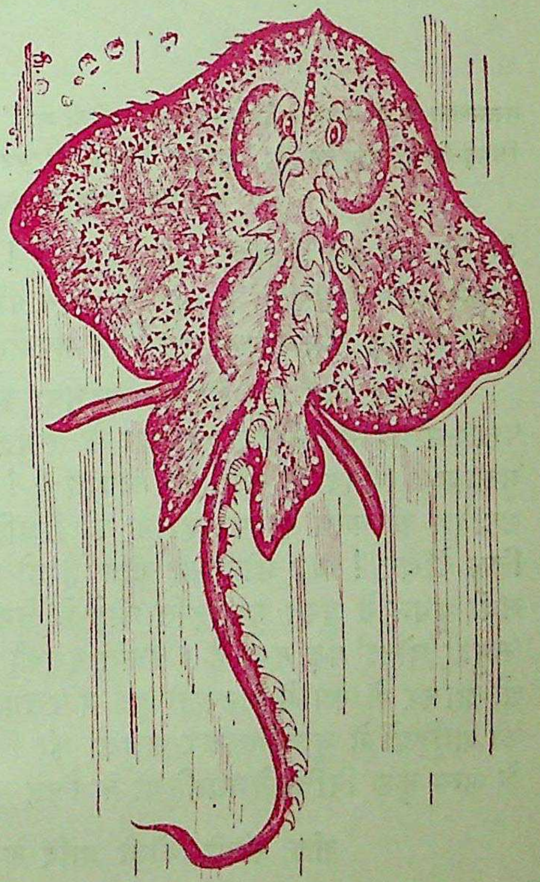

'डेविल फिश' नामक महाकाय 'रे मछली', जो लगभग बीस क्विंटल तक वजनी होती है!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

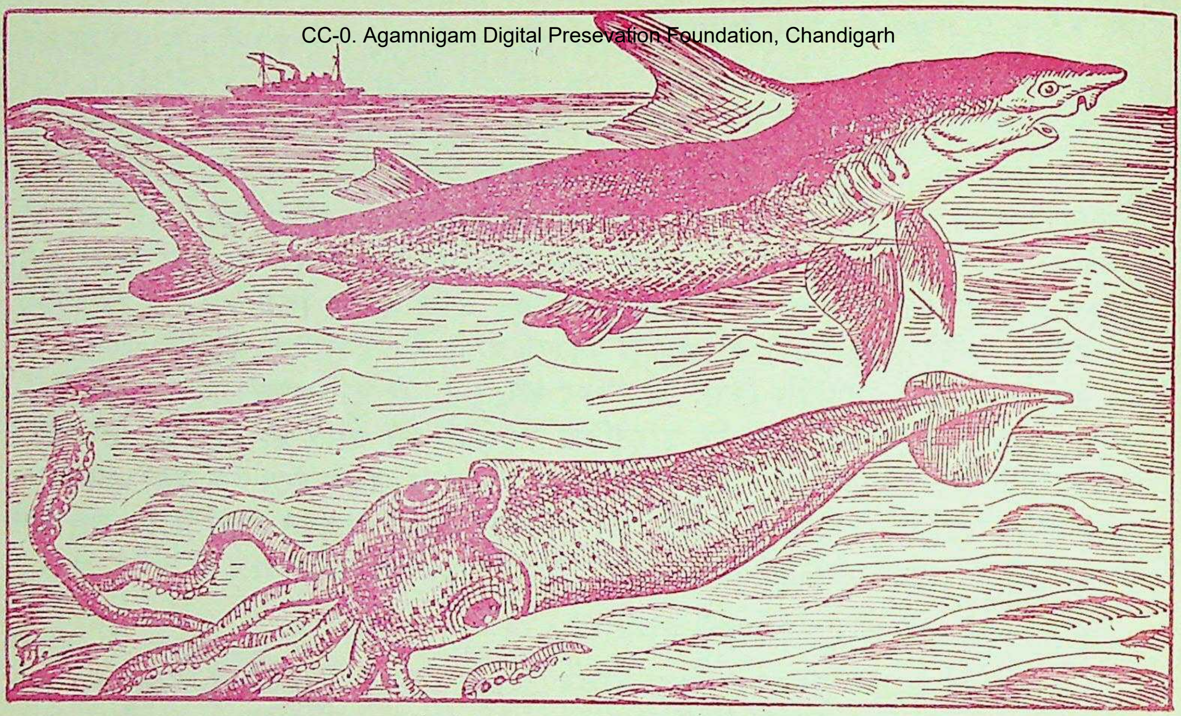

जलमण्डल के दो भयावने दैत्य--(ऊपर) 'नीली शार्क' नामक खूँख्वार मछली, जो व्हेल जैसे भीमकाय जलजीव के भी चिथड़े-चिथड़े उड़ा देती है; (नीचे) 'स्क्विड' या 'कटलफिश' नामक अद्‌भुत घोंघावंशी प्राणी, जो शत्रु से बचाव के लिए एक प्रकार की स्याही जैसा पदार्थ छोड़ा करता है !

देखकर भय की कँपकँपी जग उठती है ! अन्य अनोखी मछलियों में सबसे उल्लेखनीय 'उड़नेवाली मछलियाँ' हैं, जो कि अपने परों से पक्षियों के पंख का-सा काम लेकर सागर की सतह से कुछ ऊँचाई तक उछलकर सफलतापूर्वक हवा में उड़ते पाई जाती हैं !

परन्तु जहाँ तक अद्‌भुत वेशभूषा का सवाल है, मत्स्य-वर्ग के समस्त जलजंतुओं में पन्द्रह-सोलह सेंटीमीटर आकार के 'समुद्री घोड़ा' नामक लघुकाय जलजीव के स्वाँग का मुकाबला शायद ही कोई कर सकता है ! इस प्राणी की वेशभूषा के निर्माण में प्रकृति ने छद्मवेश की कला को पराकाष्ठा की स्थिति तक पहुँचा दिया है ! पृष्ठ ११३ पर इसका चित्र देखिए ! यह छोटा-सा जीव है तो वस्तुतः एक मछली ही, परन्तु उसकी गर्दन एवं लंबी थूथन से युक्त मुखाकृति घोड़े के चेहरे से मिलती हुई-सी है । इसी से उसका नाम 'समुद्री घोड़ा' पड़ गया है । परन्तु इसकी सबसे बड़ी खूबी तो इसके शरीर पर फटी-फटी-सी झालर के रूप में लटकती हुई वे रचनाएँ हैं, जिनकी बदौलत यह प्राणी समुद्री शैवालों की झाड़ियों में घुल-मिलकर शत्रुओं की निगाह से एकदम छिपा रहता है ! मत्स्य-संसार के अन्य कुछ विचित्रवेशधारियों के चित्र पृष्ठ ११४-११५ पर तुम देख सकते हो !

शंख, सीपी, कौड़ी आदि के आवरण में रहनेवाले घोंघावंशी

स्पंज, मूँगा, लस-मछली, एनीमोन एवं मत्स्य-वर्ग के हजारों प्रकार के चित्र-विचित्र प्राणियों के अलावा जलजीवों का एक बृहत् समुदाय घोंघावंशियों के नाम से पुकारा जाता है । इस समुदाय के सर्वप्रसिद्ध प्रतिनिधियों के रूप में शंख, सीपी आदि के आवरणों की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रचना करके उनमें रहनेवाले कस्तूरों को हम गिना सकते हैं। इसी वर्ग में वे अनूठे जीव भी सम्मिलित हैं, जिनसे कि 'मोती' जैसे कीमती रत्नों का उपहार संसार को मिला है। इस विशाल प्राणि-वर्ग में कुल मिलाकर कोई अस्सी हजार जातियाँ-उपजातियाँ हैं, जिनमें से कई स्थलनिवासिनी भी हैं। ये सब पाँच महासमूहों में वर्गीकृत हैं। इस समुदाय के प्राणी एक द्रव्य द्वारा अपने आसपास भाँति-भाँति के आकार-प्रकार के बड़े ही सुन्दर और सुहावने कड़े आवरण-से रच लेते हैं। ऐसे खोलरूपी आवरणों की दीवार भीतर की ओर बेहद चिकनी हुआ करती है। समुद्रों के किनारे पर की बालू में तथा जलमण्डल के तले की फर्श पर इन जीवों के ऐसे शंख-सीपीरूपी आवरणों के ढेर पाये जाते हैं। ये सीपी और शंख इन जीवों की इहलीला समाप्त हो जाने पर बचे रह जाते हैं। 'क्लेम' नामक घोंघावंशी जीव की सीपियाँ तो तीन-साढ़े तीन मीटर तक के आकार की होती हैं!

मोती उपजानेवाले कस्तूरे

अपने नर्म मांस के कारण घोंघे और कस्तूरे आदिकाल ही से बड़े चाव से खाये जाते रहे हैं! तुम्हें यह जानकर हैरानी होगी कि अमेरिका और योरप में इनकी 'खेती' तक की जाती है, अर्थात् तटवर्ती सागर के लंबे-चौड़े छिछले क्षेत्रों को घेरकर ये जीव उनमें विधिवत् पाले जाते एवं उनकी 'फसल' बेचकर करोड़ों रुपया खींचा जाता है!

महत्व के लिहाज से, इन घोंघावंशियों में मोती उपजानेवाले कस्तूरों का स्थान सर्वोपरि है। ये प्राणी सीपियों की खोल के भीतर अपने मृदुल शरीर को सुरक्षित किये हुए सागरतल की पंकराशि में जीवन-यापन करते हैं! संयोगवश यदि कोई बालू का कण या ऐसा ही कोई अरुचिकर विजातीय द्रव्य उस सीपी में प्रवेश कर जाता है, तो ये अपने शरीर से चूने का-सा एक पदार्थ निकालकर उसे उस कण के आसपास लपेट देते हैं, ताकि वह उन्हें तकलीफ न दे! बस, वही मोती बन जाता है, जिसे पनडुब्बे समुद्र में गोता मारकर एवं सीपियाँ बटोरकर प्राप्त करते हैं! जापान में तो मोती उपजाने-

'अष्टपाद' या 'ऑक्टोपस' नामक भयंकर जलजीव का बीभत्स रूप।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वाले कस्तूरों को भी विधिवत् सागर के निर्धारित क्षेत्रों में पालकर, उनसे कृत्रिम रूप में मनचाहे आकार एवं वर्ण के मोती पैदा किये जाने का चमत्कार देखने को मिल रहा है !

'ऑक्टोपस' और 'स्क्विड' नामक भयावने जलजंतु

घोंघावंशियों ही के बृहत् समुदाय के अन्तर्गत 'ऑक्टोपस' (या अष्टपाद) एवं 'स्क्विड' (अथवा 'कटलफिश') नामक विचित्र आकृतिवाले डरावने जलजीव भी सम्मिलित हैं। ये वीभत्स और खतरनाक प्राणी अपने शरीर से अजगर जैसी अनेक भुजाएँ बाहर की ओर प्रसारित किये रहते हैं ! इनकी इन भुजाओं पर छोटे बटन से लेकर बड़ी तश्तरियों तक के आकार के अनगिनत गोल-गोल 'चूषकों' की दोहरी पंक्तियाँ-सी बनी रहती हैं। इन चूषकों की संख्या कभी-कभी दो-ढाई हजार तक पाई गई हैं ! इन रचनाओं का उद्देश्य यह है कि जब ये दैत्य नागपाश की-सी अपनी कालरूपी भुजाओं को किसी के बदन के आसपास लपेटकर उसे जकड़ें, तो वह अभागा फिर किसी भी दशा में उनके चंगुल से छूटने न पाये ! इन वीभत्स जीवों की आँखें शैतान की आँखों की तरह घूरती हुई-सी सदैव सतर्क और चौकन्नी बनी रहती हैं ! उनसे सदैव शत्रु के प्रति एकमात्र घृणा और क्रूरता का ही भाव टपकता जान पड़ता है। इन खतरनाक जंतुओं की 'ऑक्टोपस' नामक जाति में तो भुजाओं की संख्या केवल आठ होती है, परन्तु 'स्क्विड' या 'कटलफिश' में वे दस तक पाई जाती हैं। 'स्क्विड' की दो अतिरिक्त भुजाएँ अन्य भुजाओं से अधिक लम्बी होती हैं और उनमें 'चूषक' केवल सिरे पर ही होते हैं।

आकार में इस वर्ग के दोनों ही प्राणी कभी-कभी असाधारण लम्बाई के पाये गये हैं। कहते हैं, प्रशान्त महासागर में पाये जानेवाले एक 'अष्टपाद' के घेरे का व्यास नौ मीटर एवं उसकी भुजाओं का फैलाव तेरह मीटर तक का होता है ! इसी तरह न्यू फाउंडलैण्ड के समीप पाए जानेवाले एक दैत्याकार 'स्क्विड' की लम्बाई सत्रह मीटर एवं वजन लगभग चार क्विंटल तक का पाया गया है ! इन जीवधारियों के काफी छोटे नमूने भी मिलते हैं। ये प्राणी समुद्रों के तले पर की चट्टानों के खंदकों में छिपे रहते हैं और प्रायः उसकी फर्श पर अपनी भुजाओं के बल शरीर साधकर चलते हैं। तैरते समय अपनी सर्पिल भुजाओं को सिर के पीछे की ओर लम्बी फैलाकर ये उल्टी तरफ को भागते हैं ! मौका पड़ने पर मनुष्य पर भी आक्रमण करने से ये नहीं चूकते ! 'स्क्विड' या 'कटलफिश' में एक विशेषता यह है कि जब उसका सामना किसी बड़े दुश्मन से पड़ता है, तो अपने बचाव के लिए वह अपने शरीर में स्थित एक थैली में से गाढ़ी-गाढ़ी स्याही जैसा एक विशेष प्रकार का पदार्थ पानी में छोड़ते हुए तेजी से उल्टे भागता है। उक्त स्याही शीघ्र ही पानी में घुलकर समुद्र का रंग काला कर देती है, जिससे कि दुश्मन की आड़ में धुएँ की एक रक्षा-प्राचीर-सी बन जाती है। बस, उसी की ओट में अपने को बचाते हुए यह जीव तेजी से भाग खड़ा होता है ! इस अर्थ में यह प्राणी मानो आधुनिक युद्धकला का अग्रदूत-सा है ! कारण, आज के युग में प्रायः शत्रु से अपनी गतिविधि को छिपाने के लिए सेनाएँ एक प्रकार का धुआँ फैलाकर उसकी आड़ में छिप जाया करती हैं। कटलफिश द्वारा प्रयोग में लाई जानेवाली स्याही फेंकने की यह तरकीब वस्तुतः जीवधारियों के आत्मरक्षार्थ महाकलाकार प्रकृति द्वारा प्रयुक्त उपायों का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh